ગુજરાત આદિવાસી વિકાસ પરિષદ્, દાહોદ સંચાલિત

આદિવાસી આર્ટ્સ એન્ડ કૉમર્સ કૉલેજ

હસ્તાક્ષર

વર્ષ : ૨૦૨૧-૨૨

• સંપાદન •

ડૉ. મનુકુમાર સુથાર

ડૉ. કામિની દશોરા ડૉ. હિતેશ વાઢિયા

ડૉ. અમૃત ઠાકોર

સંતરામપુર-389260 જી. મહિસાગર

ફોનઃ 02675 - 220007

E-mail ID : aaccsantrampur@gmail.com

website : https://aaccsantrampur.in

હસ્તાક્ષર (વાર્ષિક)

પ્રકાશન વર્ષ : 2021-22

© પ્રકાશકાધીન

ISBN : 978-93-93672-06-3

(હસ્તાક્ષરમાં પ્રકાશિત લેખોમાં વ્યક્ત વિચારો જે તે લેખકના પોતાના છે.
એની સાથે સંપાદક અને પ્રકાશકની સહમતિ અનિવાર્ય નથી.
વિવાદની સ્થિતિમાં એની સંપૂર્ણ જવાબદારી લેખકની છે.)

પ્રકાશક :
આચાર્યશ્રી
આદિવાસી આર્ટ્સ એન્ડ કૉમર્સ કૉલેજ, સંતરામપુર
મહીસાગર (ગુજરાત) – 389 260
ફોન : 02675 - 220 007
Email : aaccsantrampur@gmail.com
web : www.aaccsantrampur.in

મુદ્રક :
શ્રી રામાનંદ ઑફસેટ
અમદાવાદ.
મો. : 910693 6809

પ્રમુખશ્રીનું નિવેદન

આદિવાસી આટ્ર્સ ઍણ્ડ કૉમર્સ કૉલેજ, સંતરામપુરનો શુભારંભ થયો ત્યારે જે લક્ષ્યો સાધ્યાં હતાં એને આ કૉલેજ પરિવાર સાર્થક કરી રહ્યો છે. સમગ્ર ગુજરાતમાં સ્થાપના કાળથી જ આ કૉલેજ શૈક્ષણિક-સાંસ્કૃતિક કાર્યક્રમો અને ખેલકૂદ વગેરેમાં અગ્રસર રહી છે. સંસ્થાના પ્રમુખ તરીકે હું એનો સાક્ષી રહ્યો છું.

કૉલેજનું મુખપત્ર હસ્તાક્ષર કોરોનાની ભયાવહ વાસ્તવિકતા છતાં આ કામને સુખરૂપ પાર પાડી, પ્રકાશિત થઈ રહ્યું છે, એની ખુશી વ્યક્ત કરું છું. અને એની સાથે જોડાયેલા તમામ અધ્યાપકો-આચાર્યશ્રી અને સંપાદક સમિતિને શુભેચ્છા અને અભિનંદન પાઠવું છું. કૉલેજ ઉત્તરોત્તર પ્રગતિ કરતી રહે એવી શુભકામના પાઠવું છું.

વનરાજસિંહ ડામોર
પ્રમુખશ્રી, આદિવાસી વિકાસ પરિષદ્

આચાર્યશ્રીનું નિવેદન

આદિવાસી આટ્ર્સ એણ્ડ કૉમર્સ કૉલેજ, સંતરામપુર હમેશાંથી પ્રવૃત્તિશીલ અને સર્જનાત્મક રહી છે. કૉલેજના અધ્યાપકો પોતાના વિષયમાં સદાય અપડેટ રહેતા હોવાથી અભ્યાસશીલ અને સર્જનાત્મક રહે છે એની પ્રતીતિ ***હસ્તાક્ષર***નો આ અંક કરાવી રહ્યો છે.

પ્રસ્તુત પ્રસંગે આ કાર્યમાં સહકાર આપનાર સહુ અધ્યાપકો અને વિશેષ કરીને સંપાદકોનો જેમણે કોરાની પેનડેમિકની સ્થિતિમાં પણ સક્રિય રહી એને સાકાર કર્યો છે. પ્રત્યેક એકેડેમિક વર્ષમાં આ પ્રકારના ***હસ્તાક્ષર***ના અંક પ્રકાશિત થતા રહે એ માટેની પ્રતિબદ્ધતા વ્યક્ત કરું છું.

ડૉ. અભયકુમાર પરમાર
આચાર્યશ્રી

અનુક્રમણિકા

1.	गुलों की तपीश से गुलझार गीतों का देश	डॉ० अभय परमार	6
2.	प्रा०भा० के मूल निवासी द्रविड़ नहीं, आदिवासी थे	डॉ० ईश्वर राठवा	12
3.	વિચાર પ્રધાન કવિતા : વિવેચક બ.ક. ઠાકોર	ડૉ. શકર પ્રજાપતિ	18
4.	પન્નાલાલ પટેલની વળમણાંમાં ગ્રામચેતના	પ્રા. નીતિન પંડ્યા	23
5.	મહાભારતનું સ્વરૂપ અને કથાવસ્તુ	ડૉ. મનુકુમાર સુથાર	27
6.	‘મૃચ્છકટિક’નું વસ્તુગુંફન	પ્રા. ભરત કિશોરી	43
7.	मुमताज के हस्ताक्षर	डॉ० मालिनी गौतम	47
8.	Impact of Covid-19	Prof. Dipty Christian	53
9.	આત્મહત્યા : સમાજ-મનોવૈજ્ઞાનિક સમસ્યા	પ્રા. પારૂલ દાણી	54
10.	Position & Problems of Tribal Street Vendors	Dr. Kamini Dashora	62
11.	ભીલોની ઉત્પત્તિ, ભીલ રાજાઓ અને રાજ્યો	ડૉ. અમૃત ઠાકોર	76
12.	માનગઢ પૂર્વેનો પંચમહાલના ભીલોનો ઈતિ હાસ	પ્રા. શકુન્તલા બલાત	78
13.	હિંદુ કોડ બિલ : એક સંઘર્ષ	પ્રા. ભારતી ધનુલા	82
14.	સ્માર્ટફોનની બાળકોના વિકાસ પર થતી અસર	ડૉ. હિતેશ વાઢિયા	84
15.	प्रेमचंद की कहानियों में दलित-विमर्श की प्रासंगिता	कोकिला खांट	87
16.	ટાઈમ મેનેજમેન્ટ	સંકલન : ડૉ. મહંમદ ઈશાક પટેલ	90
17.	गुजरात आदिवासी विकास परिषद संचालित शिक्षा संस्थाओं का संक्षिप्त रीपोर्ट	डो. अभय परमार	91

★★★

સંપાદકીય

કોઈ પણ સંસ્થાનની પ્રગતિનો આધાર એના સક્રિય અને પ્રવૃત્તિશીલ અભ્યાસુ અધ્યાપકો અને કર્મચારીઓ પર રહેલો છે. સહુમાં રહેલી સર્ગશક્તિ અને અભિવ્યક્તિને પાંખો આપવી એ કોઈ પણ સંસ્થાનું કર્તવ્ય હોય છે. કોરોનાની વિકરાળ પરિસ્થિતિ દરમ્યાન પણ *હસ્તાક્ષર* માટે અભ્યાસલેખો, સંશોધનપત્રો, કવિતા વગેરેના માધ્યમથી સહકાર આપનાર અધ્યાપક મિત્રોને અભિનંદન આપીએ છીએ. હસ્તાક્ષર કૉલેજનું મુખપત્ર જ નહીં, અધ્યાપકીય સજ્જતા અને સાંસ્કૃતિક પ્રવૃત્તિઓ માટેની સંસ્થાની સજ્જતાનું પણ પરિચાયક રહ્યું છે.

પેનડેમિકની પરિસ્થિતિ છતાં હસ્તાક્ષરનું પ્રકાશન કરવા દૃઢનિશ્ચય રહેવા માટે આચાર્યશ્રીનો પણ આભાર માનીએ છીએ. પ્રત્યક્ષ કે પરોક્ષ આ અંકનું સંપાદન કરવામાં સહાયક તમામ કર્મચારીઓનો પણ આભાર. કોરોનાને કારણે કોઈ જ્યારે ટાઈપિંગ વગેરેનું કામ હાથમાં લેવા જ તૈયાર ન હતું તેવી સ્થિતિમાં શાન્તચિત્તે કામ કરી આપનાર શ્રી એસ.ટી. શાસ્ત્રીજીનો ખૂબ-ખૂબ આભાર.

ડૉ. મનુકુમાર સુથાર
ડૉ. કામિની દશોરા ડૉ. હિતેશ વાઢિયા
ડૉ. અમૃત ઠાકોર

गुलों की तपीश से गुलजार गीतों का देश

****

– डॉ. अभय परमार

अरावली की पहाड़ियों से घिरा हुआ ईडर (ईल्वदूर्ग) और उसकी तलहटी में कुछ दूर पर गौआव नदी के किनारे बसा है मेरा वांसडोल नामक छोटा–सा गाँव । करीब चार सौ घरौं की बस्तीवाले इस गाँव में ज्यादातर लोग खेत मजदूरी पर ही निर्भर करते हैं। खेत–खलिहान का मतलब है मिट्टी से दोस्ती । जन्म से लेकर मृत्यु तक मिट्टी के बीच रहना और अंत में इसमें समा जाना।

एक किसान का बेटा होने के नाते बचपन से ही मिट्टी से मेरी यारी रही है। मिट्टी की महक पहचान ने में मुझे देर नहीं लगती। मिट्टी से हठती हुई आग, मिट्टी की खामोशी, मिट्टी की आवाज, मिट्टी से उठता संगीत, मिट्टी से पनपते गीत सब कुछ मुझमें है और उन सभी में कहीं न कहीं मैं हूँ। मिट्टी के घर, मिट्टी की खपरैल, मिट्टी के बर्तन, बस्ती के चारों तरफ पोस्टकार्ड साईज के छोटे–छोटे समतल खेत। बडी सुबह को मुर्गे की बाँग के साथ जाग कर खेत जोतने के लिए निकलने वाले किसान, किसानों के साथ उनके बैल, बैलों के गले की घंटियों की सुमधुर गूँज, चिड़ियों की चहचहाट, दही मथने की मथानी की आह्लादक आवाज, चक्की चलाकर अनाज पीसते हुए गाना गुनगुनाती बूढ़ी माँ, घर–आंगन की सफाई कर रही नई नवेली दुल्हन की चुड़ियों और पायल की मनभावना खनक, दातून करने के तुरंत बाद नये दिन का स्वागत करते हुए बुजुर्गों की पावन बानी, पनघट, पर पानी भरने जा रही पनिहारिन की बलखाती चाल, रामदेव पीर के मंदिर में होने वाली आरती के नगाड़े, घंटियाँ और शंखनाद, सरपंच के घर के आगे लंबे खंभे पर लगे ट्रान्जिस्टर के स्पीकर से आने वाले भजनों की सुरीली धुन, बस्ती के वातावरण को मनोरम बना देती थी।

यह माहौल बारह महीनों रहता। फिर भी मौसम के अनुसार कुछ तबदीलियाँ जरूर आती। बारिश के दिनों में मेरे घर को छूकर निकलनेवाली बाड़ फूल–पत्तियों से लद जाती, पीले और आसमानी रंग के फूल माहौल को मधुमय बना देते। चिड़ियों को खेत का दाना चुगने से रोकने के लिए गोफन में पत्थर भर पंछियों को उड़ाते और तरह–तरह की आवाजें निकालते हुए, खेत के बीचों–बीच मचान बनाकर, उस पर बैठकर छंद और दोहे ललकारते (गाते) कुछ अलगारी किसान, पश्चिम की तरफ ढलते हुए सूर्य देवता और उनका अभिषेक करने हेतु इन्द्र देवता के दूत समान बादलों का जमघट, बादलों से छनकर निकलने वाले सूरज की रंगीन किरनें और इनके आसमान में बनता इन्द्र धनुष, घोंसलों में वापस लौटते परिन्दों की कर्णप्रिय आवाज, दिन भर मेहनत करके लौट रहे खेत मजदूर और उनके मवेशी, गायों के साथ घर की ओर लौट रहे ग्वाले की बेसुरी बाँसुरी आदि घर–गाँव और खेत को एक तंतु से बाँध देते थे।

सावन का महीना बड़ा पावन होता था, क्योंकि बस्ती में लगभग सभी के घर कम से कम एक बार सत्यनारायण की पूजा हुआ करती थी। पूजा रात को ही होती थी अगर कोई दिन को पूजा करवाता तो अजीब सा लगता था। कथा सुनने कोई नहीं आता, क्योंकि सब खेतों में होते। रात को देर तक भजन और लोकगीतों का जमावड़ा होता। तबले, ढोलक, काँस जोड़ और हार्मोनियम के संगम से गीत और भी सुहावने हो उठते। कुछ लोग गाने–बजाने में दक्ष हुआ करते थे। कथा के अध्याय पूर्ण होते ही ये लोग आ जाते थे। अगर नहीं आते तो उनको बुलवाया जाता। कुछ ऐसे भी होते थे जो थोड़ी बहुत प्रतीक्षा करवाते और बाद में आते। बाहर गाँव से अगर कोई मेहमान आया हो और गाना–बजाना जानता हो तो उसको अहमियत दी जाती। इस प्रकार हमारे भी कुछ लोग बाहर गाँव जाते और गीतों–भजनों का आदान–प्रदान होता।

सबसे अच्छी बात यही थी कि कुछ बूढ़ी औरतें गाने में माहिर होती थीं । वे चाहती थी कि लड़कियाँ और नई-नवेली दुल्हनें भी इसे सीखें और आगे बढ़ाँ। बूढ़ी औरतें गरबा तो घूमती नहीं थी, पर एक जगह बैठकर गाती जरूर थी और दूसरों को घूमकर गरबा गाने के लिए प्रेरित करती थीं । कुछ लड़कियाँ और बहुएँ गीतों और गरबा को कंठस्थ भी कर लेती थी और अपनी तरह से गाती थी । बहुएँ अपने मायके में गाये जानेवाले गीतों को प्राधान्य देती थी । गीत अच्छा हुआ तो स्वीकार भी कर लिया जाता था ।

इसके बाद शुरू होती थी नवरात्रि । नवरात्रि हम बच्चों के लिए आनंदोत्सव का अनोखा अवसर हुआ करती थी । गाँव में बिजली नहीं होती थी । बगल के खेत की बाड़ी से बीजली का तार खींच कर रोशनी की जाती थी नवरात्रि में । अंबा माँ की मूर्ति बिठाकर इसकी पूजा अर्चना की जाती । रात देर तक लोग जागते रहते । नवरात्रि में गाने-बजानेवाले हमारी बस्ती के ही होते थे। फिर भी कुछ ही लोग माइक में गाने की हिंमत कर सकते थे । डाह्याभाई नवरात्रि का संचालन करता था। वह और जिम्मेदारी वहन तो नहीं करता था, पर रात एक बार 'गुर्जर' जरूर गवाता था । गूर्जर में प्रयुक्त शब्द बहुत ही प्रभावक होते थे । डाह्याभाई की आवाज़ बड़ा ही खूबसूरत दृश्य खड़ा कर देती थी जिसमें एक गुर्जरनारी दिल्ली के बादशाह को देखने की जिद पर अड़ी है जबकि उस बादशाह की बुरी नज़र से उसका क्या हस्र हो सकता है आदि बातों का चित्रण हुआ करता था–''प्रथम तो समरुं सरस्वती, गुणपत को लागु पाय । काबुल देश से बादशाह उतर्या दिल्ली का दीवान । बादशाह उतर्या बाग में, मैं ख्यामक देखण जाऊ । / हाथ में लऊँ लाल लाकड़ी गोवालण बनके जाउ । / हाथ में लऊ फूल छावरी मालण बनके जाऊ । /हाथ में लऊ फूल छावरी मालण बनके जाउ। फूल सागर का घाघरा साउले कोसंबी कोर । बालों में मोती पिरोये ऊगा सूरज भाण ।''

लड़के, लड़कियाँ, बहुएँ और बूढ़े बुजुर्ग भी गरबा गाते । ये लोग हमारे बीच के ही थे, लेकिन हमें अलग ही दिखते थे । बिजली की रंगीन रोशनी में सबकुछ बदल जाता था । लड़के-लड़कियों को दाँड़िया-रास भी खेलाया जाता । ऐसे में बस्ती के ही कई लड़के-लडकियों के बीच तारामैत्रक निर्मित हो जाते । जो भी हो किन्तु नवरात्रि लोकजीवन से पैदा होनेवाले लोक संगीत से रूबरू होने का एक महा-उत्सव है । कुछ युवक और युवतियाँ नवरात्रि के कुछ महीनों पहले से ही गरबा की तैयारी में जुट जाते । घरों में इसका पूर्वाभ्यास भी होता । लोकनृत्य और लोकसंगीत का अनोखा संगम होता था नवरात्रि में ।

दीपावली का इतना महत्त्व नहीं होता था, क्योंकि यह अमीरों का त्यौहार होता था । नये कपड़े, पटाखे हमारे बस की बात नहीं होती थी ।

बसंत के आगमन से ही माहौल में तब्दिली आने लगती । बूढ़े ठूँठकी तरह साल पर खड़े रहनेवाले पलाश में एक तरह से जवानी का संचार होने लगता । एक के बाद एक केसरी रंग के प्रणयांकुर फूटने लगते । देखते ही देखते पलाश आपे से बाहर हो जाता । चारों तरफ बसंत का राज्याभिषेक शुरू हो जाता । मनुष्य, पशु, पक्षी सभी इस उत्सव में गहकने बहकने और टहलने लगते । कुछ मेहमान परिन्दे भी आ जाते थे । सभी बसंतोत्सव का भरपूर आनंद उठाते थे । आम्र मंजरी, सरसों के पीले फूल, और गेहूँ की ताम्रवर्णी हो रही बालियाँ होली के स्वागत की भूमि तैयार करते ।

रंगों का त्यौहार होली फागुन का उपहार माना जाता। फसल पकनी शुरू हो जाती । होली-किसान-मांगन (भिक्षुक) का अनोखा रिश्ता होता था । कुछ मदारी महिलाएँ समूह में निकल पड़ती थीं हाथ में डफली लेकर। फागुन और होली के गीत इतने लुभावने अंदाज में गाती थी कि हम लोग यह भी भूल जाते थे कि ये सपेरा जाति के लोग हैं जिन्हें सिर्फ साँप पकड़ने के लिए ही पहचाना जाता है या और कोई है । तीन चार महिलाएँ जो ज्यादातर

श्यामवर्णी हुआ करती थीं किन्तु नाक-नक्श से बहुत ही सुंदर दिखती थी, एक दूसरे के कन्धे पे हाथ रखकर सुरीली आवाज में गीत गाती थी जिसे 'घेरा' कहा जाता था। साथ में एक पुरुष भी हुआ करता था जो डफली बजाता था। वे लोग घर-घर घूमते थे और लोगों को होली के आने की खुशखबरी देते थे। हम छोटे-छोटे बच्चे उनके पीछे घूमा करते थे। गाँव में होली का ढोल जोर-जोर से बजता। चमड़े से मढ़ा हुआ एक नगाड़ा भी होता था जो सिर्फ होली के उत्सव पर ही बजाया जाता। युवक और युवतियाँ गोल-गोल घूमते जिसे घेरैया कहा जाता था। बड़े ही सुंदर माहौल में होली का त्यौहार संपन्न होता।

अब सूर्य देवता शनैः शनैः अपना असली मिज़ाज दिखाना शुरु करते। खेत-खलिहान से निजात पाकर ग्रामीणों के लिए शुरु हो जाता शाही-व्याह का मौसम। यहाँ भी गीतों की भरमार। जीवन के सभी रंग। किन्तु बढ़-चढ़ कर अपना प्रभाव दिखाता रसराज श्रृंगार। जिस घर में शादी-व्याह होनेवाला हो बस्ती में पता चल ही जाता था। घर को चूने से पोता जाता। शादी की सामग्री इकट्ठी करने हेतु परिवार की महिलाओं को निमंत्रित किया जाता। अनाज की साफ-सफाई स्थापना और वरघोड़ा (फुलेका) होता था। शाही-व्याह में गणेश वंदना का विशेष महत्त्व होता था न सिर्फ गानों में, बल्कि शादी से पहले एक दिन गणपति स्थापन को ही समर्पित होता था। महिलाएँ साथ में मिल कर गाती थी — "हूँ तो गणेश वधावा जास मारुँ/सोना सरीखो सूरज उगीयो। / तमारा देराणा लेजो साथ मारुँ/सोना सरीखो सूरज उगीयो।"

बड़े ही सुरीले मंगल गान हुआ करते थे। शादी के दिन अगर लड़के की बारात जा रही हो तो बढ़-चढ़ कर उसकी तारीफ की जाती। ऐसा जताया जाता मानो वह शादी करने नहीं युद्ध भूमि में जा रहा हो। अगर लड़की की शादी हो और बारात आनेवाली हो तो तैयारी अलग प्रकार की होती। बारातीयों की खैर नहीं। गाने ऐसे-ऐसे सुनाये जाते जिसमें वर पक्ष की सभी औरतों की शादियाँ जबरदस्ती यहाँ के युवकों और लड़कों के साथ करवाई जाती। कभी-कभी तो बूढ़ों के साथ भी सैटिंग के गाने गाये जाते और बात बिगड़ जाती। हाथापाई तक हो जाती।

श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों पहलुओं का भरसक प्रभाव रहता गीतों पर। संयोग श्रृंगार संभोग श्रृंगार की चरम सीमा भी लाँघ जाता और यह लड़कीवालों के पुरुष रिश्तेदारों के द्वारा लड़केवालों की महिला रिश्तेदारों के साथ ही होता। कुछ तो ऐसे गाने हुआ करते थे जिन्हें सुनें तो आँखों के सामने ही पूरा का पूरा दृश्य खड़ा हो जाता था। इनमें श्रृंगार के दोनों पक्ष अपनी उफान पर होते। "बाग माँ आँबो रोपीयो केरीयो लश्का लोर/बावा बालकडु रें माँगे। / केरी आलु कटको राखु आखई रात/बावा बालकडुरे माँगे।/लीली तुवर-सुखी तुवर तेना बाँध्या भारा रे/रेशमी रुमालवाळा।/पशानी पशाने पशाने पूछे/वासडोलवाळा के वारे रेशमी रुमालवाळा।" कन्या बिदाई के समय यह गाना अनिवार्य रूप से गाया जाता जिसे सुन हर किसी की आँखों से आँसू बहने लग जाते... "म्हेलों मांथी उडण सकली उड़ी जाशे।" इस प्रकार समाप्त होता ग्राम्य श्रृंगारोत्सव का महाकुंभ।

इसके समानान्तर एक दूसरा भी लोककला उत्सव हमारे गाँवों में चलता। शादी-व्याह का प्रसंग तो परिवार, रिश्तेदारों या ज्यादा से ज्यादा बस्ती वालों को जोड़ता, किन्तु लोककला उत्सव न सिर्फ मेरे गाँव के, बल्कि अगल-बगल के सभी जात बिरादरी वालों को जोड़ता। 'तूरी' कौम रंगमंच में बड़ी ही निपुण होती है। मूल रुप से किसान मजदूर जाति के ये लोग फागुन के महीने में ही अपना टोला लेकर निकल जाते। गाँव-गाँव घूमकर लोगों का मनोरंजन करते। किसी गाँव में एक हफ्ता तो किसी गाँव में पंद्रह दिन। अपने कार्यक्षेत्र में आनेवाले सभी गाँवो का दौरा कर लेते थे ये लोग। किन्तु सबसे ज्यादा, उनका रुकना हमारे गाँव में ही होता था। क्योंकि खाने-पीने और आवास की सुविधा सबसे ज्यादा और

अच्छी तरह यहाँ ही मिलती थी। पेट्रोमैक्स के उजाले में मंचित होते थे उनके नाटक। नायक, खलनायक, नायिका, खलनायिका, दास-दासी, विदूषक आदि पात्र और उनके संवाद लोक-जिह्वा पर रम जाते थे। अभिनेताओं के साथ लोग इतना अपनत्व स्थापित कर लेते थे कि वे उन्हें तू-तड़ाक बुलाते जैसे नटवर को नटिया, भीखऊ को भिखला, चुनीलाल को चुनीया। लोग बातों बातों में इनका जिक्र ले आते। जेसल तोरल, सती अनुसूया, राजा हरिश्चंद्र, भक्त नरसिंह मेहता, रा'नवघण, कादू मकराणी, संपूर्ण रामायण, कृष्ण लीला आदि अनेक प्रसंगो पर नाटक मंचित किये जाते। इनके साथ कोई अभिनेत्रियाँ नहीं होती थी। लड़के ही लड़कियों का अभिनय करते थे। अभिनय के दौरान वे लोग पात्र में इतना डूब जाते थे कि भावक/दर्शक को पता ही नहीं चलता था कि ये लड़का है या लड़की / युवक भी पेट्रोमैक्स के रंगीन उजाले में खूबसूरत दिखने वाली कच्ची उम्र की दासी के पीछे पागल हो जाते और उसके शरीर का स्पर्श करके रोमांच का अनुभव भी कर लेते।

नाटक में मध्यान्तर (इन्टरवल) भी होता, इस दौरान शुरु होती लोकगीतों की महफिल। नाटक के राजा, महाराजा, नायक-खलनायक या दास-दासी सभी अपने-अपने पात्रों से बाहर निकल जाते थे। प्रेक्षकों को इस बात का जरा-सा भी ऐतराज नहीं होता था। पृथ्वीराज चौहान और मुहम्मद गोरी एक साथ नाचते थे। पेट्रोमैक्स में हवा भर रही द्रौपदी को चीरहरण करने वाले दुशासन से बीड़ी पीने में कोई ऐतराज नहीं होता था। बिल्कुल अजीबोगरीब दृश्य हुआ करता था वह।

प्रेक्षकों के लिए प्रस्तुत होता था फरमाइशी गानों का कार्यक्रम। डेढ़-दो घंटो तक चलने वाला यह कार्यक्रम हृदयस्थल बन जाता था, प्रेक्षक संगीत से तरबतर हो जाते थे। कोई भी गाना एक रुपये से शुरु होता था, इस गाने को काटकर दूसरा प्रेक्षक अपनी इच्छानुसार गाना गँवाने के लिए दो रुपये बढ़ाता। जैसे कि – ''शेरपुर गामना कुवे पाणी गई ती, मने केर कांटो वाग्यो'' एक रुपये में शुरु हुए इस गाने को दूसरा प्रेक्षक दो रुपये में अपनी इच्छानुसार गँवाता।

''गांठीयोल गामना कुवे पाणी गईती, मने केर कांटो वाग्यों'' फिर पहले वाला सीटी बजाकर गायिका-नायिका को बुलाता और तीन रुपये देकर अपने पहलेवाले गीत को ही बरकरार रखता था। बात बड़ी दूर तक निकल जाती। इसके दुष्परिणाम भी आते। दूसरे दिन कुछ युवक अपनी सोने की अंगूठी या कलाई की घड़ी बेचने के लिए मजबूर हो जाते।

लोक गीत इन नर्तकों और स्थानीय लोगों की फरमाईश, पसंद-नापसंद के अनुसार विविध आकार और लय में ढलते। ऐसे में असंख्य नये गीत बनते और कुछ पुराने बिगड़ते या लुप्त भी हो जाते। खेतों में दिन रात काम करते मजदूर इन गीतों को गुनगुनाते और अपनी जरूरत के अनुसार थोड़ा बहुत तोड़-मरोड़, फेर-बदल करते रहते। आषाढ़ के आगमन तक चलता रहता यह लोकोत्सव।

आसमान में बादल मंडराने लगते और किसान खेतों की जुताई में लग जाते। रिम-झिम बारिश में हल चलाते किसान या अपने मवेशियों के लिए घास बटोरती महिलाएँ सब कुछ न कुछ गुनगुनाते रहते। कुछ हल के साथ जुड़े हुए बैल तो इसके इतने आदी हो जाते कि अगर किसान गुनगुनाना बंद कर दे तो चलना भी बंद कर देते थे।

जिंदगी के हर मोड़ पर गीतों को अपना साथी माननेवाले ग्रामीण मृत्यु को भी अटल और अंतिम सत्य के रूप में स्वीकार कर उसका भी गीतों से ही स्वागत करते थे। गाँव में किसी भी परिवार जात-बिरादरी में मृत्यु हुई हो, खेत-खलिहान का काम तुरंत रोक दिया जाता। झूम-झूम कर नाचने-गानेवाले मिट्टी से सरोकार रखने वाले यह लोग किसी को मिट्टी में मिला देख फूट-फूट कर रोने लगते थे। उनके रुदन में भी लय होती थी। मृतक को याद करके उसके जीवन के कुछ प्रसंग कल्पना के साथ जोड़कर करुणा से भर सहज रुप से

प्रस्तुत हो जाते । बारह दिनों तक रोना-धोना चलता । बड़े बुजुर्ग के मृत्यु को सहज स्वीकार लिया जाता, किन्तु युवा स्त्री-पुरुष के निधन का सदमा हर किसी पर देखने को मिलता। कई दिनों तक बस्ती में शुभप्रसंग या त्यौहार नहीं मनाया जाता । मृतक के पीछे गाये जाने वाले गीत 'मरसीया' कहलाते थे । शनैः शनैः शोक गीत के सदमे से लोग मुक्त होते ।

जाड़ों का मौसम शुरु होते ही एक लुभावना नजारा मेरे गाँव को रोमांचित कर देता । युवाओं के लिए बहारों का मौसम होता और हम बच्चों के लिए आश्चर्य का । खासकर मैं इस बेनमून नजारे को देखकर भावविभोर हो जाता । कपास के खेतों में काम करने हेतु पंचमहल और दाहोद जिलों से आदिवासी युवक-युवतियों के झुंड चले आते । शाम के समय बीड़ी माचिस या अन्य सामान खरीदने हेतु जब वे रजाक मन्सूरी की दुकान पर आते थे मैं उन्हें टुकुर-टुकुर देखा करता था । मेरा बालमन इस अनुपम दृश्य को देखकर नाच उठता था । समूह में खड़ी लड़कियाँ चंचल हिरनियों की तरह दिखती थी । विशाल आँखें, होठों पर तैरता निर्दोष स्मित, साथ ही चेहरे पर अजनबी प्रदेश में आने का डर भी झलकता था । मिट्टी के रंग के मार्बल से तराशी गई देह सिर्फ ब्लाउज और घाघरा पहने हुआ करती थी । आदिवासी युवतियाँ ज़ेवर बहुत कम पहना करती थी । नाक में नथनी, गले में चाँदी की गूँथी हुई खूब सूरत जंजीरें, आधी कमर को घेरे हुए नितंब को निर्दिष्ट करनेवाला छोटे-छोटे घुंघरुओं से बना हुआ कमर-कंदोरा और पैरों में पायल । दस बारह लड़कियाँ एक साथ निकलती थीं समूह में । एक बाँका जवान भी हुआ करता था जिस पर उनकी रखवाली की पूरी जिम्मेदारी होती थी । स्कूल के दिनों मेरी पढ़ने में ज्यादा रुचि नहीं थी । मैं पढ़ाई तो नहीं करता पर देर रात तक सोता भी नहीं था । जाड़ो के मौसम में दिन ढलते ही लोग अपने-अपने घरों में छुप जाते थे । देखते ही देखते चारों तरफ सन्नाटा छा जाता । सिर्फ सुनाई देती थी तो दूर-दूर खेतों में गेहूँ की फसल को पानी पिलाने हेतु चल रही मशीनों की हूक-हूक आवाजें । पूस की रात में अपने समूह के साथ वर्तुलाकार बैठकर बीच में आग जलाते थे आदिवासी युवक-युवतियाँ । दिनभर की हुई कड़ी मजदूरी की थकान से राहत पाने हेतु ये लोग अपने लोकगीतों का पिटारा खोल देते थे । दो समूहों में बँटे इन लोगों के बीच गाने की स्पर्धा होती थी । एक बड़ा सा ढोल और बाँस की लंबी बाँसुरियाँ वातावरण को नशीला बना देती थी । दूर-दूर खेतों में गाये जाने वाले ये गीत हवा के झोकों के साथे तैरते हमारी बस्ती तक आ जाते । रात के सन्नाटे में मैं उनको सुन तो सकता था पर समझ में कुछ नहीं आता था । कानों के इर्द-गिर्द झूमते शब्दों को सहेजने का प्रयास मात्र करता तब तो हवा का एक दूसरा झोंका आ जाता और इन्हें बहाकर दूर-सुदूर ले जाता । मन करता मैं इस हवा के झौके के साथ चला जाऊँ और उन अनसुने शब्दों को किसी भी प्रकार समझ लूँ, पी लूँ । पर यह असंभव था । अंत में हारकर मैं नींद की गोद में चला जाता ।

दूसरे दिन वही झुंड रजाक मन्सूरी की दुकान पर आ जाता । मैं इनके इर्द-गिर्द मंडराता रहता — "कौन गाता होगा इतने सुरीले गीत इनमें से । और अब क्यों नहीं गाते ये लोग ?" मैं उनकी आवाज सुनने के लिए व्यग्र रहता । उनकी भाषा हमारी भाषा से बिल्कुल अलग थी । हमें बिल्कुल पता नहीं चलता, किन्तु रजाक ने थोड़ी बहुत सीख ली थी । कभी कभार वह मजाक में उनके साथ बोल भी लेता था । अपनी बोली में दूसरे को बात करते हुए सुनकर वे सभी खिलखिलाकर हँस पड़ते और सरसों के पीले फूलों की तरह हँसी उनके चले जाने के बाद भी महकती रहती ।

सन् १९९१ में जब मैंने संतरामपुर कालेज में अध्यापक के रुप में कार्य करना शुरु किया तब यह अंदाज तो नहीं ही था कि मैं एक बड़े ही खूबसूरत और लोक संस्कृति से लबालब प्रदेश में आया हूँ । बचपन में

सुने हुए लोकगीतों को महकाने वाले लोग इस प्रदेश से ही थे यह बात तो यहाँ आने के बाद ही पता चली। आदिवासी लोकगीतों से रुबरु होने का मौका मुझे बचपन में ही कुछ किश्तों में मिला था। आज इनसे पूर्णरुपेण रुबरु होने का अनिर्वचनीय रोमांच मुझे हो रहा था। महाविद्यालय में आते छात्र-छात्राएँ आपस में अपनी बोली में बाते करते थे पर जब मैं उनसे कुछ पूछ बैठता तो बिल्कुल चुप। मैं उनसे उनकी बोली में ही कुछ उगलवाना चाहता था पर मुझे प्रत्युत्तर गुजराती में ही मिलता था। हाँ, गुजराती में भी उनकी बोली की मिठास हुआ करती थी। मैंने कई बार संतरामपुर के इर्द-गिर्द की आदिवासी बोली सीखने का प्रयास किया है किन्तु दुर्भाग्यवश अभी तक सीख नहीं पाया हूँ।

गत कुछ सालों से एक बड़ा ही दुःखद परिवर्तन देखने को मिल रहा है। शनैः शनैः आदिवासी लोकगीत ओर लोककला का यह बेनमून खजाना क्षीण होता जा रहा है। संतरामपुर में एक हफ्ते तक दिन रात चलनेवाला रवाड़ी का मेला हो या राजस्थान का मेला, लुणावाडा में कलेश्वरी का मेला हो या दाहोद में ड़ारा का मेला, सैकड़ों की तादाद में झूमते आते थे आदिवासी युवक-युवतियाँ। हाथों में लम्बे बाँस की बांसुरियाँ लिए युवक और हाथों में खुले रुमाल लिए इन्हें हवा में उड़ाती युवतियाँ बिल्कुल सहज चलते थे भी नाचते हुए। उनका आगमन पूरे माहौल को नशीला बना देता था। उनके प्रसिद्ध लोकनृत्य को देखने न सिर्फ गुजरात, बल्कि राजस्थान और मध्यप्रदेश से भी कलारसिक लोग आते थे। मौके का तकाजा देखकर फिल्म वाले भी आ पहुँचते और कैमरे मैं केद कर देते थे इस अनुपम सौंदर्य को। जैसे-जैसे तथाकथित पश्चिमी संस्कृति, आधुनिकता और सत्ताधीशों के द्वारा थोपे जा रहे Spoken English का दबाव बढ़ता जा रहा है सब कुछ नष्ट होता जा रहा है। चौराहे पे खड़ा आदिवासी युवक यह सोच रहा है – ''जाये तो जाये कहाँ ?'' सभी दिशाएँ उसे लीलने के लिए तैयार है। संस्कृति चमड़ी की तरह होती है, उसे पूर्णरुपेण उतार फेंकना मुश्किल ही नहीं, बल्कि असंभव है। चमड़ी से ही उसकी पहचान और कथाकथित सभ्य समाज की दुत्कार भी जुड़ी है। दो वक्त की रोटी की तलाश में शहर की तरफ जा रहा आदिवासी परिवार अपनी संस्कृति के दुर्लभ खजाने को टूटी हुई संदूक के तले फटी हुई गुदड़ी के नीचे छुपा देता है। चुपचाप आसपास के माहौल से अनभिज्ञ डरा-डरा सा न किसी से बात करता है न किसी से मिलता जुलता है। अगर ऐसा ही होता रहा तो कुछ ही दिनों में जंगलों के नाश के साथ-साथ अपनी अद्भुत संस्कृति को इधर-उधर या छुटपुट इतिहास के पन्नों में ही ढूँढ पायेंगे। अपनी सीमाओं को लाँघकर उछलने वाला कंठ्य साहित्य और कला की परंपरा का यह समंदर धीरे-धीरे सूखता जा रहा है। क्षीण होता जा रहा है यह दुर्लभ खजाना। आज इसको बचाने की सख्त जरुरत है। गुजरात के प्रसिद्ध आदिवासी लोककला एवं संस्कृति के शोधकर्ता भगवानदास पटेल का कहना है – ''हम अनुमान आधारित ठोस प्रमाणों के अभाव में आभासी भारतीय संस्कृति के मूल्यांकन की अंधी दौड़ लगा रहे हैं, जब कि दूसरी तरफ आँखो के सामने एक जिन्दा भारतीय संस्कृति अपनी अंतिम साँसे गिन रही है।'' प्रसिद्ध पुरातत्वविद् डॉ. रमणलाल ना. महेता लिखते हैं कि - ''हिन्दुस्तान में सिन्धु नदी के समय के पश्चात आर्यो का आगमन कब हुआ इस बात के हमारे पास कोई ठोस प्रमाण नहीं है। इसलिए हमें हमारी शताब्दी-पूर्वार्ध की विचारधारा का छोड़ देना चाहिए'' जिससे हम हमारी आदिवासी संस्कृति को ही निर्विवाद रुप से भारतीय संस्कृति के रुप में स्वीकार कर सकें। (भील लोकोत्सव, गौर, भूमिका, पृ.६)

प्रागैतिहासिक भारत के मूल निवासी द्रविड़ नहीं आदिवासी थे

— डॉ. ईश्वरसिंह राठवा

आदिवासी आर्टस एण्ड कॉमर्स कॉलेज, संतरामपुर

भारतीय समाज-व्यस्था की कथित मुख्य धारा में अलग-थलग दुर्गम जंगलों, बीहड़ वनों, पहाड़ों व प्रकृति की आह्लादक खुशनुमा गोद में हजारों-हजार वर्ष से मस्तमौला जीवन जीनेवाले आदिवासियों की अपनी अलग ही दुनिया है। इस अजायबधर-सी दुनिया को प्रसिद्ध समाजविज्ञानी रामशरण जोशी 'दूसरा भारत' कहते हैं। यूं देखा जाय तों अर्थात ऐतिहासिक संदर्भ मं देखा जाय तो आदिवासी भारत पहला भारत हैं किन्तु वर्तमान संदर्भ में वह दूसरा भारत हैं। खैर, जो भी हो किन्तु इस भारत में न तो छल और कपट का डेरा है और न ही दिखावटी-बनावटी संसार मस्तमौला जीवन जीने वाले ये आदिवासी आधुनिक समाज की रंगीनियों व बाजारू संस्कृति से दूर रहकर अपनी परंपरागत शैली में जीवन जीते हुए अद्यावधि अपनी आदिम सभ्यता को अछूते कौमार्य की तरह सुरक्षित रखने में बखूबी सफल रहे हैं। शायद इसलिए उन्हें कोई 'असभ्य' कहता है तो कोई 'जंगली', लेकिन वास्तविक दुनिया के पल गुजारने पर उनकी भव्यता-दिव्यता एवं जीवन्तता का हमें अहसास होता है। प्रकृति के खुले प्रांगन में पल्लवित-पुष्पित उनका परंपरागत जीवन शहर की अलसाई व बेचैन जिन्दगी से हजार गुना अव्वल है। सरल, सहज, सौम्य और बनावटी जीवन से मीलों दूर बसे इन निरीह आदिवासियों के संसार में समरसता का घोल है। उनका रहन-सहन, उनका नृत्य, उनका गीत-संगीत, उनके पर्व-त्यौहार, उनकी सामाजिक व्यवस्था, उनका अर्थतंत्र, उनकी संस्कृति सब कुछ प्रकृति के साथ अद्भुत सामजस्य व तालमेल से संचालित है।

आदिवासी भारत के मूल बाशिंदे या मूल निवासी हैं। आदिवासी... मतलब हजारों-हजार वर्ष से इस धरती पर निवास कर रहे लोग। आजकल वैज्ञानिक आविष्कारों के चलते नृवंशविज्ञान ने डी.एन.ए टेस्ट के माध्यम से इसे प्रमाणित भी कर दिया है। इस तथ्य की पुष्टी करते हुए गुजराती दलित कवि प्रवीण गढवी 'जवाब' शीर्षक अपनी कविता में यूं लिखते हैं-(मुल गुजराती कविता का हिन्दी में केवल लिप्यंतरण किया गया है — लेखक)

''ले, सांभळ / आ वंशानुक्रम विज्ञानी ने / दक्षिण आफ्रिकाना कालाहारी रणमां टाढ तडके / भूखे रोगे पीड़ातो / काळा वांकडिया वाळवाळो / अनास / पुष्ट होष्ठ / दिवासी तो नीकळ्यो / तारो वडदादो / जेणे हड़धूत करवामां / धिक्कारवामां / जूल्म करवामां तें कशुं न राख्युं बाकी / जेने अछूत गण्यो ते तो नीकळयो तारो बाप ! / हवे छे तारी पासे को' जवाब?''[१]

अतः यह निर्विवाद रूप से माना जा सकता हैं कि आदिवासी ही मानवजात के पुरखे रहे हैं। मतलब कि सन ऑफ सॉइल अर्थात् धरतीपुत्र। इस दृष्टि से देखा जाय तो आदिवासी शब्द का शाब्दिक अर्थ हुआ, धरती पर आरंभ से रहनेवाला। अर्थात संसार में आदिवासी धरती की आदि संतानें या आदिपुत्र हैं तो फिर भारत जो कि इसी धरती पर स्थित एक उपमहाद्वीप है, इनके मूल बाशिंदे भी निर्विवाद रूप से आदिवासी ही हैं। इस तथ्य से किसी को इनकार नहीं हो सकता। लेकिन दुर्भाग्यवश इस तथ्य से फिलहाल आर्य इतिहासकार एवं कट्टर हिन्दुत्वादियों को सख्त एतराज है। वे सिर्फ एतराज ही नहीं करते किन्तु सुनियोजित ढंग से ऐतिहासिक तथ्यो तोड़मरोड़ कर इतिहास के पृष्ठों से ही इस तथ्य को गायब कर देना चाहते है और इसी रणनीति के तहत वे आदिवासियों को 'वनवासी' कहते हैं। मैं यहाँ सबको आगाह करते हुए बताना चाहता हूँ कि देखने-सुनने, पढ़ने, पहचानने, व्यवहार और प्रचलन में एक-से दिखने वाले ये दोनों शब्द कतई एकार्थी नहीं हैं। किसी भी देश और समाज के लिए शब्द और संकल्पनाए बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं. इन्हें समझना बेहद आवश्यक है। भाषाओं में कुछ शब्द एकार्थी तो कोई शब्द अनेक

अर्थों के द्योतक होते हैं। इन अनेक अर्थों में से एक अर्थ होता है, शब्दार्थ और दूसरा अर्थ होता है, निहितार्थ अत: जब शब्द के निहितार्थ को समझ लिया जाता है तब सारी बातें खुद-ब-खुद आईने की तरह साफ होने लगती हैं। सामान्यत: 'आदिवासी' शब्द को आमजन से लेकर विद्वानों ने अलग-अलग रूप में प्रयुक्त एवं परिभाषित किया है। सामान्यत: इस शब्द का सामान्य एवं प्रचलित अर्थ है, 'जो लोग आदिकाल से इस देश में रहते आ रहे हैं, वे ही यहाँ के मूल निवासी हैं।' अत: आदिवासी का शाब्दिक अर्थ हुआ, आरंभ से रहने-वाला। आर्य कट्टरपंथियों की सोच है कि ये आदिवासी ही इस देश-समाज के आदिवासी, मूल निवासी हो जायेंगे, तो हम निर्वासित होकर विस्थापित हो जायेंगे, उपेक्षित हो जायेंगे। अखिल भारतीय आदिवासी साहित्य सम्मेलन में रमणिका फाउन्डेशन की अध्यक्षा सुश्री रमणिका गुप्ता ने भी कहा है, ''हमें संविधान में जनजाति कहा जाता है, जो गलत हैं। आदिवासी की कोई जाति नहीं होती। हम न जनजाति हैं और न वनवासी, हम केवल आदिवासी हैं।.... हम ही भारत के इतिहास के मूलवासी रहे हैं।''[२] आदिवासी समुदाय का बच्चा-बच्चा पीढ़ी-दर-पीढ़ी अब तक गाता आ रहा है —

''पहाड़ सुन्दर, जंगल सुन्दर, सबसे सुन्दर झरना।
इस धरती के बेटे हैं हम, यहाँ राज है अपना।''[३]

बामसेफ के राष्ट्रीय अध्यक्ष मान्यवर वामन मेश्राम का भी यही मानना है, ''शब्द बोलते हैं। आदिवासी और मूल निवासी शब्द का अर्थ एक ही है। मूल निवासी का अर्थ होता है देश के आरंभ से वास करनेवाले लोग। आदिवासी का अर्थ भी यही होता हैं। पूरे विश्व में अभी मूल निवासी संकल्पना प्रभावी है। इससे हकदारी तय हो रही है कि देश की सत्ता, जंगल, जमीन आदि पर हक किसका है। हक उसी का होता है जो मूल निवासी होते हैं, आदिवासी होते हैं।''[४]

आदिवासी शब्द की परिभाषा के पश्चात अब आदिवासियों के लिए प्रयुक्त 'वनवासी' शब्द पर भी विचार-विमर्श कर लिया जायें 'वनवासी' शब्द का शब्द-कोशीय अर्थ होता है, 'वन में निवास करनेवाला।' वर्तमान में विश्व हिन्दू परिषद द्वारा आदिवासियों के लिए 'वनवासी' नाम का प्रयोग खूब किया जा रहा है। विज्ञ और बुद्धि के विवेकानन्दों को 'आदिवासी' नाम विकृत और भौंडा लगता है और उसके बदले वनवासी नाम सुसंस्कृत एवं सुंदर लगता है। हालांकि आदिवासी समुदाय के विज्ञ एवं विद्वज्जनों को उनके इस नज़रिये को लेकर न केवल सख्त एतराज है बल्कि वनवासी नामकरण से भी सख्त नाराज़गी है। वे (आदिवासी) मानते हैं, आदिवासी को वनवासी कहना गाली देने के समान है। भागीरथ मेघवालजी के मतानुसार, ''आदिवासी का निहितार्थ बड़ा विस्तृत होता है। जब हम आदिवासी होते हैं तो हमारा एक इतिहास होता है, हमारा एक भूगोल होता है, हमारी एक सभ्यता होती है, हमारा एक आसमान होता है, हमारे पुरखे होते हैं, उनका संघर्ष होता है। हमारे हक़ होते हैं, हमारे अधिकार होते हैं, हमारी एक विरासत होती है। और भी बहुत कुछ होता है। इसलिए हमारे दुश्मन हमें 'आदिवासी' नहीं 'वनवासी' कहना चाहते हैं। शब्दों के पीछे छिपी इस चालबाजी को, इस बदमाशी को, हमारे शत्रुओं की घृणित मंशा को हमें समझना और अपने समाज को, मूलनिवासी समाज को समझाना चाहिए।''[५] बामसेफ के राष्ट्रीय अध्यक्ष वामन मेश्राम ने भी हिन्दुत्ववादियों की इस साज़िश का पर्दाफाश करते हुए कहा है, ''आदिवासी को वनवासी कहना साधारण बात नहीं है। यह बहुत बड़ी साज़िश है आदिवासियों को अपनी हक़दारी से, दावेदारी से महरूम करने की। आदिवासी शब्द हक़दारी देता है तो वनवासी शब्द हक़दारी छीन लेता है।''[६] युद्धरत आम आदमी (त्रैमासिक) पत्रिका की संपादक महोदया सुश्री रमणिका गुप्ताजी की भी यही राय रही है कि ''आज कोई सबसे बड़ा खतरा अगर आदिवासी जमात को है तो वह उसकी पहचान मिटने का है। इक्कीसवीं सदी में उसकी पहचान मिटाने की

साज़िश एक योजनाबद्ध तरीके से रची जा रही है। किसी भी जमात, जाति, नस्ल या कबीले अथवा देश को मिटाना हो तो उसकी पहचान मिटाने का काम सबसे पहले शुरू किया जाता है और भारत में यह काम आज हिन्दुत्ववादियों ने शुरू कर दिया है। आदिवासी की पहचान और नाम छीनकर उसे 'वनवासी' घोषित किया जा रहा है ताकि वह यह भूल जाए कि वह इस देश का मूलनिवासी यानी आदिवासी है।"[७] मैं यहाँ इस विमर्श के संदर्भ में पुनः भागीरथ मेघवालजी को उद्‌धृत कर रहा हूँ। उनके अनुसार, "शब्द सब कुछ बदल देता है। शब्द राजा को रंक बना देता है और रंक को राजा बना देता है। आदिवासी शब्द राजा बनानेवाला शब्द है और वनवासी असभ्य, जंगली और अधिकार वंचित बनानेवाला"[८] जो लोग आदिवासी को वनवासी कहना पसंद करते हैं उनकी साज़िश अब समझ में आ रही है। 'वनवासी' शब्द के निहितार्थ से यह बिल्कुल साफ़ हो जाता है कि वनवासी कहकर हिन्दुत्ववादी न सिर्फ हमें गाली देना चाहते हैं; बल्कि हमारी पहचान मिटाकर हमें अधिकार वंचित भी कर देना चाहते हैं। भागीरथ मेघवालजी के मतानुसार, "अब तो आदिवासी और मूल निवासी का सवाल देश में ही नहीं विश्वस्तर पर भी उठने लगा है। सन् २००० में संयुक्त राष्ट्रसंघ की ओर से डरबन में इसी विषय पर अंतर्राष्ट्रीय संमेलन हुआ जिसमें भारत सरकार के विदेश मंत्री ने कहा कि भारत में एक भी आदिवासी, एक भी मूल निवासी नहीं है। यह जो आदिवासी का सवाल है, वह इतना साधारण सवाल नहीं है। यह देश के ८.८ करोड़ लोगों के अस्तित्व को दुनिया के सामने नकारने का सवाल है। हम आदिवासी लोग भारत में हैं ही नहीं यह बात हमारे शत्रु शासकों का विदेश मंत्री दुनिया के सामने कह चुका है।"[९]

आदिवासी और वनवासी शब्दों के निहितार्थ की विस्तृत समीक्षा से इतना तो अब आइने की तरह साफ़ हो चुका है कि आदिवासियों को वनवासी संबोधन न केवल नाज़ायज रूप से दी जा रही गाली है; बल्कि उन्हें डीमोरलाइज़ करने की प्रक्रिया भी है। भागीरथ मेघवाल के मतानुसार, "आदिवासी कहने से हक़/अधिकार प्राप्त होते हैं। यह बात भी साफ़ होती है कि हम आदिवासी हैं तो दूसरे लोग भी हैं, जो आदिवासी नहीं हैं। इस भारतभूमि पर आदिवासी पहले दर्जों के नागरिक सिद्ध होते हैं और जो गैर-आदिवासी हैं वे दूसरी श्रेणी के नागरिक सिद्ध होते हैं।"[१०] तो दोस्तों अब समझ में आ रहा हैं कि इसी रणनीति या षड्यन्त्र के तहत स्वतंत्रता प्राप्ति के ७० साल गुजर जाने के पश्चात भी 'आदिवासी' शब्द को संवैधानिक मान्यता तक नहीं मिल सकी है। यह इस देश के मूल बाशिंदे आदिवासियों के साथ सबसे बड़ा धोखा है। जब से संयुक्त राष्ट्रसंघ ने वर्ष १९९३ को 'इयर ऑफ़ इंडीजिनस पीपुल्स' (आदिवासी या मूलनिवासी) वर्ष के रूप में मनाये जाने की घोषणा की है तबसे हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथी संगठन हो-हल्ला मचा रहे हैं। उनकी निगाह में विदेशी संगठन 'आदिवासी' शब्द का इस्तेमाल कूटनीति के रूप में कर रहे हैं। तत्कालीन भारत सरकार की भी यही राय रही है। यह अजीब विडंबना नहीं तो ओर क्या है कि भारतवर्ष में इतनी भारी तादाद में (८.८ करोड़) आदिवासी अपनी संस्कृति एवं भाषाओं के साथ मौजूद हैं, बावजूद भी भारत सरकार का नुमाइंदा यह मानने को कतई राजी नहीं कि भारतवर्ष में आदिवासी, मूलनिवासी या देशज (Indiginous) लोग निवास करते हैं। वर्तमान समय में आदिवासी आन्दोलनों व आदि-वासियों की जागृति के मद्देनज़र कट्टरपंथियों के दवाब में सरकारें भी विदेशी बनाम मूल निवासी के ज्वलंत मुद्दे को जल्द से जल्द ठंडे बस्ते में डाल देना चाहती है। उन्हें आशंका है कि कहीं भारत में भी फ़िजी के मूल निवासी स्पेट बनाम विदेशी (भारतीय मूल) महेन्द्र की तर्ज पर कोई आदिवासी या आदिवासी समाज देश पर अपनी दावेदारी न ठोंक दें। अतएव इसमें कोई दो राय नहीं कि सदियों से चला आ रहा आर्य बनाम अनार्य, देशी बनाम विदेशी, हिन्दू बनाम आदिवासी का सांस्कृतिक-राजनीतिक टकराव

ही देश के आदिवासियों को हाशिए पर रहने को बाध्य किया है। उनकी सरलता, सहजता व भोलेपन का बेजा फायदा उठाकर कथित सभ्य लोगों ने आदिवासी क्षेत्रों में अपना वर्चस्व कायम किया है। यह सिलसिला सिर्फ़ आज से ही नहीं किन्तु अनादिकाल से अर्थात आर्य आक्रमण से अबाध गति से चला आ रहा है। भारतीय संविधान निर्माता डॉ. बाबासाहब अम्बेड़कर का भी भारतीय इतिहास के प्रति यही निष्कर्ष था कि ''भारत का इतिहास और कुछ नहीं बल्कि दो संस्कृतियों का संघर्ष मात्र है।''[११] आदिवासी क्रांतिकारी समाज सुधारक व मराठी लेखक वाहरू सोनवणे का भी इस सम्बन्ध में कुछ यूं कहना है, ''आदिवासी के सांस्कृतिकअस्तित्व को संकट में डालनेवाली यूँ तो कई संस्कृतियाँ हैं, मगर उनमें हिन्दू(ब्राह्मणी) संस्कृति बेहद धोखेबाज संस्कृति है।''[१२] अत: आदिवासी जीवन के इतिहास की इस खौफनाक सच्चाई की ओर बेबाकी से संकेत करनेवाला शेक्सपीयर के नाटक 'टैम्पेस्ट' में केलिबन का कथन, जिसमें उसने अपनी त्रासद स्थिति का खाका खींचा है, मगर वह कथन वर्तमान में भारतीय आदिवासियों की विकटतम जिंदगी से अक्षरश: मेल खाता है, जिसे यहाँ उद्‌धृत कर इस विमर्श को विराम देते हैं –

''यह द्वीप मेरा था/सौगंध/मेरी माँ साईकोरेक्स की,/ जिसे तुमने छीन लिया मुझसे। /जब पहली बार आये यहाँ /तुमने मुझे सहलाया /मन में जगह दी /दिया जल और सरस फल। तुमने सिखाया मुझे महान प्रकाश-पुंज सूर्य को नाम देना /और बताया कैसे वह दिन-रात / डूबता-उगता है। मैं तुम्हे प्यार कर बैठा /और मैंने बताई तुम्हें द्वीप की खूबियाँ /नए नए झरने, खारे पानी के गड्ढे /ऊसर और उपजाऊ भूमि, /हूँ अभिशप्त आज मैं, /ऐसा करके।''[१३]

खैर, इस जगह सबसे बडा एवं अहम् प्रश्न यह उपस्थित होता है कि अगर आदिवासी भारत के मूल बाशिंदे नहीं है तो फिर कौन है? साथ-ही दूसरा सवाल यह भी बनता है कि प्रागैतिहासिक युग के मनुष्य आदिवासी नहीं थे तो फिर कौन थे? इन सवालों के उत्तर खोजने के लिए हम यहा कुछ ऐसे इतिहास लेखक, भाषाशास्त्री एवं समाजशास्त्रियों का हवाला देना चाहेगें; जिन्होंने प्रागैतिहासिक भारत के अनछुए पहलुओं को बड़ी ही तटस्थता, साहसिकता एवं काबिलेतारीफ़ ढंग से लोगों के समक्ष उपस्थित किया है। सामान्यत: भारतीय प्रायद्वीय का सांस्कृतिक विभाजन 'द्रविड़ तथा आर्य' के रूप में प्रचलित एवं सर्वमान्य माना जाता रहा है। इन वर्गों को ही दूसरे विभिन्न नामों यथा, द्रविड़-गैर द्रविड़, आर्य-अनार्य दिए जाते रहे हैं। मगर यह विभाजन न केवल अनुपयुक्त है, बल्कि गैर–जिम्मेदाराना भी है। यह सब एक गहरे राजनीतिक षड़यंत्र के तहत हुआ है और अद्यावधि हो भी रहा है। डॉ. परगुटेन ने भारतीय संस्कृति के तीन चरण-मुंडा, द्रविड़ तथा आर्य - गिनाये हैं। इस दृष्टि से मुंडा-संस्कृति न केवल भारत की सबसे आदिम संस्कृति हैं, बल्कि भारतीय संस्कृति भी मुंडा संस्कृति का नवसंस्करण ही है। दूसरे शब्दों में कहा जाय तो कोल एवं मुंड़ा लोग प्रागैतिहासिक भारत के मूल निवासी आदिवासी समूह है। भारतीय इतिहास के प्रागैतिहासिक काल की सामाजिक स्थिति का चित्रांकन दुर्भाग्यवश इतिहास में या फिर फिर कहीं भी स्पष्टत: रेखांकित नहीं है। हमारे इतिहासिकार एवं अनुसंधानकर्ता प्रागैतिहासिक भारत के संदर्भ में तो कुछ कहने का साहस जुटाते हैं, मगर प्रागैतिहासिक भारत के मूल निवासियों के बारे में कुछ भी कहने को कतई तैयार नहीं है। ऐतिहासिक स्त्रोतों के अभाव में या नाकाफी होने का बहाना आगे धरकर आँखें मूँद लेना ही अक्सर भारतीय इतिहास-लेखकों ने वाजिब माना है। कहते हैं न कि हर कार्य के पीछे कोई कारण अवश्य रहता है। जो इतिहास लिखा गया उसके पीछे भी कारण है और जो इतिहास नहीं लिखा गया उसके पीछे भी कारण निहित हैं। उन कारणों की खोजबीन करने पर जो लिखा गया हैं उससे ही क्या नहीं लिखा गया उसकी जानकारी मिल जाती है। जिस प्रकार इतिहास लेखन के कारण होते हैं उसी प्रकार इतिहास नहीं लिखने के भी कारण होते हैं। ये कारण भी अपने आप में एक इतिहास छुपाए

होते है। ऐसा भी नहीं होता कि किसी समाज का इतिहास नहीं लिखने से उनका इतिहास समाप्त हो जाता है। दूसरी गौरतलब बात यह है कि तथाकथित सभ्यता का दंभ भरनेवाले सोफिस्टिकेटेड इतिहासकार भारतीय इतिहास के प्राचीन भारत को आर्य संस्कृति से ही जोड़कर देखने के कायल रहे हैं । उनके लिए आर्यपूर्व स्थित मूल भारतीय संस्कृति आर्य संस्कृति मुंडा एवं द्रविड़ का होना न होना कोई मायने नहीं रखता है । लोग अपने-अपने स्वार्थों के रंगीन चश्में चढ़ा कर भारत के इतिहास को देख रहे हैं और उसके पुनर्लेखन की बात कर रहे है। उस पुनर्लेखन की बात में ईमानदारी कितनी हैं इसका पता तो तभी चल सकता है कि इतिहास लेखन की कोई कसौटी तय की जाय और यह कसौटी समय ही हो सकता है । इतिहास ने बहुत सारे सवाल खड़े किये हैं जिनका उत्तर इतिहासकारों को देना चाहिए और उन्हें देना ही होगा। यदि वे इसका उत्तर नहीं देंगे तो वे बेईमान माने जाएंगे। खैर, मैं यहाँ डंके की चोट पर कहना चाहता हूँ कि प्रागैतिहासिक भारत के मूल वाशिंदे आदिवासी थे और आधुनिक भारतीय संस्कृति का मूल उत्स भी आदिवासी संस्कृति (मुंडा संस्कृति) ही है। केवल इतना ही नहीं मैं तो यहाँ तक कहुंगा कि भारत के प्रागैतिहासिक काल के निवासियों की सभ्यता बड़ी ही विकसित एवं समृद्ध थी। मेरी इस बात या तथ्य को पुष्ट करने के लिए मैं यहाँ पर कुछ वरिष्ठ इतिहासकार व अनुसंधानकर्ताओं का हवाला दे रहा हूँ । विख्यात इतिहासविद् डी.डी. कोसंबी के मतानुसार, ''प्रागैतिहानिक युग में निषाद प्रजा बसती थी, जो भारतीय संस्कृति की जन्मदात्री है। डी.डी. कोसंबी निषाद को ही भील मानते हैं। भारतीय सभ्यता के विकास में इन आदि भीलों का अनन्य योगदान रहा हैं। उन्होंने यहाँ नूतन पाषाणयुग की सभ्यता का विकास किया। इस संस्कृति ने ही प्रागैतिहासिक युग में भारतीय संस्कृति को चेतना दी है।''[१४] आधुनिक विद्वान प.ह. गुप्ता के अनुसार, ''प्राचीन भारत की सभ्यता व संस्कृति इस देश में आर्यो के साथ नहीं आई थी, द्रविड या आर्यों से पूर्ववर्ती सभ्यता व संस्कृति (मुंडा, निषाद संस्कृति) आक्रान्ताओं (आर्यों) की सभ्यता व संस्कृति से उच्च थी।''[१५] डॉ. एन. चंद्रप्पा के अनुसार, ''कोल एवं मुंडा लोग भारत के मूल निवासी हैं।''[१६] सुरेन्द्रप्रसाद सिन्हा के लेखन तथा इसी संबंध में एस. सी. राय (सन् १९१२), सुरेश सिन्हा (सन् १९१२) के विस्तृत अध्ययनों से यह निश्चित निष्कर्ष निकलता है कि ''भारतीय इतिहास का प्रागैतिहासिक काल वस्तुतः मुंडा इतिहास तथा संस्कृति का काल है।''[१७] इतिहासविद् पुरुषोत्तमलाल भार्गव के मतानुसार, ''अनेक विद्वानो के अनुसार भारत के सबसे प्राचीन निवासी प्रोटो आस्ट्रेलायड नस्ल के लोग थे जिनको प्रायः उनकी प्रमुख जाति के नाम पर कोल कहते हैं। ये लोग सभ्यता में अधिक न बढ़ सके और इनके वंशज आज भी भारत के मध्यपूर्वी और दक्षिणी भागों में कहीं-कहीं उसी असभ्य अथवा अर्धसभ्य अवस्था में पाये जाते हैं । इनमें कोलों के अतिरिक्त सबसे प्रसिद्ध भील, संताल और मुंडा हैं।''[१८] प्रसिद्ध विद्वान सी.एस. वैंकटाचार के अनुसार, ''भील भारत की महान मुंडा प्रजाति से हैं जो कि द्रविड़ों से पूर्व भारत के मूल निवासी हैं।''[१९] प्रसिद्ध विद्वान डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या लिखते हैं, ''आर्य जब भारत आए तो भारतीय धरती पर सर्वप्रथम उनका संपर्क भारत की मूल निवासी तीन जातियों से हुआ। ये तीन जातियाँ थीं — १. निषाद, २. द्रविड़ और ३. किरात। उन्हीं तीन अनार्य जातियों से अनुलोम, प्रतिलोम विवाह द्वारा आर्य जाति में जातियों का सम्मिश्रण हुआ। इसी सम्मिश्रण का फल आधुनिक भारतीय समाज है। आर्य पहले इन मूल निवासियों को निषाद नाम से जानते थे। बाद-बाद में इनके नाम कोल भिल्ल भी पाए जाते हैं। शबर नाम भी मूलतः इन्हीं का था।''[२०] भीलों का अपना इतिहास और संस्कृति है जो एक प्रकार से अनूठी है और अगर कोई गहराई में घुसकर देखें तो भारतीय आर्य संस्कृति के पृष्ठाधार में इसके स्पष्ट दर्शन होते हैं। डॉ. नेमीचन्द्र जैन ने अपनी पुस्तक 'भील भाषा, साहित्य और संस्कृति' में लिखा है, ''पहले जिन्हें निषाद कहा जाता था वे ही प्रजाति मिश्रण के कारण भिल्ल कहलाये और बाद में

यही अभिधान लोक प्रसिद्ध हो गया । संस्कृत साहित्य में 'निषाद देश' और 'निषाद राष्ट्र' दोनों ही शब्दों के प्रयोग मिलते हैं।''[२१] डॉ. नेमीचन्द्र जैन भीलों के सम्बन्ध में लिखते हैं, ''संसार की अन्य जातियों ने जब संस्कृति और सभ्यता के नाम पर नेत्रोन्मिलन ही किया था, भीलों ने जिन्हें पौराणिक शब्दावली में निषाद या नाग और नृतात्विक शब्दावली में आस्ट्रिक या आग्नेय कहा जाता है, एक (सुव्यवस्थित) ऐसे राजतंत्र का विकास कर लिया था।''[२२]

नृवंशविज्ञान और भाषाविज्ञान के तजज्ञों ने नये संशोधन के माध्यम से यह निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया है कि भारत की प्राचीनतम आदिम जातियों में कुछ प्राक्-द्रविड़ी एवं आदि-ऑस्ट्रेलोइड जातियाँ हैं। इन आदि-आस्ट्रेलाइड जाति ने आदि-आग्नेय या 'निषाद' के रूप में भी प्रसिद्धि प्राप्त की है। रोबर्ट शेफर्ड ने दृढ़तापूर्वक 'निषादों को भीलों के पूर्वज माना हैं।''[23] प्रागैतिहासिक युग में निषाद प्रजा भारत में निवास करती थी, जो भारतीय संस्कृति की जन्मदात्री है । ख्यात पुरातत्वविद् डी.डी. कोसम्बी निषाद को ही भील मानते हैं । अतः प्रागैतिहासिक युग से ही एक विशेष सभ्यतावाले वेदों, महाभारत और पुराणों में निषाद या पुलिन्द के रूप में ख्यात भीलो की उपजातिर्यां देश के विभिन्न भागों में फैली हैं। गुणाढ्य के 'कथासरित्सागर' में 'भील' शब्द का सबसे प्रथम उल्लेख हुआ मिलता हैं। इससे पूर्व यह जाति संस्कृत साहित्य में निषाद के रूप में जानी जाती थी। ये निषाद ही आज के समय में आदिवासी हैं । डॉ. मजूमदार ने अपनी पुस्तक 'एन एडवान्स्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया में लिखा है कि ''निषाद स्पष्टतया अनार्य थे और भील ही थे।''[२४]

पूर्वोक्त तमाम इतिहासविदों, नृवंशविज्ञानी, भाषाविज्ञानी एवं विद्वद्जनों की स्थापनाओं के मद्देनज़र ''प्रागैतिहासिक भारत के मूल निवासी कौन थे ?'' इस प्रश्न का यह उत्तर दावे के साथ दिया जा सकता है कि कोल, मुंडा,शबर,निषाद इत्यादि आदिवासी थोक के पूर्वज ही वह सौभाग्यशाली लोग थे; जो न केवल वर्तमान महानतम भारतीय उपमहाद्वीप के आदिम निवासी थे, बल्कि देश के असली मालिक भी थे । आर्यो ने जब भारत पर आक्रमण कर कब्जा जमाना शुरू किया तब नाग, निषाद, शबर, पुलिन्द, दास. किरात, असुर, दानव, दैत्य, राक्षस, यक्ष इत्यादि नामों से मूल निवासी भारतीय अनार्यों को सम्बोधित किया करते थे। ये सभी निषादवेशी (प्रोटो आस्ट्रालाइडरेड्स) प्रजाति के मनुष्य हैं । भील प्रजाति के पूर्वज हैं। अतः इस देश पर आर्य आक्रमण एक सुप्रमाणित ऐतिहासिक तथ्य है ।

संदर्भ :

१. समाज मित्र-(आदिवासी अस्मिता विशेषांक) १९९८ संपा. रमीलाबहन परमार, पृष्ठ ९७
२. अरावली उद्घोष — संपा० बी०पी० वर्मा 'पथिक' — अंक-३६, पृष्ठ ३७
३. वही, अंक — ३६, पृष्ठ ४९
४. वही, अंक — ६८, पृष्ठ ७६
५. वही, अंक — ६१, पृष्ठ ५३
६. वही, अंक — ६८, पृष्ठ ७७
७. वही, अंक — ६१, पृष्ठ ५४
८. वही, अंक — ६१, पृष्ठ ५३
९. वही, अंक — ३६, पृष्ठ ५५
१०. वही, अंक — ३६, पृष्ठ ५४
११. भारत का इतिहास : श्रमण, ब्राह्मण संस्कृतियों का संघर्ष— भागीरथ, पृष्ठ ११५
१२. पहल ४७ — संपा. ज्ञानरंजन, पृष्ठ १६०
१३. आदिवासी समाज और शिक्षा-रामशरण जोशी, पृष्ठ ३
१४. युद्धरत आम आदमी — संपा० रमणिका गुप्ता, पृष्ठ १८९
१५. रामायण : एक नया दृष्टिकोण — प०ह० गुप्ता, पृष्ठ ११०
१६. आदिवासी लोक, भाग-२, संपा० रमणिका गुप्ता, पृष्ठ ११५
१७. वही, पृष्ठ, ११५
१८. प्राचीन भारत का इतिहास-पुरुषोत्तम लाल भार्गव, पृ. ३१
१९. भील देश, राज्य एवं ठिकाने — देवीलाल, पृष्ठ ३
२०. वही, पृष्ठ, ३
२१. वही, पृष्ठ, ३
२२. वही, पृष्ठ, २
२३. एन्थोग्राफी ऑफ एन्शिएन्ट इन्डिया- राबर्ट शेफर्ड, प.२१
२४. भील देश, राज्य एवं ठिकाने — देवीलाल, पृष्ठ, ४

વિચાર પ્રધાન કવિતા : બ.ક.ઠાકોર

– પ્રો.ડૉ. શંકરભાઈ વી. પ્રજાપતિ

પ્રસ્તાવના :

'પુષ્કળ કવિતા માત્ર પોચટ આંસુ સારતી' સંગીત અને ઊર્મીતત્ત્વના અતિરેકથી કરેલા વિધાન પછી "હું તો વિચાર પ્રધાન કવિતાને કવિતા સૃષ્ટિમાં દ્વિજોત્તમ જાતિની માનું છું ને ?" એમ બળવંતરાયે ૧૯30માં કહ્યું તો ૧૯૪૩માં 'વિચાર પ્રાધાન્ય'નો ધ્વજ ફરકાવતાં કહ્યું;" ભાઈઓ, તમે પોતે જેને જેને ઉત્તમ કવિતા ગણતા હો તે રજૂ કરી દ્યો. એ દરેક દાખલા વિષે હું સહેલાઈથી બતાવી આપીશ કે કાં તો એ ઉત્તમ નથી, કાં તો એ વિચારપ્રધાન છે, કલાની સરજત છે, માત્ર શબ્દોની ખડભડભડ કે તાલ કે હીંચની રમત નથી." (નવીન કવિતા વિશે વ્યાખ્યાનો).

સ્વતંત્ર, અરૂઢ, ગતિશીલ અને અજ્ઞેયવાદી વિચારક બળવંતરાય પૂર્વે કાવ્યમાં બુદ્ધિબળની અનિવાર્યતા દર્શાવતાં 'જૂનું ગદ્ય'માં નર્મદે કહ્યું છે કે "કવિની મ્હોટાઈ, તેના વિચાર ઉપર આધાર રાખે છે, ભાષા ઉપર નહીં." નર્મદે પણ અર્થગૌરવને પ્રાધાન્ય આપ્યું હતું . તો નવલરામે નિર્દેશ કર્યો છે કે શબ્દનો ધ્વનિ એ કવિતા નથી, પણ રાગ છે; કવિતા તો અર્થમાં રહેલી છે." અંગ્રેજી કવિતાના સંપર્કના કારણે મનન, ચિંતન-રસિત વિચારણાપૂર્ણ કવિતાનો પ્રારંભ મણીલાલ દ્વારા થઈ ચૂક્યો હતો, પરંતુ બળવંતરાયમાં આ તત્ત્વ વિશેષ અને નોખી રીતે પાંગરે છે. બ્લેન્ક વર્સ અને ન્હાના-લાલની ડોલનશૈલી (અછાંદસ)ને પણ ખપમાં લઈ વિચાર પ્રધાન કવિતા માટે અમૂલ્ય દિશા ચિંધી આપે છે. ઉમાશંકર જોશી એટલે જ તો કહે છે કે, "અદ્યતન ગુજરાતી કવિતા કથયિતવ્ય પરત્વે ગાંધીજી અને આયોજન પરત્વે ઠાકોર એમ બે ભિન્ન-ભિન્ન પ્રકૃતિના માણસોના ખભે ચડીને જાય છે." ગાંધીયુગમાં ગુજરાતી કવિતા અર્થઘન, વિચારપ્રધાન, અગેયતા, પ્રવાહીપંક્તિ રચના, પૃથ્વી છંદની તોડફોડરૂપી પ્રયોગથી આગળ વધે છે.

● વિચાર પ્રધાન કવિતાનાં ઘડતર-પ્રેરક બળોઃ

● યુરોપિય બુદ્ધિવાદ :

બળવંતરાય સ્વતંત્ર, ગતિશીલ, અરૂઢ અને અજ્ઞેયવાદી વિચારક છે. કવિ કાન્તના પરમ મિત્ર બળવંતરાય આસ્તિક પણ નથી તો નાસ્તિક પણ નથી. ખુલ્લા મને વિચારનાર વિચારક છે. છે. તેમને ૧૯મી સદીના બુદ્ધિવાદમાં અને પ્રાચીન યુનાની ફિલસુફ ગુરુ-શિષ્ય પ્લેટો-એરિસ્ટોટલના જીવન અને કાર્ય દર્શન; જેમાં ગ્રીસના સર્જકો અને ચિંતકોએ માનવભાવોને તીવ્ર અનુભવ કર્યો હોવા છતાં, બુદ્ધિના નિયંત્રણવાળું જીવન દર્શન વિકાસાવ્યું હતું. ભારતીય સંસ્કૃતિમાં પણ ભક્તિના નિયંત્રણવાળું જીવન દર્શન વિકસાવ્યું હતું. ભારતીય સંસ્કૃતિમાં પણ ભક્તિના ભાવાવેશમાં શંકરાચાર્યે જ્ઞાન વિવેકને કેન્દ્રમાં મૂક્યો છે તેમ બળવંતરાય પણ આવેગ, આવેશ અને લાગણીનો તીવ્ર અનુભવ કરતા રહ્યા હોવા છતાં બુદ્ધિપ્રધાન દર્શનની હિમાયત કરતા રહ્યા છે.

● ગુજરાતી કવિતામાં લાગણીનો અતિરેક :

બળવંતરાય લાગણીનું મૂલ્ય સમજતા અને સ્વીકારતા હતા, 'બીજાં હૃદયો સાથે સમભાવી આર્દ્રતા એ તો માણસ જાતનું ભૂષણ છે.' તેને ઉત્તમ ગણતા. પરંતુ ગુજરાતી પ્રજામાં ઊર્મિલતા-લગણીવશતા જરા જરામાં દયા ખાવાની, દયાળુ દેખાવાની, રોઈ પડવાની પોચટતા જેવી દુર્બળ વેવલી ઊર્મિલતાને નબળાઈ ગણતા. અને કહેતા કે; "રાગતાનમાં દિલડું નાચી રહેતાં વિચાર પ્રવૃત્તિ પ્રવર્તે શાની ?" કહી વ્યક્તિ, સંપ્રદાય કે સંસ્થાપૂજા જેવી કવિતાને ઉતરતી કોટીની કવિતા માનતા. તેઓ જીવનદષ્ટિમાં રહેલા બુદ્ધિપ્રાધાન્યના આગ્રહી હતા.

● ગુજરાતી કવિતામાં ઊર્મિનો અતિરેક :

૧૫મા ૧૬મા સૈકાથી માંડીને અંગ્રેજી-ગુજરાતી

કવિતામાં લાગણી, ઊર્મિ, ચિદ્રસ, હૃદય પ્રવૃત્તિ અને સ્થિતિ, ઊરનાં આંદોલનો અને વિકારો, ક્ષોભ, જુસ્સો અને રચીગ્રાહ (sentiment) શ્રોતા અને વાંચનારના હૈયા ઉપર વધારે છવાયાં હતાં.'' ઊર્મિપ્રધાન હોય તે જ કવિતા'' એવા અર્ધસત્યોનો ભ્રમ ફેલાયેલો હતો. નર્મદથી નરસિંહરાવ સુધી આત્મલક્ષી રાગધ્વનિ કાવ્યને જ શ્રેષ્ઠ ગણાવી, ઊર્મિ કે ચિત્તક્ષોભને કવિતાના પ્રાણતત્ત્વ તરીકે પ્રતિપાદિત કર્યુ હતુ. કેટલીક કવિતાને બાદ કરતાં મોટે ભાગે કલાપીની કવિતા ઊર્મિલતામાં તથા ન્હાનાલાલની કવિતા રંગદર્શી હવાઈ ભાવના-ઓના રમણીય પણ ધૂંધળા ધૂમ્મસથી છવાયેલી રહી. બળવંતરાયને નરસિંહરાવની કવિતામાં પણ વિચારની ખોટ લાગી. લલિતની કવિતામાં ગેયતા-ગીત-માધુર્યનો અતિરેક વધ્યાં. કલાપી ન્હાનાલાલના અનુકરણમાં ઊર્મિમાંદ્ય એવી, રસાનુભવ નહીં પણ રસાભાસ કરનારી રચનાઓ વધી. એટલે આનંદશંકરે વેદાંતી તત્ત્વજ્ઞાનની ભૂમિકા ઉપરથી શાંતિ-સ્વસ્થતા અને સૌમ્યતાપૂર્વકનો પ્રારંભ કર્યો, તો બીજી બાજુ બળવંતરાયે બુદ્ધિવાદની ભૂમિકાએ પ્રતિકારની શરૂઆત કરી.

● ઊર્મિતત્ત્વનો સ્વીકાર, ઊર્મિલતાનો નકાર :

બળવંતરાયે ૧૯૨૫માં કવિતામાં આત્માને સ્થાને દર્શન હોવું જોઈએ એમ કહ્યું પરંતુ ૧૯૨૮માં લિરિકમાં એમણે સ્પષ્ટ કર્યુ કે ''કવિતામાં ઊર્મિતત્ત્વ હોવું જોઈએ; ઊર્મિ શૂન્ય તે કવિતા નહીં, કવિતા હૃદયનો વ્યાપાર અને હૃદયને સ્પર્શવાની શક્તિવાળી હોવી જોઈએ આની કોઈ ના પાડતું નથી પરંતુ ઊર્મિવત હોવું કે ઊર્મિમય કે ઊર્મિપ્રધાન હોવું એ બે વચ્ચે ઘણો ફેર છે.'' ઊર્મિવત્તા ઇષ્ટ છે પણ ઊર્મિમયતા કે ઊર્મિપ્રધાનતા બળવંતરાયને ઇષ્ટ નથી. તેઓ મહાકાવ્યમાં 'ઉદાત્ત ભાવો' વિશે ''ગાંભીર્યગૌરવ સારી પેઠે હોય અને કથા લાંબી સંકુલ હોય તો તેમાં ઉદાત્ત ભાવો કલા વડે ગૂંથાતાં મહાકાવ્ય બને છે.'' પણ કથાવસ્તુ લાંબુ (દીર્ઘ) હોય ઉદાત્ત ભાવો વિરલ અને સામાન્ય કોટિથી બહુ ઊંચા કે સૂક્ષ્મ નહી એવા જ હોય તો માત્ર આખ્યાન કાવ્ય જ બની રહે છે.' નરસિંહ મહેતા અને મીરાંનાં કોઈ કોઈ ઊર્મિકાવ્યો વિશે આપણે એક અવાજે સ્વીકારીશું કે એ 'ઈન્સ્પાયર્ડ' ત્રીજા નેત્રની પ્રસાદી છે. સંયમ વિનાનો ઊર્મિવિલાસ કવિતા લેખે ખપવા ન માંડે એ માટે પ્રમાણભાન અને ઔચિત્ય વિવેક રખાવનાર બુદ્ધિ-તત્ત્વની એમણે હિમાયત કરી અને વિચાર પ્રધાન કવિતાની ઝૂંબેશ આદરી. ટૂંકમાં લિરિકલ એટલે ઊર્મિવત્, ઊર્મિપ્રધાન નહિ. કવિતા ઊર્મિવત્ તો હોવી જ જોઈએ,પરંતુ ''ઊર્મિપ્રધાન એ જ કવિતા'' એવો મત તેમને ગ્રાહ્ય નથી.

● વિચાર પ્રધાન કવિતાનો આરંભ :

ઉમાશંકર જોશીએ માર્મિક નિર્દેશ કરતાં કહ્યું હતું કે, સર્જક વિવેચક હોય અને એ સર્જક કોઈ નવી શાળા સ્થાપનાર હોય તો એ વ્યૂહ રચવા પ્રેરાય પણ ખરો. આવી નવીશાળા સ્થાપનાર અને વ્યૂહ રચનારા વિવેચક તરીકે તેમણે બળવંતરાયનો દાખલો આપ્યો હતો. બળવંતરાયની વિચાર પ્રધાન સંદર્ભમાં કવિતાના 'હિન્દી સાહિત્યનો ઈતિહાસ' નામના પુસ્તકના પ્રવેશક (૧૯૩૦) અનુસાર હિન્દી અને ઉર્દૂ કવિતાના સંદર્ભમાં 'કવિતા છે વિચાર પ્રવાહ' એવું બળવંતરાયનું મંતવ્ય સકારણ સ્પષ્ટ બને છે. આ વિચાર તર્કકઠોર શુષ્ક નહિ પણ 'લાગણીરક્ત અને 'કલ્પનામય' હોવો જોઈએ. આપણા દેશની કવિતાના સૈકાઓના ઇતિહાસ સામે સ્થિર નજર રાખીને વિચારના અંશ ઉપર બને તેટલો ભાર દેવો અત્યંત આવશ્યક માન્યો છે. એટલે ૧૯૩૧માં 'આપણી કવિતા સમૃદ્ધિ'નો પ્રવેશક લખતાં કરી દીધું; ''હું તો વિચાર પ્રધાન કવિતાને કવિતાસૃષ્ટિમાં દ્વિજોત્તમ જ્ઞાતિની માનું છુ ને?' તે પછી ૧૯૪૩માં શરૂઆત કરી દીધી.

બળવંતરાય કવિતામાં દર્શનની વાત કરી મનભર

વ્યાપક તલસ્પર્શી દર્શનને સાહિત્યના અમરઆત્મા તરીકે ઓળખાવે છે. માત્ર કથી નાખવાથી કવિતા બનતી નથી, પરંતુ form અને mannerમાં, ઉક્તિમાં તે નથી એટલું ઉક્તિના લીલા પ્રકારમાં તેમજ સુંદરતા ઉપજાવનારી સર્ગશક્તિમાં છે. જીવન, વિચાર અને સર્ગશક્તિના ત્રેવડા ઘર્ષણ મિશ્રણથી ઊંચી કલાકૃતિનું નિર્માણ થાય છે. આમ બળવંતરાયે વિચાર પ્રધાન કવિતાનો કેટલીય મથામણો પછી આરંભ કરી દીધો.

● બળવંતરાયનું કવિતામાં વિચારનું સ્વરૂપ :

અર્વાચીન કવિતામાં સુન્દરમે 'કાન્તની કવિતાને આપણે અર્વાચીન કવિતામાં કળાના 'વસંતવિજય' રૂપે વર્ણવી, ન્હાનાલાલની કવિતાને કળાના 'વસંતોત્સવ' રૂપે વર્ણવી તો બળવંતરાય ઠાકોરની કવિતાને તેટલા જ ઔચિત્યથી કળાના ઉર્ધ્વ 'આરોહણ' રૂપે વર્ણવી શકાય', તેમ કહ્યું છે. ૧૯૧૭માં 'ભણકાર'ના આમુખમાં એવું કહે છે કે, ''વિચારોને જ એમાં (એટલે કે ગદ્યમાં) પ્રધાનપણે ઉચ્ચારવાના છે'' તેમ કહે છે, તો બીજી તરફ 'કવિતા છે વિચાર-પ્રવાહ' કવિતાનો આત્મા વિચાર પ્રવાહ છે તેમ કહે છે. તો તે વિચારનું સ્વરૂપ કેવું હોવું જોઈએ તે વિશે તેમનો મત જાણીએ.

તેઓ શબ્દને કાવ્યનું ઉપાદાન કહી તેના બે ગુણ અવાજ(નાદ) અને અર્થમાંથી સમકાલીન કવિતાઓની ગેયરચનામાં તેમણે નાદના માધુર્ય પર વધારે ધ્યાન કેન્દ્રિત કર્યુ છે તેમ માને છે અને બુદ્ધિ પ્રવૃત્તિમાં 'અર્થ'ને માને છે. તેનું સંગીતથી ભિન્ન માધુર્ય છે તે મુદ્દા ઉપર ભાર મૂકતાં કહે છે કે, ''કવિતામાં માધુર્ય જોઈએ, કોણ ના કહે છે, પણ માધુર્ય જ હોય, તેવા જોડકણાંને બુદ્ધિ શું પોંખે!'' તેમના મતે ''કવિતાનું વાહન માત્ર સૂર નથી, માત્ર વર્ણીઓ નથી, સાર્થ શબ્દો છે, કવિતા માત્ર સંગીત નથી. બુદ્ધિપ્રવૃત્તિ છે અને માત્ર પદાવલી નાવિન્યે એ ના બને, અર્થની નવીનતા અને મૌલિકતા પણ કવિતામાં જોઈએ. કેટલાંક ભજનોમાં એક ઉપર એક દૃષ્ટાંતો ખડકાયાં હોય છે તેમાં બુદ્ધિ બિચારી ચકડોળ કે ઘાણીની જેમ ગોળ ગોળ ફેરા કરે, બીજુ તેમાં મળે જ નહિ; એટલે એવી રચનાઓ પણ ઊંચી કવિતા તો શી રીતે ગણાય ?''

૧૯૪૩માં ''નવીન કવિતા વિશે વ્યાખ્યાનો''માં વિચાર પ્રાધાન્યના પોતાના ખ્યાલને ફરી પાછો ફેર તપાસી જોયો છે. 'નવા પક્ષ ઈમેજિસ્ટ' નોંધ લેતા કવિ ડૉન (Donne)ની શૈલીમાંથી પ્રેરણા લેવા માટે નવા કવિવિવેચકોને સૂચન કરતાં કહે છે, એલિયટ અઢારમા સૈકાના અંગ્રેજ કવિ ડૉન (Donne)ની ફિલસૂફીપ્રચૂર શૈલીનો પ્રશંસક છે. બળવંતરાય ડૉન અને તેના જેવા કવિઓના મંડળને The Intellectuals – વિચારધન કવિઓ તરીકે ઓળખાવી અંગ્રેજી કવિતાની વિચારણામાં એલિયટની વિચારણાને મહત્ત્વની ગણે છે. ટૂંકમાં બ.ક. ઠાકોરના મતે કવિતામાં આવતા વિચારો કોઈ તાત્ત્વિક કે સાંપ્રદાયિ સ્વરૂપના ન હોય, શુષ્ક તર્કસરણીની નીપજરૂપ નર્યા ટુકડા ન હોય, તે રસ સંવેદનાની એક મૂલ્યવાન સામગ્રીરૂપે આવે છે. વિચારો લાગણીરૂપ-અનુભવરૂપ બની રહે તો કાવ્ય સિદ્ધ થાય છે. આ કવિચિત્ત વિભિન્ન અનુભવોને એકતત્વ અર્પે છે. એલિયટના મત પ્રમાણે આપણી સંસ્કૃતિ અતિસંકુલ બનતી જાય છે. સમર્થ કવિએ પોતાની ચેતનાને વધુને વધુ ગ્રહિષ્ણુ બનાવવી રહી. વિવિધ પ્રકારના અનુભવરૂપ બની રહેલા વિચારોને એકત્વ આપી એક નવી સમગ્રતાનું સર્જન કવિએ કરવાનું છે. ડૉન વિષયક એલિયટની આ પ્રશંસાનો બળવંતરાય અછડતો ઉલ્લેખ કરે છે અને કૃતિને ઉચ્ચીકરણ, સમૃદ્ધીકરણ, તેજસ્વીકરણ અર્પવાની તે વિચારપ્રધાન વાત કરે છે. આમ બળવંતરાય પરંપરાથી ઉફરા જઈ આત્માની કલા, રસ, કલ્પના જેવા સંકેતોને છોડી નિજત્વની રીતે વિચારપ્રધાન કવિતાના વલણને વળગી રહે છે. કાલિદાસ જેવા કવિમાં ઊર્મિ અને બુદ્ધિના સુયોગને તેઓ સ્વીકારે પણ છે. આમ તે કવિતામાં વિચારના સ્વરૂપ વિશે મત ધરાવે છે.

● કવિતા અને છંદ શુદ્ધ (અગેય) પદ્ય (Blank Verse):

''હું પદ્યરચનામાં ઘણી છૂટ લઉં છું. કવિતા નિયમોને માટે નથી, નિયમો કવિતાને માટે જ હોઈ શકે એ સૂત્રનો યાવદાયુ અને બંડખોરોની હારમાં ઊભનારો હિમાયતી છું. ગુજરાતી પદ્યરચનાને ચોતરફ ખીલવવા અને જડ બંધનોમાંથી વિમુક્ત કરવાને યથાશક્તિ મથું છું.'' (કવિતા શિક્ષણ). તો 'ભણકારમાં' કવિ કહે છે.

''શબ્દાર્થે કવિતા, ત્વહીં શબ્દદેહે અર્થ દેહી વસે,
રૂડો દેહ ય તુચ્છ, સુંદર ન જો તે માહ્યાં દેહી લસે.''

'કાવ્યમાં ઠાકોરનો શબ્દાર્થવિવેક' લેખમાં ડૉ. જયંત પાઠક તેમના સૂક્ષ્મ શબ્દાર્થવિવેકની વાત કરે છે. બ.ક. ઠાકોરનું પ્રિય સૂત્ર 'નિશાનચૂક માફ, ન કદીય નીચું નિશાન' ઉચ્ચારીને ઉચ્ચનેમ વ્યક્ત કરી, મિલ્ટનના 'પેરેડાઈઝ લોસ્ટ' જેવી કોઈ મહાકાવ્ય રચના કરવાનું નિશાન તાક્યું હતું. પણ સફળ ન થયા. શરૂઆતમાં પરમમિત્ર કાન્તની કવિતાથી પ્રભાવિત થઈ 'તેમના જેવી કવિતા લખવાનાં ઓરતા, પણ તેમનામાં જાગેલા એવું એમની ડાયરીની તૂટક નોંધો પરથી તૂટક નોંધો પરથી અણસાર મળે છે'. પરન્તુ એવું કાવ્ય રચવા માટે પ્રવાહી (Blank Verse) શોધવાની જરૂર હતી, કારણ કે, ગદ્યમાં એવું કોઈ સાધન ન હતું. ન્હાનાલાલની જેમ છંદનો ત્યાગ કરવા પણ ઈચ્છતા નથી, કારણ કે તે પદ્યને આવશ્યક માને છે; એટલે પદ્ય (નમનીય) (elastic) અને વક્તવ્યના દોરનું સતત વહન કરે તેવું જોઈએ. તેના માટે વિવિધ છંદની ક્ષમતા ચકાસતાં માત્રામેળ કરતાં અક્ષરમેળ છંદોમાં તેની વિશેષ પ્રતીતિ થઈ. વંશ અને ઉપજાતિનો પ્રયોગ ૧૯૮૮માં કરેલો તે ખપમાં લાગ્યું.

ચાર મહીના સુધી ભાંગફોડ કર્યા પછી તા. ૭-૫-૧૯૯૨ના રોજ પોતે પ્રવાહી અને અગેય પૃથ્વી છંદનો પ્રથમ પહેલો પ્રયોગ કર્યાનું પ્રો. ઠાકોરે હિન્દીમાં નોધ્યું છે. પણ તે રચનાને પ્રસિદ્ધ ન કરવી એવી નોંધ ૧૯૧૬ અને ૧૯૨૩માં પણ છે.

બળવંતરાયની કાવ્યવિભાવનામાં વિચારપ્રધાન કવિતાની જિકર ધ્યાન ખેંચે છે. ન્હાનાલાલના પ્રભાવથી ''સ્વોર્મિના લોલક'' રૂપ બનેલી કવિતાના પ્રતિકાર રૂપે વિચારના અંગ ઉપર ઠોકોરે ભાર મૂક્યો. આ રીતે કવિતાના પ્રતિકાર રૂપે વિચારના અંગ ઉપર ઠાકોરે ભાર મૂક્યો. આ રીતે કવિતાના બહિરંગ પરત્વે અગેય પદ્ય રચનાનો સિદ્ધાંત અને પ્રયોગ ઠાકોરનું ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ મહત્ત્વનું પ્રસ્થાન છે. પૃથ્વી છંદ, યતિભંગ, શ્રુતિભંગ તથા શ્લોકભંગ વિષયક તેમના મતને જોઈએ. (કેટલાક સાહિત્યિક વિવાદો– ધીરુભાઈ ઠાકર.)

૧. કવિતા એટલે અગેય પણ મધુર અને નિયંત્રિત રીતે સળંગ વહેતી પદ્યરચના. સંગીત અને કવિતા તત્ત્વતઃ ભિન્ન કળાઓ છે. સંગીતમાધુર્ય તાલમેળથી સધાય છે; વાણિમાધુર્ય તેનાથી ભિન્ન એવી શુદ્ધ અગેય પદ્યરચના વડે સધાય છે. અને એ જ ખરું કવિતામાધુર્ય છે. અર્થ અને ભાવના આવરોહ એ જ કવિતા માધુર્યના આરોહ-અવરોહ છે – સંગીત કાવ્યમાં પણ.

૨. આપણે ત્યાં પદો, દેશીઓ, ગરબીઓ વગેરે માત્રામેળ છંદો અને શાલિની, વસન્તતિલકા, શિખરિણી, શાર્દૂલવિક્રીડિત, સ્રગ્ધરા જેવા અક્ષરમેળ વૃત્તોમાં ગુરુ કે લઘુ બંને પ્રકારના સ્વરો એટલી સંખ્યામાં સાથે ખડકાયેલા હોય છે કે બંને પ્રકારના છંદોમાં યતિસ્થાનો આવશ્યક બને છે. પરિણામે આ વૃત્તો ગેય-સુગેય છે. પૃથ્વી છંદનું માપ તપાસીશું તો જણાશે કે એની પંક્તિ ગેય હોવા છતાં સુગેય નથી. અવશ્યમેવ ગાવી પડે તેવી નથી. એની સત્તર શ્રુતિની બનેલી પંક્તિમાં આઠમી શ્રુતિએ યતિ આવે છે, પણ તેમાં લઘુગુરુના સાથેલાગા ખડકલાને અભાવે આવશ્યક ગણવું પડે તેવું યતિસ્થાન નથી,

૩. અર્થ અને ભાવના પ્રવાહને પદે પદે ઝીલે અને

વલણે વલણે યથોચિત વળે, અર્થપ્રવાહને સંવાદી રહે, એવો પદ્યપ્રવાહ લાંબીટૂંકી સર્વ કવિતાને માટે આવશ્યક છે. આવો પદ્યપ્રવાહ અગેય રચનામાં જ શક્ય છે. પ્રવાહી રચનામાં યતિસ્વાતંત્ર્ય સ્વીકારવું જરૂરી છે. અર્થના વલણે વળતી આવી યતિરચના શક્ય છે. પૃથ્વી છંદમાં સગવડ એ છે કે તેમાં અર્થાનુસાર ગમે તે શ્રુતિ પર યતિ આવી શકે છે.

૪. અંગ્રેજીનાજેવી મહાવાક્યની રચના ગુજરાતીમાં ઉતારીને પદ્યને પ્રવાહી બનાવવાના પ્રયોગો થયા છે. ગો.મા. ત્રિપાઠીનો કટાવ અને મનહરરામનો રામછંદ આ પ્રકારના પ્રયોગો છે. (પ્રો. ઠાકોરે અગિયાર લીટીનું મહાવાક્ય 'આરોહણ' કાવ્યમાં ગુલબંકી છંદમાં ઉતાર્યું છે) આમાં યતિઓ અને વાક્યના વિરામચિહ્ન બને ત્યાં સુધી અકબીજાનાં સંવાદી રહેવાં જોઈએ. વસન્તતિલકા, સ્રગ્ધરા, શાલિની, હરિણીમાં આવા પ્રયોગો થયા છે.

૫. અગેય પદ્ય રચનામાં શ્લોકબંધ અમુક જ પંક્તિઓનો હોય એવો નિયમ નથી. ગદ્યમાં જેમ વક્તવ્યના મુદ્દાનુસાર પરિચ્છેદ પાડવામાં આવે છે તેમ પદ્યમાં પણ થઈ શકે.

૬. મહાકાવ્ય બ્લેન્ક વર્સમાં જ શક્ય છે. અન્ત્યપ્રાસરહિતત્વ અને યતિસ્વાતંત્ર્ય બ્લેન્ક વર્સનું ખાસ લક્ષણ છે. ગુજરાતીમાં તેનો પર્યાય 'અછાંદસ' રચના નહીં, પણ 'અગેય' અથવા 'યતિસ્વાતંત્ર્યયુક્ત વિશિષ્ટ' પ્રવાહી રચના છે. બળવંતરાયે ભણકાર ધારા-૧માં આપેલ સળંગ અગેય પ્રવાહી પદ્યરચનાના ઉપર્યુક્ત ખ્યાલને કવિ શ્રી અરદેસર ફરામજી ખબરદાર નવ જોટલા મુદ્દા ટાંકી ચર્ચા માંડી વિરોધ કરે છે, તો નરસિંહરાવ દિવટિયા પણ ખબરદારની જેમ અગેય પદ્યરચના સાથે અસંમત રહ્યા. નરસિંહરાવ અને ન્હાનાલાલે છંદના ત્યાગની ટીકા કરી. તેમ છતાં નરસિંહરાવે ઠાકોરના 'ભણકાર'માંના કાવ્યોનું વિશિષ્ટ વિવેચન કર્યુ.

ત્રીજા ચોથા દાયકામાં ઉમાશંકર-સુન્દરમ્ અને અન્ય કવિઓ ઉપર બ.ક. ઠાકોરની સળંગ અગેય પ્રવાહી પદ્યરચનાની વિશેષ અસર થઈ. ઉમાશંકર જોશીએ ગાંધીયુગની કવિતા બ.ક. ઠાકોર અને ગાંધીના ખભે ચડી આગળ વધે છે તેવો સૂર વ્યક્ત કર્યો.

● **ઉપસંહાર :**

આમ બ.ક. ઠાકોરની વિચારપ્રધાન શૈલી બરછટ, વિગતપ્રધાન, ચિંતનપૂર્ણ અને અર્થૈકલક્ષી પદરચના બની તે આગળ જતાં વિદ્વાનોમાં પ્રિય થઈ પડી. નારિકેલપાકની એ શૈલીના આસ્વાદથી અધિકારી ભાવકોને મળતો બૌદ્ધિક આનંદ ઘણીવાર ઊંચીકોટિનો હોય છે. ૧૯૫૦ પછીના પ્રવાહમાં વિચારીએ તો કલ્પના, કાવ્યભાષા, વિચારસૃષ્ટિ પરત્વે નવીપેઢીની પ્રતીક પ્રધાન કવિતાના મુકાબલે બ.ક. ઠાકોરની કવિતા સુગમ, સંગીન અને પ્રાસાદિક લાગે છે. ગુજરાતી વિવેચન સાહિત્યમાં બળવંતરાય એક વિવેચક તરીકે મૂર્ધન્ય ઊંચીકોટિના પ્રખર વિવેચક ગણી શકાય.

સંદર્ભ પુસ્તક :

1. બળવંતરાય ઠાકોરની કાવ્યવિચારણા — ડૉ. અશ્વિન દેસાઈ
2. કેટલાક સાહિત્યિક વિવાદો — ધીરુભાઈ ઠાકર
3. અર્વાચીન કવિતા — સુન્દરમ્
4. અર્વાચીન ગુજરાતી સાહિત્યનો ઇતિહાસ — ધીરુભાઈ ઠાકર
5. ગુજરાતી સાહિત્ય કોશ, ખંડ-૨
6. ગુજરાતનાં ભાષાસાહિત્ય પર આધુનિકીકરણનો પ્રભાવ — વિજય શાસ્ત્રી
7. બ.ક. ઠાકોરની હિન્દી (ડાયરી) ભાગ-૧
8. આપણી કવિતા સમૃદ્ધિ — બ.ક. ઠાકોર
9. પ્રો. બ.ક. ઠાકોરની કવિતા — ડૉ. હર્ષદ મ. ત્રિવેદી

◆◆◆

પન્નાલાલ પટેલની 'વળામણાં'માં ગ્રામચેતના

—પ્રા. નીતિન ડી. પંડ્યા

પન્નાલાલ પટેલ અર્વાચીન ગુજરાતી સાહિત્યના એક ઉત્તમ નવલકથાકાર છે. તેમની પ્રથમ કૃતિ 'વળામણાં'નું સાહિત્ય સ્વરૂપ લઘુનવલ છે. ઇ.સ. ૧૯૪૦માં લખાયેલી ૧૪૫ પાનાંની આ કૃતિમાં ગ્રામીણ પરિવેશનું જીવંત ચિત્રણ કરવામાં આવ્યું છે.

ગામડાનું વર્ણન :

કૃતિના આરંભથી જ ગામડાનું વર્ણન જોવા મળે છે.

''શિયાળાની રાતના આઠેકનો સુમાર છે. ઠંઠીનો એટલો બધો ચમકારો છે કે સહુ કોઈ પોતપોતાના ઘેર જ, કોઈ ચોપાડમાં લાગતા તાપણાએ તો કોઈ ચૂલા આગળ બેસીને ટાઢ ઉડાડી રહ્યા છે. ખેતરે સૂવા જનારા પણ વેળાસર રવાના થઈ ગયા છે. ગામની સ્ત્રીઓ હજી પરવારી હોય તેમ નથી લાગતું. કોઈ-કોઈ મકાનમાં હાંલ્લાં ધોવાનો અવાજ ખરર ખરર આવે છે. આખા દિવસનાં થાક્યાં-પાક્યાં બાળકો માતાને બદલે તેના સાડલાની સોડ લઈ ગોદડીઓની નીચે ભરાઈ ઊંઘી ગયાં છે.''

'વળામણાં'માં નાનકડા કથાફલકમાં આખોય વૃત્તાંત પન્નાલાલે સુરેખ રીતે રજૂ કર્યો છે. જમના સુથારણની અબુધ વયની દીકરી ઝમકુના લગ્નજીવનની ગૂંચ અહીં કથાનું આરંભબિંદુ છે, પણ બીજી રીતે, મનોરમુખીના માનસપરિવર્તનની કથા અહીં રજૂ થઈ છે, અને કથાનું રહસ્ય પણ એમાંથી વિસ્તરે છે.

કૃતિની નાયિકા ઝમકુ છે. તેનું લગ્ન પ્રથમ તો બીજા ગામમાં એની જ જ્ઞાતિના યુવાન સાથે થયેલું. પણ સાસરિયાંના ત્રાસને લીધે તે સાસરામાં સમાઈ શકી નહિ, એટલે પિયર આવી રહી. અહીં ગામમાં નોકરી કરતા કોઈ બ્રાહ્મણ તલાટી સાથે તેનું મન લાગ્યું અને તેની સાથે તે ગામ છોડી નાસી ગઈ. પણ તેની સાથેય જ્ઞાતિભેદને કારણે ઝાઝું નભ્યું નહિ, એટલે ફરીથી પિયરમાં તે આશ્રય શોધતી આવી. દીકરીના આ જાતના વર્તનથી તેની મા ઘણી જ દુઃખી હતી, જ્યારે ઝમકુનાં ભાઈભાભી તો તેને ઘરમાં દાખલ કરવા જ ઇચ્છતાં નહોતાં. ગામમાં નીચાજોણું થયું હતું, એટલે એનાં કુટુંબીઓ આમ ભારે રોષ અને ચિંતામાં ગ્રસ્ત હતાં. જ્યારે અંબા સુથારણે એના દીકરા મોતી મારફત આ વિશે મનોર મુખીને સમાચાર પહોંચાડ્યા ત્યારે, એ અસહાય છોકરીના મામલામાંથી પોતે કોઈક રીતે લાભ ખાટી શકશે કે કેમ, એની વેતરણમાં પડી ગયા. ઘણી સિફતથી અને ચોરી છૂપીથી તેમણે એ છોડી પોતાના કબજામાં લીધી અને તેને લઈને અમદાવાદ પહોંચ્યા. ત્યાં કોક પરિચિતની સહાયથી એને ક્યાંક વેચી મારવાના પ્રયત્નો કર્યા, પણ એમાં ફાવ્યા નહિ. ગામ છોડ્યું ત્યારથી જ ઝમકુ ઘેર પાછા વળવાની રઢ લઈ રહી હતી. અમદાવાદમાં મુખીએ થોડી ધાકધમકીયે બતાવી, પણ તેથી તો તેની એ રઢ વધતી જ ગઈ અને એને લઈને મુખી પાછા વળ્યા. હકીકતમાં, મુગ્ધ નિર્દોષ છોડીના નિષ્પાપ વાણીવર્તનથી, અને વિશેષે તો પોતાને માટેના નિર્વ્યાજ સ્નેહભાવથી, મનોર મુખીનું વજ્રકઠોર હૈયું ક્યાંક ઊંડે ઊંડે, તેમને પોતાનેય ખબર ન પડે એ રીતે, ઓગળવા લાગ્યું હતું. ઝમકુની એ નિર્દોષ મુખાકૃતિમાં પહેલી વાર જ કદાચ તેના પિતૃહૃદયમાં એક પાવનકારી વાત્સલ્યઝરણું ફૂટી રહ્યું હતું. પણ વ્યવહારજડ મુખીએ અંદરના એ ભાવને રૂંધી નાખવાનો પ્રયત્ન જારી રાખ્યો. અંતે પાછા ફર્યા બાદ, અંબાના દીકરા મોતી જોડે, એની જ્ઞાતિની સામે પડીનેય ગોઠવી આપ્યું. અને પોતે જ કન્યાદાન પણ દીધું. પોતાની મૃત દીકરી નાથીનું જ એ 'ગુલાબના ગોટાવાળું ગવન,

મોગરાના ફૂલોવાળો ભાતીક ઘાઘરો અને સાચી ગજિયાણીનું કાપડું — એ સર્વ સૌભાગ્યશણગાર સજાવીને તેમણે ઝમકુને વળાવી. આ કથાનું શીર્ષક ‘વળામણાં’ એ રીતે સાર્થક ઠરે છે.

અહીં કથાતંતુ પાતળો છે, પણ એ નિમિત્તે પન્નાલાલે એક નાનકડું જનપદ જીવતું કરી દીધું છે. આમ તો, તેમની નજર સીધી કથાવિકાસ પર જ છે. પણ એ કથાવિકાસમાં જરૂરી બીજાં ગૌણ પાત્રોય અહીં સમુચિત સ્થાન પામ્યાં છે. ઝમકુનાં વળામણાં પ્રસંગે મુખી અને તેની પત્ની વચ્ચે કદાચ પ્રથમ વાર એકરાગિતા જન્મે છે. અને બંને પાત્રો અહીં ઘણાં ઉઠાવદાર બન્યાં છે. ઝમકુની મા જમના, તેનો ભાઈ બેચર અને તેની પત્ની — ત્રણેની નિજી માનસિક ભૂમિકા પન્નાલાલે સરસ નિભાવી છે. અંબા સુથારણનું પાત્ર એટલું જ અસરકારક રીતે આલેખાયું છે. ભૂતકાળમાં અંબા સુથારણ માટે મનોર મુખીએ જબરી આસક્તિ અનુભવી હશે. એ લાગણી-ભીના સંબંધનો તંતુ છેક વર્તમાન સુધી વિસ્તર્યો છે. અને આ કથામાં એની એક આછી નાજુક રેખા અંકાયેલી છે. બલકે, આ કથા જે રીતે પૂરી થાય છે તેમાં એ સંબંધતંતુ પણ જાણ્યેઅજાણ્યે નિર્ણાયક બની જાય છે. મંદિરના સાધુમહારાજનું પાત્ર પણ આગવી રીતે સ્પર્શી જાય છે. પણ, મનોર મુખીના હૃદયપરિવર્તનમાં નિમિત્ત બનતી ઝમકુ, એક બદનસીબ અબુધ કન્યા, કદાચ સૌથી વધુ હૃદયસ્પર્શી પાત્ર બન્યું છે. એનું મુગ્ધ, નિર્દોષ શિશુસહજ મન, એનું ભોળપણ, એની કાલીઘેલી વાણી અને એની સરલ સહજ લાગણી — એ બધું ભાવકને સીધું સ્પર્શી જાય છે. લગ્નજીવનમાં નિષ્ફળ, અને એ પછી ‘આડે’ માર્ગે ચઢી ગયેલી એ છોડી, સમાજની દૃષ્ટિએ ભલે અપરાધી હોય, અહીં તો એ એક નિર્દોષ નિષ્પાપ બાળમૂર્તિ રૂપે જ પ્રત્યક્ષ થાય છે. પોતાની મા, કુટુંબ અને વતન માટેની તેની રઢ પાછળ તેની બાલસહજ ઝંખના પ્રકટ થાય છે. તેને જરૂર છે કોઈક વિશ્વાસુ વ્યક્તિના આલંબનની અને એટલે જ વતન તરફ જતી બસના ઉતારુઓને તે ઊંડી આતુરતાથી નિહાળી રહે છે. અને અમદાવાદમાં — રોનકદાર બજાર, રંગબેરંગી વસ્તુઓ, વિશાળ માનવપ્રવાહ, મોટરગાડી — આમાંનું કશુંય તેને સ્પર્શતું નથી. પાછા વળવાનું નક્કી થતાં તેનો આત્મા કેવો પંખાળી ગતિએ વિહરતો થઈ જાય છે!

સમગ્ર કૃતિનો ગ્રામીણ પરિવેશ કૃતિને પ્રાદેશિક લઘુનવલ કહેવા પ્રેરે છે. અલબત્ત તેનો કેટલોક કથાભાગ અમદાવાદમાં સ્થાનાંકિત થયો છે. પરંતુ ત્યાં પણ કથાનો દોર અને પાત્રોની દૃષ્ટિ ગ્રામીણ પ્રકારનાં જ રહ્યાં છે. અમદાવાદમાં જે પાત્રો વચ્ચે વાણીવ્યવહાર અને કાર્યવ્યવહાર ચાલે છે તે પાત્રો મૂળે ગામડાનાં જ ઝમકુ, મનોરદા અને અમરસંગ છે. અમરસંગ ગામડામાંથી શહેરમાં ગયેલો, શહેરી બનેલો તેથી મિશ્રિત અને વિલક્ષણ વ્યક્તિત્વ ધરાવે છે.

શિયાળાની રાતે ગામડામાં જમી પરવારીને તાપણાથી તાપતા માણસો, સતત હોકો પીતા કે બીડીની આપલે કરતા મનોર મુખી અને બાવાજી વગેરે પાત્રો, નાતજાતનાં આકરાં બંધનો, સગપણો કરવામાં — તોડવામાં દાખવામાં આવતી ગેરવૃત્તિ. આ બધું જમના સુથારણ અને અંબા સુથારણના કુટુંબોના વ્યવહારમાં દૃષ્ટિગોચર થાય છે. ગામડાં ગામમાં કલંકિત બનેલી યુવતીને દૂરના શહેરોમાં ઠેકાણે પાડવી પડે તો તેનું સ્વજન ગ્રામજનોથી છૂપી રીતે જરૂર પડે મળવા જાય એ હકીકત જાણે કે સ્વીકૃત બનેલી છે. મનોર મુખી કહે છે — “આ અમારી નાતનાં મોંઘી ડોસી ડાકોરજી જવાને બહાને છોડીને મળી જ આવે છે ને ?” ઝમકુના વણસેલા લગ્નજીવન માટે ભય ન રાખવાનું કહેતા મુખી કહે છે તેમ આમાં કંઈ કહેવાપણુ છે જ નહિ, એક તો ભલી છે આ પૃથ્વી કે જે માણસોને હેંડવા દે છે. કૃતિની ગ્રામ-ચેતનાને બરાબર ઉઠાવ આપનાર બીજું મહત્ત્વનું અંગ સર્જકે પ્રયોજેલી વિશિષ્ટ ગ્રામીણ બોલી છે.

ઉત્તર ગુજરાતની આ બોલી સર્જક પોતે જ તે પ્રદેશના હોવાથી સહજ સૂઝથી પ્રયોજી શક્યા છે. કેટલાક શબ્દપ્રયોગો કે કહેવતો કે રૂઢિપ્રયોગના ઉપયોગો વિશેષ ધ્યાનપાત્ર અને લાક્ષણિક છે 'વેરવાઈ', 'દિવણિયા ઉપર' 'ચેંથરાનો વાઘ', 'ગાયના દાંત જેવા પેલા તલાટી' અને 'બહુ ડાહ્યું, બહુ ખરડાય' વગેરે. ભાષાસામગ્રી માટે ગ્રામીણ ઉપમા નોંધપાત્ર બની રહે છે. જાનપદી પાત્રોનું મનોગત સ્વાભાવિક રીતે ખુલ્લું થાય તે માટે, સંવાદો કે સ્વગતોક્તિઓમાં તળ બોલીનાં તત્ત્વો તેમણે વધુ મોકળાશથી ખપમાં લીધાં છે. પ્રાદેશિક જીવનનું પ્રાણવાન ચિત્ર આલેખવામાં અને તેનો જીવંત પરિવેશ રચવામાં, આ 'બોલી' ઘણી અસરકારક રહી છે. તેમની જીવંત સ્વાભાવિક અને વાસ્તવનિષ્ઠ ભાષાશૈલીને કારણે લોકવાસ્તવનો વધુ સઘન સંસ્પર્શ અનુભવાય છે. લોકબોલીનાં તત્ત્વોને આત્મસાત કરીને વિકસેલી પન્નાલાલની આગવી કથનશૈલી અહીં ઘણી અસરકારક રહી છે. કથન, વર્ણન, સંવાદ અને સ્વગતોક્તિ — દરેક સ્તરે લોકબોલીનાં જીવંત તત્ત્વો સક્રિય રહ્યાં છે. લોકસૃષ્ટિનું પન્નાલાલનું નિરીક્ષણ ઘણું બારીક છે એટલે સ્થળકાળ, દશ્યપટ કે પરિસ્થિતિના વર્ણનમાં ઘણી ચમત્કૃતિભરી વિગતો મળે છે. બીજી બાજું હૃદય વનના પ્રવાહો આલે-ખવામાં તેમણે ઊંડી સૂઝ બતાવી છે. પન્નાલાલના કથનવર્ણનમાં એક અવ્યાખ્યેય તત્ત્વ પડ્યું છે, જે લોકજીવનનું આગવું 'વાતાવરણ' રચી દે છે. આ તત્ત્વને સુંદરમે 'હવા' તરીકે ઓળખાવ્યું છે. ગામડાની વિશેષતા, સંસ્કૃતિ, રિવાજો અને માન્યતાઓનું પન્નાલાલ પટેલ 'વળામણાં'માં નિરૂપણ કરે છે. કૃતિને જે ભોંય સાંપડી છે એનો સર્જકને નખશિખ પરિચય છે. આથી જ આ કૃતિ એ ભોંયને જ અર્પણ થઈ છે. 'સુભાગ્ય લાધ્યાં વળી ઊભવાનાં, એ ભોમને તો વીસરી શકું શેં ?'

'વળામણાં'માં આલેખાયેલું લોકજીવનની વાસ્તવિકતાનું જટિલ ચિત્ર ધ્યાનપાત્ર છે. ગામડામાં વસતાં માનવીઓ, એના પ્રાકૃતિક પરિવેશ વચ્ચે જીવંતાં-ઝઝૂમતાં હોય છે. તળ ધરતીનાં માનવીઓ, તેમનાં સુખદુઃખ, પ્રેમ અને લગ્ન ગૂંચ, અને વેરઝેર, બધું ય એના જીવંત પરિવેશ વચ્ચે આલેખ્યું છે. આપણા પ્રાદેશિક જીવનના એક વિશિષ્ટ ખંડને જાણે કે એની આંટીઘૂટીઓ સમેત તેમણે ખડો કરી દીધો છે. જીવનની સંકુલ ગતિવિધિની તેમની પકડ એ રીતે ખૂબ જ નોંધપાત્ર બને છે. માનવી કંઈ એકાકી અને અલગ સત્તા નથી : વિશાળ લોકજીવનના તાણાવાણામાં તે એક અવિચ્છેદ્ય તંતુ છે. વ્યક્તિ તરીકે તેનું નાનું મોટું કાર્ય, તેની લાગણી, વિચારવલણ કે વર્તન અન્યને અસર કરે જ છે. કેટકેટલાં માનવીઓ, વ્યક્તિના ભાગ્યમાં નિર્ણાયક બળ બની જતાં હોય છે.

ગામજીવનમાં સ્વાભાવિક ક્રમમાં જે રીતે ઘટનાઓ બનતી રહે છે, તે જ રીતે તેમની કૃતિમાં વિસ્તાર થાય છે. ગામડાનાં માનવીઓના સુખદુઃખ, તેમના રાગદ્વેષ, વેરઝેર, કજિયાકંકાસ અને તેમની કુટિલ રીતિનીતિ, તેમનાં ઉલ્લાસ,આશાઅરમાન અને તેમની વિટંબણાઓ — બધું ય તેમની રગેરગમાં ઊતરી ચૂક્યું હતું. તેઓ જે પાત્રોની વાત લઈ બેઠા છે તે ધરતીની ધૂળમાંથી રચાયાં છે. ધરતીની સ્થૂળતા, પ્રાકૃતતા અને નક્કરતા તેમના અસ્તિત્વમાં ઊતરી આવ્યાં છે. ગામડાંની નાતોના કાવાદાવા, ખટપટ વગેરેના રાજકારણને એમાં વણી લે છે. ગામડાંનાં જીવનનો તાદશ ચિતાર આપતી આ કથા તે જીવનમાં રહેલી એબો તથા ઊણપો અને તેની જ સાથે તેમાં રહેલી શક્તિઓને જીવંત સુમેળ રૂપે આલેખે છે. જે જોયું છે તેને સરળતાથી આલેખવાની નિર્વ્યાજ કળા પણ પન્નાલાલમાં દેખાય છે.

આપણા કથાસાહિત્યમાં ગામડાંનાં પાત્રો અને પ્રસંગોનો સ્વીકાર પન્નાલાલ પહેલાં થઈ ચૂક્યો હતો.

રમણલાલ દેસાઈ, ઝવેરચંદ મેઘાણી જેવાની નવલ-કથાઓમાં અને દ્વિરેફ, ઉમાશંકર જોશી, સુંદરમ્ આદિની ટૂંકી વાર્તાઓમાં ગ્રામજીવનની કથાઓ રજૂ થઈ ચૂકી હતી. નિમ્ન વર્ગનાં કે દલિત-પીડિત વર્ગનાં માણસો અને તેમનાં સુખદુઃખ વિશે ય રજૂઆત થવા લાગી હતી. એ રીતે ગ્રામજીવનનું આલેખન, એ કંઈ પન્નાલાલનું નવપ્રસ્થાન નહોતું. પણ પન્નાલાલે પોતાના વતનના લોકજીવનને, એના જીવંત પ્રાદેશિક વાતાવરણ સમેત, રજૂ કર્યું. અને તેથી ય વિશેષ, માનવીય પરિસ્થિતિને એની અનેકવિધ જટિલતા અને સંકુલતા સાથે આલેખ્યું. લોકજીવનની કૂટ અને દુર્ભેદ્ય વાસ્તવિકકતાનું આટલું સઘન અને આટલું સ્પર્શક્ષમ ચિત્ર રમણલાલ અને મેઘાણીમાં તો નહોતું જ, પણ દ્વિરેફ, ઉમાશંકર આદિમાંય એ એટલા વ્યાપક રૂપમાં જોવા મળતું નથી. ગ્રામચેતનાને ઉજાગર કરતી 'વળામણાં' અને અન્ય પ્રાદેશિક નવલકથાઓને આધારે કહી શકાય કે પન્નાલાલની જાનપદી કથાઓમાં ગુજરાતી નવલકથાને એક નવું પરિમાણ મળ્યું છે.

સંદર્ભગ્રંથો :

- પટેલ, પન્નાલાલ : 'વળામણાં' અમદાવાદ, સાધના પ્રકાશન, પંદરમી આવૃત્તિ ૨૦૧૩
- કોઠારી, રમણલાલ : 'વળામણાં' : રસાવલોકન (૧) અવલોકન (૧૯૬૧) પૃ. ૭૪-૮૧, ફાર્બસ ગુજરાતી સભા ત્રૈમાસિક, ૧૭-૧, ૨
- દેસાઈ મગનભાઈ : 'વળામણાં' : વિવેકાંજલિ અમદાવાદ, ગૂજરાત વિદ્યાપીઠ, ૧૯૬૦, પૃ.૪૬-૪૮
- મહેતા, ભરત : 'વળામણાં' સંકેત-સભર રચના', 'કથામંથન' અમદાવાદ, પાર્શ્વ પ્રકાશન, ૧૯૯૩, પૃ.૧૧-૧૫
- પટેલ પ્રમોદકુમાર : ગુજરાતી ગ્રંથકાર શ્રેણી : શ્રેણી : ૩૪, 'પન્નાલાલ પટેલ' સંપાદક : રમણલાલ જોશી, અમદાવાદ. ગૂર્જર ગ્રંથ રત્ન કાર્યાલય, જુલાઈ ૨૦૧૧.

● ● ●

દીકરી વ્હાલનો દરિયો

દીકરી રૂડી વ્હાલનો દરિયો શીદને એને મારો
બે કૂળની એ આબરૂ રાખે કયાં એ સાપનો ભારો !

હાલરડે હિંચોળો એને વ્હાલાનાં ગીતો ગાઓ
આંગળી પકડી ઉછેરે એને વ્હાલાનાં ગીતો ગાઓ

આંખડી એની પ્રેમનો સાગર મુખ છે પૂનમચાંદો
લાકડી એ તો ઘરઆંગણાની એની ઘોરના ખોદો

કા'ન સરિખો સાહ્યબો શોધી રાધા કરી વળાવો
દીકરી કેરું દાન કરીને ભવનાં મેણાં ભાગો

જનક થઈને જીવન આપો જાનકીને ઉગારો
સ્નેહનાં સિંચન કરીને એનો જીવનબાગ ઉજાળો.

માવતર હવે બસ કરો, છે દીકરી ઉગરવાનો આરો
આજ ઘડી છે, સમજણ કેળવી ભ્રૂણ હત્યા અટકાવો.

પ્રા. એ.જી. ઠાકોર

મહાભારતનું સ્વરૂપ અને કથાવસ્તુ

****

— ડૉ. મનુકુમાર સુથાર

પ્રાસ્તાવિક

"પ્રસિદ્ધ મહાકાવ્યોમાંથી જો કોઈ એક કૃતિ પ્રજા-જીવન અને તેના વિચારોના ઘડતરમાં મહત્ત્વ-પૂર્ણ સાબિત થઈ હોય, જેની પરંપરા એક યા બીજી રીતે અદ્યાપિ સાતત્યપૂર્ણ હોય અને પ્રજા ઉપર અસર કરતી રહી હોય તો તે માત્ર મહાભારત છે, ભારતનું રાષ્ટ્રીય મહાકાવ્ય."

ભારતીય સમાજ ઉપર મહાભારતના પ્રભાવની વ્યાપકતા અને જીવંતતા અપરિમેય છે. અનાં પાત્ર, આખ્યાન અને એમાં પરોવેલાં જીવન-મૂલ્ય ભારતીય જનમાનસ ઉપર શતાબ્દિઓથી છવાયેલાં રહ્યાં છે. ભારતીય સમાજ પોતાની વિચારસરણી અને સંરચનામાં બહુલતાવાદી રહ્યો છે. સાંસ્કૃતિક ચેતના, એના આસ્થા કેન્દ્ર બહુઆયામી છે. છતાંય ભારતીય સમાજનાં વિભિન્ન ઘટકોએ મહાભારતના કથાતત્ત્વને જે રીતે આત્મસાત કર્યું છે તે આશ્ચર્યનો વિષય છે.

શ્રી ડી.ડી. હર્ષ મહાભારતનું ગૌરવ કરતાં કહે છે, **महाभारत भारतीय ऋतंभरा प्रज्ञा का सार्वकालिक ग्रन्थ सम्राट है जो मानवमात्र को अपने व्यक्तित्व एवं राष्ट्र के सम्यक् तथा सर्वाङ्गीण विकास हेतु नयी प्रेरणा, उमंग और दृष्टिप्रदान करने की सामर्थ्य से ओतप्रोत है।** વસ્તુતઃ મહાભારત એક એવું સાર્વકાલિક અને સાર્વભૌમ મહાકાવ્ય છે, જે જીવનનાં સઘળાં રૂપોની પવિત્રતાનું સાંગોપાંગ પ્રતિપાદન કરવાની સાથે સાથે એક વિશેષ દૃષ્ટિથી માનવ-જીવનની શ્રેષ્ઠતા અને પવિત્રતાનો ઉચ્ચત્તમ દાર્શનિક ઘોષ અને સાહિત્યિક ઉદ્‌ઘાટન કરે છે.

મહાભારતની મહાનતા અને અદ્‌ભુતતાનું એક કારણ છે, તેમાં રહેલી માનવીય વિષયોની વિવિધતા, આકારની વિશાળતા, પ્રતિપાદનની આદ્યન્ત અન્વિતિ અને રસમયતા, દર્શનની રોચક સમગ્રતા અને ગંભીરતા, શૈલીની પ્રાંજલતા અને સાહિત્યિક પ્રસાદમયતા, ભાવોની અભિવ્યક્તિની સંપૂર્ણતા ભવ્ય કલામયતા આદિની સમન્વિત કસોટી પર એની સાથે સ્પર્ધા કરનારી તુલનીય અન્ય કોઈ કલા કૃતિ નથી.[૪]

સંસ્કૃત સાહિત્યમાં નહિ, પરન્તુ વિશ્વ વાઙ્મયમાં પણ મહાભારતનું સર્વથા અનુપમેય સ્થાન રહ્યું છે. મહાભારત ભારતીય સાંસ્કૃતિક પરંપરાના ઉચ્ચત્તમ આદર્શોનો રત્નાકર છે તથા એમાં ચિત્રિત અને વિશ્લેષિત તેજસ્વી પાત્ર અહીંના જનસમુદાય માટે પ્રેરક, પથ-પ્રદર્શક અને અનુકરણીય બન્યાં છે. 'જેટલું સ્થાવર અને જગંમ ભારત- ભારતીય દૃષ્ટિકોણમાં આવી શકે તેમ હતું, તે સઘળુ મહાભારતમાં એકઠું થયું છે.'[૫]

મહાભારતમાં પાત્રોનું ચિત્રણએ મહાભારતની એક બહુ મોટી વિશેષતા છે. મહાભારતનાં અનેક પાત્રોનું માનવતાના શ્રેષ્ઠ ઉન્નાયક, મહાન મનોવિદ્ અને માનવની ગૌરવ ગરિમાના ક્રાન્તિકારી પ્રતિષ્ઠાપક વ્યાસજીએ પટુતા અને કૌશલપૂર્વક વર્ણન કર્યું છે. વ્યાસજીએ '**न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं किञ्चित्**' કહીને માનવને જ સર્વશ્રેષ્ઠ પ્રાણી ઘોષિત કર્યું છે. શ્રી દ્વારકાદાસ હર્ષે, આ સંદર્ભમાં મહાભારતને '**मानवीया नियति की चिन्ता करनेवाला महत्त्व का काव्य**' કહ્યું છે. મહાભારતનાં પાત્ર ચિત્રણમાં આ વાતનો અણસાર આપણને અવશ્ય જોવા મળે છે. મહાભારતમાં ચિત્રિત થયેલા પાત્રોનું પરિમાણ ખૂબ વિશાળ છે અને એનું ભાન આરંભથી આખર સુધી ક્ષણભર પણ ઓછું થતું નથી એવું દુર્ગા ભાગવતનું કહેવું છે.[૬] શ્રી વાસુદેવશરણ અગ્રવાલના મતે, મહાભારત કથાનો સહુથી રોચક અંશ એનાં દેવતુલ્ય (છતાંય માનવીય) પાત્રોનું ચરિત્ર ચિત્રણ છે. આ સઘળાં પાત્રો મહાન અને અભિભાવી હોવા છતાં પણ માનવીય છે. તે માનવના ધરાતલ ઉપર જીવનારાં છે, તેમ છતાંય સત્યનું સામર્થ્ય અને જીવનની અપ્રતિહત અભિવ્યક્તિની દૃષ્ટિએ એમનાં કર્મ અને

વિચાર અતિમાનવીય જેવાં લાગે છે. મહાભારતકારે નિઃસંદેહપણે એમનાં ચરિત્રની ઉદાત્ત અને દુર્બળ ભાવનાઓ તેના વાસ્તવિક રૂપમાં કહી છે.

અગ્નિનાં બે લક્ષણ - પ્રકાશ અને ગરમી છે. મહાભારતનાં પાત્રો બન્ને લક્ષણોને પ્રગટ કરે છે એવું શ્રી હર્ષનું માનવું છે. વિદુર, ધૃતરાષ્ટ્ર, દુર્યોધન, દુઃશાસન, શકુનિ શલ્ય, યુધિષ્ઠિર અને અન્ય ચાર પાંડવો અને મહાભારતનું સર્વશ્રેષ્ઠ ચરિત્ર સ્વયં શ્રીકૃષ્ણ — આ સહુષુરુષ પાત્રોની પોતપોતાની વિશિષ્ટતાઓ છે. આ ઉપરાંત મહાભારતમાં મુખ્યત્વે ત્રણ નારીઓની પીડાની અભિવ્યકિત થઇ છે. કુન્તી, ગાંધારી અને દ્રૌપદી આ સહુ પાત્રોની પોતાની વિશેષતાઓ, તેમની ઉદાત્ત અને દુર્બળ બાજુઓ સાથે મહાભારતમાં વ્યાસજી એ સંપૂર્ણ તટસ્થતાપૂર્વક આલેખી છે. શ્રી સુક્થનકરને મતે ભીષ્મ મહાભારતનું કેન્દ્રવર્તી પાત્ર છે - પૂર્ણતાની લગોલગ.

ધૃતરાષ્ટ્ર, દુર્યોધન અગ્નિ દ્વેષની આંચથી પ્રથમ પોતાને અને પછી બીજાને દઝાડે છે.ધર્મશીલ યુધિષ્ઠિર શીલનો શીળો પ્રકાશ પાથરવા મથે છે. એમ કરવામાં ક્યારેક આ અગ્નિ ભસ્માવૃત્ત બની નિષ્ક્રય પણ બની જાય છે. શ્રીકૃષ્ણ તો અગ્નિનું ઘનીભૂત સ્વરૂપ એવા સાક્ષાત્ ભાસ્કર છે તો વળી સાથે સાથે સુધાકિરણ વર્ષાવતા પ્રફુલ્લ અમીવર્ષણ ચંદ્રરાજ પણ ખરા. શેષ પાત્રોમાં પણ ઉષ્મા અને પ્રકાશ એમના સ્વભાવ છે. અનુરૂપ હોય તે પ્રમાણે વધતા ઓછા અનુપાતમાં મિશ્રિત થતા જોવા મળે છે. આ વિરાટ કાવ્યમાં ઘટનાના પ્રલંબ વિસ્તારમાં વિહરી રહેલાં અનેક પાત્રોની માવજત કવિએ ભારે કુશળતાપૂર્વક કરી છે.તેમના સ્વભાવ અને વર્તનમાં ભાગ્યેજ વિસંગતિ જોવા મળે છે. સ્વભાવથી વિરુદ્ધ વર્તન કરતું કોઈક પાત્ર ક્યારેક દેખાય તો પણ, એ તેના સ્વભાવમાં પહેલા કોઈ ગુપ્ત ભાવને જ પ્રકટ કરતું હશે. મનુષ્યના જટિલ વ્યક્તિત્વને સુરેખ ઉઠાવ આપી રેખાબદ્ધ કરવાનું કાર્ય તો ક્રાન્તદર્શી વ્યાસ જેવા મહાકવિ જ કરી શકે.'

શ્રી સુકથન કર મહાભારતનાં પાત્રો વિશે લખે છે, "The chief actors in the great Mahabharata drama are distinctly and consistently characterized. The Pandavas with the sing exception of Bhima is not ungenerous, though some what hotmoserate and burdened with an unshakable confidence in his herculean strength. The Kauravas on the other hand are described as enviction. Arjuma and Bhima, Bhisma, Vidura and Dhrtarastra, Drona and Sakuni, Draupadi and Gandhari remain the same in all characteristics onee chose of preserved, and become only clearer as the drama develops and reaches its natural denouement'.

યુધિષ્ઠિર આદિના ચરિત્રનાં લક્ષણોનું વર્ણન તેઓ આ પ્રમાણે કરે છે, "In Yudhisthira, we find charity, peace and self control, learning to wards weakness and ineptitude; in Duryodhana, determination combined with envy, hate, cruelty and unscrupulousnes, in Bhima recklessness and wild impetuosity in Arjuna dignity, chivalry and prudent heroism; in karna pride, arrogance and malignity, with a strength streak of generosity;in Dhritarastra pernicious weakness and complaisance;in sakuni and Duhsasana unmitigated wickedness and audacity;in vidura and Drona sense of justice and loyalty; in Bhisma nobility, benevolence, asceticism and detachment; in Draupadi gracious womanhood, stanch loyalty and purity of character."

આ રીતે મહાભારતના પ્રત્યેક પાત્રની પોત પોતાની વિશિષ્ટતાઓ છે. કોઈ પાત્ર માનવીયતા ઉચ્ચતમ શ્રૃંગને સ્વર્શે છે તો કોઈ નિમ્નતમ કક્ષાએ પણ ઉતરી જાય છે. એકલવ્ય, દ્રૌપદી, ભીષ્મ, અર્જુન, ગંધારી, કુન્તી જેવાં ચિરત્રો જીવન સંઘર્ષ સાથે જોડાયેલા એવા કલ્પાતીત સંદર્ભ છે જેમાં કલાત્મક ઉદ્ભાવના અજસ્ર સ્રોત છુપાયેલા છે.

મહાભારત વાંચતી વખતે વ્યાસની પાત્રચિત્રણની પદ્ધતિ વિષે ખ્યાલ આવતો ગયો. મહાભારતમાં પાત્રોનું મુખ્યત્વે ત્રણ રીતે ચિત્રણ થયેલું જોઈ શકાય છે. (૧) પાત્રોના સંવાદો વડે થતું પાત્રચિત્રણ (૨) વ્યાસજી દ્વારા થયેલી ઉક્તિઓ વડે થતું પાત્રચિત્રણ (૩) અન્ય પાત્રોએ કરેલાં વિધાનો ઉપરતી થતું પાત્ર ચિત્રણ. આ ઉપરાંત કોઈ ઘટના કે સંવાદનું વર્ણન કરતાં, પ્રાસ્તાવિક રીતે ભૂમિકા બાંધતાં, મહાભારતમાં 'उवाच'ની અંતર્ગત વ્યક્ત કરવામાં આવેલા અભિપ્રાયો વગેરેને આધારે પણ પાત્ર ચિત્રણ થયેલું જોવા મળે છે.

મહાભારતમાં અનેક સ્ત્રી પાત્રો છે. કુન્તી, ગંધારી, દ્રૌપદી, સુભદ્રા, ચિત્રાંગદા,ઉલૂપી, વિદુરા, સાવિત્રી, શકુન્તલા, દમયંતી વગેરે. પ્રત્યેક પાત્રની પોતાપોતની એક વિશિષ્ટ રેખા છે, વ્યથા-કતા છે. તેમાં કુન્તી અને ગાંધારી પુરુષ સમાજ સામે પોતાની એક ઓળખ ઉભી કરીને આદરને પાત્ર બન્યાં છે. તેમનું જીવન કારુણ્ય આપણને તેમના તરફ બલાત્ ખેંચી જાય છે. દુર્વાસાની સેવાના પુરસ્કારરૂપે મળેલા વરદાનથી કુતૂહલવશ અને તારુણ્યની ઝંખનાઓને આકાર આપવા જતાં એના જીવનમાં પ્રવેશ્યો કર્ણ અને તરત જ એનો પરિત્યાગ પણ કરવો પડ્યો. એ પરણીને હસ્તિનાપુર આવી ત્યાં પોતે ત્યજેલો પુત્ર નજર સમક્ષ હોવા છતાં, એને ન તો ગળે વળગાડી શકી ન ત એના જન્મને લઈને થતા એના અપમાનથી ઉગારી શકી અને પોતે અંદરોઅંદર પ્રજળતી રહી. ગાંધારી પણ મહાભારતની દુઃખી સ્ત્રીઓમાંની એક છે. કૃષ્ણચૈતન્ય તેના વિષે કહે છે, ખોટું કરવામાં ઘસડાવાની નીતિવાળા ધૃતરાષ્ટ્ર સાથે જ્યારે એનાં લગ્ન થયાં ત્યારે ભાગ્ય એના તરફ ઉદાર ન હતું. ધૃતરાષ્ટ્ર સાથે જ એનું પણ નસીબ બદ્ધ હોવાથી તે પણ કરુણ પરિણામોનાં વમળોમાં તણાઈ પુત્રોને પણ યુદ્ધના સમયે 'विजयी भव' નહિ, પરંતુ 'यतो धर्मस्ततो जयः' કહીને આશીર્વાદ આપનારી ગાંધારીની ધર્મનિષ્ઠા અને તટસ્થતા આપણું મસ્તક નમાવી દે છે.

મહાભારતની મુખ્ય કથાનાં સ્ત્રી પાત્રો અને ગૌણ કથાનાં સ્ત્રી પાત્રોમાં દ્રૌપદીનું પાત્ર વિશિષ્ટ છે. વિશ્વ સાહિત્યમાં પણ બહુભર્તૃતાનું સંભવતાઃ આ એકમેવ ઉદાહરણ છે. વળી, તેની સાથે થયેલા દુર્ઘટનાપૂર્ણ અને લાંછનાપૂર્ણ પ્રસંગો પણ વિશ્વસાહિત્યની કોઈ નારીના ચરિત્રચિત્રણમાં આટલી પરાકાષ્ઠાએ આલેખાયેલા જોવા મળતા નથી. દ્રૌપદીનો મહાભારતની મુખ્ય મુખ્ય ઘટનાઓ સાથે અવિનાભાવ સંબંધ છે. મહાભારતની તે નાયિકા છે. તેના જન્મ પ્રસંગે કરવામાં આવેલી આગાહી અનુસાર જ તેના જીવનપ્રસંગો આકાર લે છે. વસ્ત્રાહરણ, જયદ્રથ દ્વારા અપહરણ, તેનું પંચપતિત્વ જાણે મહાભારતના અંતિમ અઢાર દિવલોના યુદ્ધની પૂર્વભૂમિકા જ બની રહે છે. જે યુગમાં રાજકુલની સ્ત્રી સૂર્યપ્રકાશમાં કે ચંદ્રના ઉજાસમાં ઘરની બહાર ફરી શકતી ન હતી, તે યુગમાં તેને રાજસભામાં નગ્ન કરવાનો ઘૃણિત પ્રયાસ કરવામાં આવતાં - તેના પોતાની પતિ દ્વારા દાવમાં મૂકવામાં આવતાં, ધર્મ પ્રશ્ન કરીને કુરુકુલ વૃદ્ધોને પણ અવાક્ કરી દે છે. વિષ્ટિ માટે જતા કૃષ્ણને પણ યુદ્ધ થાય તેવા જ પ્રયત્નો કરવાનો દુરાગ્રહ સેવે છે. આ ઉપરાંત વનમાં પુરુષાર્થ અને અમર્ષ ઉપર યુધિષ્ઠિરને વ્યાખ્યાન આપતી દ્રૌપદી, જયદ્રથ અને અશ્વત્થામાના વધ માટે હઠાગ્રહી છતાં ક્ષમાની કોમલ કરુણામૂર્તિ એવી દ્રૌપદીનું અન્ય સઘળાં સ્ત્રીપાત્રો કરતાં પોતાનું એવું એક વિશિષ્ટ વ્યક્તિત્વ છે. ઉપરાંત, વનવાસમાં પતિઓનો પડછાયો બનીને સાથેને સાથે રહીને અસંખ્ય કષ્ટો ભોગવતી દ્રૌપદી, મહાપ્રસ્થાન ટાણે પણ પાંડવોની અંતિમયાત્રામાં સહગમન કરનારી દ્રૌપદી — આમ,તેના બહુમુખી વ્યક્તિત્વના અનેક આયામો છે. શ્રી સુખમય ભટ્ટાચાર્ય કહે છે તેમ દ્રૌપદી પ્રત્યેક રીતે પરિપૂર્ણ સ્ત્રી હતી. એના વિકાસના સર્વાઙ્ગીણ ચિત્રે સમસ્ત મહાભારતને ઉજ્જવળ બનાવી દીધું છે. દ્રૌપદી જેવું મૃદુ-કઠોર નારીચરિત્ર મહાભારતમાં એક પણ નથી.

મહાભારતમાં ચિત્રિત દ્રૌપદીના પાત્રનું પાત્રનું સઘળા સંદર્ભો સાથે અધ્યયન કરતાં તેની માનવીયતાનો સાચો પરિચય થાય છે. શ્રી વાસુદેવશરણ પણ કહે છે કે, મહાભારતના કથા પ્રવાહમાં દ્રૌપદીનું ચરિત્ર મહાપરાણે પોતાના પ્રતિ આપણું ધ્યાન ખેંચે છે.

પરવર્તી-પ્રક્ષિપ્ત ભાર્ગવ-પ્રભાવને કારણે મહાભારતની પ્રાચીન કથાઓમાં ઘણા બધા વિરોધાભાસો જોવા મળે છે. ભાર્ગવો વૈષ્ણવ અનુયાયી હોવાને કારણે કૃષ્ણભક્તિનું મહિમાગાન કરવાના પ્રયાસો થયા છે. વળી, બદલાયેલી નીતિમત્તાનાં ધોરણોને લીધે કથાઓમાં વિસંવાદ અને અસ્પષ્ટતાઓ પણ આવી ગઈ છે. ઉદા. દ્રૌપદીના પંચપતિત્વના સમર્થનમાં સ્પષ્ટીકરણ અર્થે આપવામાં આવતી કથો, દ્રૌપદી વસ્ત્રાહરણ પ્રસંગ, અરણ્યપર્વનો દુર્વાસા પ્રસંગ વગેરે. આમ પણ મહાભારતના ક્રમશઃ વિકાસે પ્રત્યેક ચરિત્રના નિરૂપણને અત્યંત વિસ્તારી દીધું છે. એનાં આધિકારિક અને પ્રાસંગિક ઇતિવૃત્તોનું સ્વરૂપ ખોવાઈ ગયું છે. ક્યારેક એકબીજાથી વિરોધાભાસ ધરાતી વિગતો પણ જોવા મળે છે. આ પરિસ્થિતિમાં પાત્રના સઘળા સંદર્ભો એક સાથે મૂકીને તેનું મૂલ્યાંકન કરવાનું આવશ્યક બની જાય છે.

દ્રૌપદીની ગણના સતી સાધ્વી સ્ત્રીઓમાં થાય છે. છતાંય જ્યારે એકવીસમી સદીમાં પ્રવેશેલો આપણો સમાજ કર્ણના શબ્દો બોલે ત્યારે શરમ આવે છે. કેટલું જાણીએ છીએ આપણે દ્રૌપદી વિશે? મૂળ સંસ્કૃત મહાભારત કેટલાયે વાંચ્યું છે? પ્રતિભારાય (યાજ્ઞસેની નવલકથામાં) કહે છે તેમ આંધળાઓએ કરેલા અંધહસ્તિદર્શન ન્યાયે આપણે ઓછી સમજનો ટૂંકો ગજ લઈને આપણા સાહિત્યનાં આવાં યુગાતીત વિરલ પાત્રોને મૂલવીએ છીએ.

પ્રસ્તુત પ્રયાસ એ દ્રૌપદીના પાત્રને મૂળ મહાભારતના સંભવતઃ સમગ્ર સંદર્ભોને એક સાથે મૂકી આપીને, આલેખવાનો નમ્ર પ્રયાસ છે. મહાભારતમાં સઘળાં પર્વોમાં દ્રૌપદીની કથા ઉપસ્થિત નથી, પણ દ્રૌપદી પાંડવોની છાયા છે, પાંડવોના જીવનની એક મહત્ત્વપૂર્ણ કડી છે. સ્વયંવર પછીથી એ હમેશાં પાંડવોનાં તેજ, સામર્થ્ય અને એમના ઐક્યમાં પ્રેરણામૂર્તિ રહી છે. અલગ અલગ સ્વભાવ અને વિશિષ્ટતાઓવાળા પાંચ સમર્થ પુરુષોને એકસૂત્રે બાંધી રાખવા, એક પણ વિરોધનો સૂર કાઢ્યા વિના એ કોઈ નાનીસૂની વાત નથી. દ્રૌપજીના પાત્રનું અધ્યયન કરવાની પ્રેરણા માટે શું આ પૂરતું નથી ?

મહાભારતનું સ્વરૂપ :

મહાભારતમાં કહ્યું છે કે વ્યાસજીએ ૬૦ લાખ શ્લોકોમાં મહાભારતનાં ચાર સંસ્કરણો કર્યાં હતાં — षष्ठिं शतसहस्राणि चकारान्यां स संहिताम् ।૧૫ આમાંથી દરેકના આકાર અનુસાર વિસ્તૃત અથવા સંક્ષિપ્તરૂપે મહાભારતનું સંપૂર્ણ કથાવસ્તુ આવરી લેવામાં આવ્યું હતું.૧૬ તે ક્રમશઃ દેવલોક, પિતૃલોક, ગંધર્વ લોક અને મનુષ્યલોકમાં નારદ, અસિત દેવલ, શુક અને વ્યાસના શિષ્ય વૈશમ્પાયન દ્વારા ગૂંથવામાં આવ્યું હતું.

મહાભારતનું એક નામ 'જય' હતું-

इदं शतसहस्त्रं हि श्लोकानां पुण्यकर्मणाम् ।
सत्यवत्यात्मजेनेह व्याख्यातममितौजसा ॥
जयो नामेतिहासोऽयं श्रोतव्यो विजिगीषुणा ॥

તેને આદિભારત પણ કહેવામાં આવ્યું છે. કૃષ્ણ દ્વૈપાયન દ્વારા આવિર્ભૂત હોવાને કારણે એને કાર્ષ્ણવેદ પણ કહેવામાં આવે છે.એકવાર દેવોએ આ જય, ભારત કે આદિભારતને કે કાર્ષ્ણવેદને વેદોની સાથે તુલના કરતાં તે વધુ ભારે - વજનદાર પુરવાર થયો એથી એના આ ગુરૂત્વને કારણે મહાભારત કહેવાયું. ભરતવંશના પ્રસિદ્ધ રાજાઓના વંશનું અને પછીનાં પર્વોમાં તેમના વંશજો એવા કૌરવ - પાંડવોની કથા હોવાથી પણ આનું નામ મહાભારત પડ્યું — **भारतानां महज्जन्म महाभारतम् उच्यते ॥** ઉપાખ્યાનો વિનાના ૨૪,૦૦૦ શ્લોકોનું સંક્ષિપ્ત સંસ્કરણ વ્યાસજીએ બનાવ્યું હતું, જે ભારત નામે ઓળખાતું હતું —

चतुर्विंशती साहस्त्री चक्रे भारत संहिताम् ।
उपाख्यानैर्विना तावद् भारतं प्रोच्यते बुधैः ।।२३

મહાભારતની વ્યુત્પત્તિની ચર્ચા કરતાં શ્રી દાંડેકર એક સરસ સમજૂતી આપે છે - **महत्त्वात् भारवत्त्वात् च महाभारतम् उच्यते ।** એ પંક્તિને તેઓ આ રીતે વાંચે છે. – '**महत्त्वात् भारतत्वाच्च महाभारतम् उच्यते ।**' મહાભારત તેના સ્વરૂપની દૃષ્ટિએ પણ વિશિષ્ટ છે. હોમરના Iliad અને Odyssey ને એકઠાં કરતાં પણ તેનાથી આઠ ગણું મહાભારત છે, યુરોપિયન સાહિત્યનાં સઘળાં મહાકાવ્યોને સમ્મિલિત કરો તો પણ મહાભારત એનાથી મોટું છે.

મહાભારતના મૂળ સ્વરૂપને લાગે વળગે છે ત્યાં સુધી મોટાભાગના વિદ્વાનો 'જય' સંહિતા અને પછી ૨૪,૦૦૦ શ્લોકોવાળી 'ભારત' સંહિતાને મૂળ સંસ્કરણ માને છે. શ્રી કે.કા.શાસ્ત્રીએ ૨૪,૦૦૦ શ્લોકોવાળી ભારત સંહિતાનું વિદ્વત્તાપૂર્ણ સંશોધન કર્યું છે. સ્વામી ગંગેશ્વરાનંદજી મહારાજ માને છે કે, મહાભારતના પુનઃ સંપાદન સમયે વૈશમ્પાયન-જન્મેજય સંવાદ અને સૌતિ-શૌનક સંવાદ વ્યાસે પોતે આદિ ભારતમાં જોડી દીધા હશે. અથવા એમની આજ્ઞાથી આ પ્રવક્તાઓએ તે અંશ જોડીને સંપાદન કર્યું હશે. શ્રી કે.કા. શાસ્ત્રી આ વાત માનતા નથી. તેમણે તો ૮,૦૦૦ શ્લોકવાળી 'જય' સંહિતાનું પણ ભારત સંહિતાની સાથે સાથે વિદ્વત્તાપૂર્ણ સંશોધન કરીને તે સાબિત કર્યું છે કે વ્યાસજીએ **'त्रिभिर्वर्षसदोत्थायि'** વાળી ભારત સંહિતા જ લખી હતી જેમાં વૈશમ્પાયનજીએ કથા અને સમયની માંગને અનુલક્ષીને તેમાં આખ્યાનો- ઉપાખ્યાનોનો સંભાર ભર્યો હતો. અને એ રીતે મહાભારત **शतसाहस्त्रीसंहिता** બની. શ્રી વાસુદેવશરણ અગ્રવાલ પણ માને છે કે મહાભારતની મૂળ સીધી સાદી કથા ઉપર વૈદિક અને લૌકિક ઉપાખ્યાનો, ગાથાઓ અને ધાર્મિક વિશ્વાસો, નીતિપરક અને ધર્મપ્રેરક સંવાદોનો એક વિસ્તૃત ભંડાર છવાઈ ગયો.

મહાભારત અને ભારત બન્નેનું કેટલાક સમય સુધી સ્વતંત્ર અસ્તિત્વ પણ રહ્યું હતું. પાણિનિની અષ્ટાધ્યાયીમાં બન્નેનો પૃથક નામોલ્લેખ થયો છે. એથી પણ પૂર્વે આશ્વલાયન ગૃહ્યસૂત્ર (૩/૪)માં શ્રાદ્ધમાં વન્દનીય આચાર્યોનાં નામો ગણતી વખતે વૈદિક ઋષિઓ ઉપરાંત સુમન્તુ, જૈમિનિ, વૈશમ્પાયન, પૈલ આ ચાર વ્યાસ- શિષ્યોની સાથે ભારતાચાર્ય અને મહાભારતચાર્યનું પણ નામ આવે છે. વાસુદેવશરણ અગ્રવાલ માને છે તે સંભવત શુંગકાલમાં પૃથક્ ભારતગ્રન્થ બૃહત્તરરૂપ મહાભારતમાં અન્તર્લીન થઈ ગયો. એના સંકેત આ શ્લોકમાંથી મળે છે.

इदं शतसहस्त्रं तु श्लोकानां पुण्यकर्मणाम् ।
उपाख्यानैः सह ज्ञेयमाद्यं भारतमुत्तमम् ।।३०

ભરતવંશની સીધી સાદી યુદ્ધ કથામાં ભાર્ગવવંશની કથાઓ ઉમેરી મૂળ ભારત ગ્રંથને મહાભારતનું રૂપ આપવામાં આવ્યું છે, એવું પ્રાયઃ સઘળા વિદ્વાનો માને છે. અનેક શતાબ્દિઓ પર્યન્તના કાલ વિસ્તારમાં આ કામ થયું. ભારત વંશની યુદ્ધ કથા ધર્મ સંહિતાના રૂપ પરિવર્તિત થઈ ગઈ. શાંતિ અને અનુશાસનિક પર્વોના નીતિ અને ધર્મ પરક અંશ આ ભાર્ગવ-પ્રભાવનાં ફળ છે.

ઉગ્રશ્રવાએ જેમની આગળ કથા કહી, તે શૌનક ભાર્ગવ હોવાને કારણે સૌ પ્રથમ ભાર્ગવ વંશની જ કથા સાંભળાની ઇચ્છા પ્રકટ કરે છે, **तत्र वंशमहं पूर्वं श्रोतुमिच्छामि भार्गवम् ।**

મહાભારતને સો પર્વોમાં વિભાજીત કર્યું છે. ત્યારબાદ સૂતપુત્ર ઉગ્રશ્રવાએ ૧૮ મુખ્ય પર્વોમાં આ સો પર્વોને સમાવી લીધાં છે. પર્વસંગ્રહપર્વમાં મહાભારતનાં સો પર્વોની યાદી આપવામાં આવી છે. વૈશમ્પાયને વ્યાસની ઉપસ્થિતિમાં જ જનમેજયના સર્પયજ્ઞસત્ર પ્રસંગે આ ૧૮(૧૦૦) પર્વોની કથા શ્રોતૃવર્ગને સંભળાવી હતી –

एतत्पर्वशतं पूर्णं व्यासेनोक्तं महात्मना ।
यथावत्सूतपुत्रेण लोमहर्षणि ततः।
उक्तानि नैमिषारण्ये पर्वाण्यष्टादशैव तु ।।३२

વળી, **तस्य तद्वचनं श्रुत्वा कृष्ण द्वैपायनस्तदा ।**
शशास शिष्यमासीनं वैशम्पायनमन्तिके ।
कुरूणां पाण्डवानां च यथा भेदोऽभवत्पुरा ।
तस्मै सर्वमाचक्ष्व यन्मत्तः श्रुतवानसि ॥३३

મહાભારતના આદિપર્વના બીજા અધ્યાયના ૩૩ થી ૭૦ શ્લોક સુધીમાં આપવામાં આવેલી શતપર્વસૂચિ મુખ્ય ૧૮ તથા તેમાં સમાવેલાં વિવિધ પર્વોની સૂચિ આ પ્રમાણે છે. આ પર્વોનાં નામ ઉપરથી આપણને મહાભારતની મુખ્ય કથાનું વિહંગાવલોકન થઈ જાય છે, એ તેની વિશિષ્ટતા છે.

૧. આદિપર્વ : (શતપર્વક્રમ-૧ થી ૧૯)

પેટાપર્વો : (૧) કથાનુક્રમણી પર્વ (૨) પર્વસંગ્રહ પર્વ (૩) પૌષ્ય પર્વ (૪) પૌલોમ પર્વ (૫) આસ્તિક પર્વ (૬) આદિવંશાવતરણ પર્વ (૭) સમ્ભવ પર્વ (૮) લાક્ષાગૃહદાહ પર્વ (૯) હૈડિમ્બ પર્વ (૧૦) બકવધ પર્વ (૧૧) ચૈત્રરથ પર્વ (૧૨) પાંચાલી સ્વયંવર પર્વ (૧૩) વૈવાહિક પર્વ (૧૪) વિદુરાગમન પર્વ (૧૫) રાજ-લમ્ભ પર્વ (૧૬) અર્જુન વનવાસ પર્વ (૧૭) સુભદ્રાહરણ પર્વ (૧૮) હરણહારિક પર્વ (૧૯) ખાંડવદાહ પર્વ

૨. સભાપર્વ : (શતપર્વક્રમ -૨૦ તી ૨૮)

(૧) સભાપર્વ (૨) મન્ત્ર પર્વ (૩) જરાસંઘવધ પર્વ (૪) દિગ્વિજય પર્વ (૫) રાજસૂયિક પર્વ (૬) અર્ઘાભિહરણપર્વ (૭) શિશુપાલવધ પર્વ (૮) દ્યૂત પર્વ (૯) અનુદ્યૂત પર્વ

3. આરણ્યક પર્વ : (શતપર્વ ક્રમ - ૨૯ થી ૪૪)

(૧) આરણ્યક પર્વ (૨) કિર્મીરવધ પર્વ (૩) કૈરાત પર્વ (૪) ઇન્દ્રલોકાભિગમન પર્વ (૫) તીર્થયાત્રા પર્વ (૬) જટાસુરવધ પર્વ (૭) યક્ષ-યુદ્ધ પર્વ (૮) આજગર પર્વ (૯) માર્કણ્ડેય સમસ્યા પર્વ (૧૦) દ્રૌપદી- સત્યભામા સંવાદ પર્વ (૧૧) ઘોષયાત્રા પર્વ (૧૨) મૃગસ્વપ્નભય પર્વ (૧૩) બૃહદ્દ્રૌણિક પર્વ (૧૪) દ્રૌપદીહરણ પર્વ (૧૫) કુંડલાહરણપર્વ (૧૬) આરણેય પર્વ

૪. વિરાટ પર્વ : (શતપર્વ ક્રમ - ૪૫ થી ૪૮)

(૧) વૈરાટપર્વ (૨) કીચકવધ પર્વ (૩) ગોગ્રહણ પર્વ (૪) ઉત્તરા અભિમન્યુ વિવાહ પર્વ

૫. ઉદ્યોગપર્વ : (શતપર્વક્રમ -૪૯ થી ૫૯)

(૧) ઉદ્યોગપર્વ (૨) સંજય-યાન (૩) ધૃતરાષ્ટ્ર-પ્રજાગર પર્વ (૪) સનત્સુજાતીય પર્વ (૫) યાનસન્ધ પર્વ (૬) ભગવદ્યાન પર્વ (૭) કર્ણ-વિવાદ પર્વ (૮) કુરુ-પાંડવ સૈન્ય નિર્યાણપર્વ (૯) રથાતિરથ સંખ્યા પર્વ (૧૦) ઊલૂક-દૂતાગમન પર્વ (૧૧) અંબોપાખ્યાન પર્વ

૬. ભીષ્મપર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૬૦ થી ૬૪)

(૧) ભીષ્માભિષેચન પર્વ (૨) જમ્બૂખંડ વિનિર્માણ પર્ણ (૩) ભૂમિ પર્વ (૪) ગીતા પર્વ (૫) ભીષ્મવદ્ય પર્વ

૭. દ્રોણપર્વ : (શતપર્વક્રમ - ૬૫ થી ૭૨)

(૧) દ્રોણાભિષેક પર્વ (૨) સંશપ્તકવદ્ય પર્વ (૩) અભિમન્યુવધ પર્વ (૪) પ્રતિજ્ઞા પર્વ (૫) જયદ્રથવધ પર્વ (૬) ઘટોત્કચવધ પર્વ (૭) દ્રોણવધ પર્વ (૮) નારાયણાસ્ત્રમોક્ષ પર્વ

૮. કર્ણપર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૭૩)

૯. શલ્યપર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૭૪ થી ૭૭)

(૧) શલ્ય પર્વ (૨) હૃદયપ્રવેશ પર્વ (૩) ગદ્દાયુદ્ધ પર્વ (૪) સારસ્વત પર્વ

૧૦. સૌપ્તિક પર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૭૮ થી ૮૦)

(૧) સૌપ્તિક પર્વ (૨) ઐષીક પર્વ (૩) જલ-પ્રદાનિક પર્વ

૧૧. સ્ત્રીપર્વ : (શતપર્વ ક્રમ - ૮૧ થી ૮૫)

(૧) સ્ત્રીપર્વ (૨) શ્રાદ્ધ પર્વ (૩) યુધિષ્ઠિરા-ભિષેચનિક પર્વ (૪) ચાર્વાક-નિગ્રહ પર્વ (૫) ગૃહ-પ્રવિભાગ પર્વ

૧૨. શાન્તિપર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૮૬ થી ૮૮)

(૧) રાજધર્મ પર્વ (૨) આપદ્ધર્મ પર્વ (૩) મોક્ષધર્મ પર્વ

૧૩. અનુશાસન પર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૮૯,૯૦)

(૧)આનુશાસનિક પર્વ (૨) ભીષ્મસ્વર્ગારોહણ પર્વ

૧૪. આશ્વમેધિકપર્વ : (શતપર્વક્રમ -૯૧,૯૨)
(૧)આશ્વમેધિક પર્વ (૨) અનુગીતા પર્વ

૧૫. આશ્રમવાસપર્વ : (શતપર્વક્રમ -૯૩ થી ૯૫)
(૧)આશ્રમવાસ પર્વ (૨) પુત્રદર્શન પર્વ (૩) નારદાગમન પર્વ

૧૬. મૌસલપર્વ : (શતપર્વક્રમ -૯૬)

૧૭. મહાપ્રાસ્થાનિક પર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૯૭)

૧૮. સ્વર્ગારોહણ પર્વ : (શતપર્વ ક્રમ -૯૮)

આમાં બે પરિશિષ્ટ પર્વ : હરિવંશ (૯૯) અને હરિવંશપુરાણનું ભવિષ્યત્પર્વ (૧૦૦) ઉમેરવાથી સો પર્વ પૂરાં થઈ જાય છે.

મહાભારતના અધ્યાય અને શ્લોક સંખ્યા

મહાભારતની સંશોધિત આવૃત્તિ આદિપર્વ, દ્વિતીયપર્વ સંગ્રહ અધ્યાય શ્લોક ૯૫-૨૩૨માં આપેલા વિવરણ અનુસાર મહાભારતમાં કુલ ૧૯૪૮ અધ્યાય અને ૮૨,૧૩૬ શ્લોકો ગણવામાં આવ્યા છે. પાઠાન્તરિત શ્લોકો ઉમેરતાં આ સંખ્યા ૮૩,૫૩૬ થાય છે. ગણપતિ કૃષ્ણાજી પ્રેસમાં છપાયેલી નીલકંઠની સંસ્કૃત ટીકા સહિતના મહાભારતમાં કુલ ૨૧૦૮ અધ્યાયો છે. મહાભારત, ઈંડિયન પ્રેસ, પ્રયાગમાં હિન્દી સંસ્કરણના બીજા અધ્યાય, શ્લોક ૧૩૧-૩૭૯માં આપેલા વિવરણ અનુસાર મહાભારતમાં કુલ ૧૯૩૨ અધ્યાય અને ૮૪૮૯૧ શ્લોકો છે. સાતવલેકર દ્વારા સંપાદિત સંસ્કરણમાં નીલકંઠીનું અનુસરણ છે, ફકત સ્વર્ગારોહણ પર્વના ૫ અધ્યાયની જગ્યાએ ૬ અધ્યાયો છે. કુંભકોણમ્‌થી છપાયેલા મહાભારતમાં સહુથી વધુ -૨૩૧૨ અધ્યાય છે.

શ્રી વાસુદેવશરણ અગ્રવાલના મતે, શારદા લિપિમાં લખાયેલી પ્રત વધુ પ્રામાણિક છે. જ્યારે મહલ્લક પાઠ તરીકે ઓળખાતી દક્ષિણની આવૃત્તિમાં અધ્યાયોની સંખ્યા ૧૯૫૯ અને શ્લોક સંખ્યા ૯૫,૫૮૬ છે. લોક પરંપરા મહાભારતને શત સાહસ્ત્રી સંહિતા માનતી હોવાથી ગીતા પ્રેસ ગોરખપુરની આવૃત્તિમાં મહાભારતના ૮૪,૦૦૦ શ્લોકોમાં હરિવંશના ૧૬,૦૦૦ શ્લોકો ઉમેરી આ સંખ્યાની પૂર્તિ કરવામાં આવી છે. પરંતુ એ પણ વિવાદાસ્પદ ૧૨,૦૦૦ ની જ થાય છે. જુઓ **दशश्लोक सहस्त्राणि विंशच्छ्लोक शतानि च । खिलेषु हरिवंश च संख्यातानि महर्षिणा ॥ પરંતુ 'अष्टादशसहस्त्राणि श्लोकानां कीर्तितानि वै तथा अष्टादश सहस्त्राणि श्लोकानां च शतं तथा ।** એ પાઠાન્તરો સ્વીકારતાં પૂના સંસ્કરણ આદિપર્વના પર્વ સંગ્રહાધ્યાય અનુસાર ૮૨,૦૦૦ શ્લોકોમાં ૧૮,૦૦૦ ઉમેરવાથી એક લાખની શ્લોક સંખ્યા પૂરી થાય છે.

મહાભારત : કથાવસ્તુ

આદિપર્વ :

આદિપર્વના પ્રથમ બે અધ્યાયોમાં પ્રસ્તાવનારૂપે મહાભારતની રચના અને વિષયસૂચિનું વર્ણન કર્યું છે. ત્રીજા અધ્યાયથી ગદ્યશૈલીમાં લખાયેલું પૌષ્યપર્વ શરૂ થાય છે. આ પર્વમાં ધૌમ્ય અને એમના શિષ્યો આરુણિ, ઉપમન્યુ અને વેદની કથા આવે છે. વેદના શિષ્ય ઉત્તંકના કુંડળો નાગ તક્ષક હરી જવાને કારણે તેમણે જનમેજયને નાગોનો વિનાશ કરવા માટે ભડકાવ્યો. જનમેજય પણ તક્ષકે પિતા પરીક્ષિતને દંશ દીધો હોવાથી યજ્ઞ આરંભ કરાવે છે. આ રીતે જનમેજયના સર્પસત્રથી મહાભારતની કથાનો આરંભ થાય છે.

યજ્ઞ પ્રસંગે ઉપસ્થિત અતિથિઓમાં વ્યાસ-શિષ્ય વૈશમ્પાયન પણ હતા. જનમેજયના આગ્રહથી વૈશમ્પાયન મહાભારતની કથા કહેવાનો આરંભ કરે છે. વ્યાસજી સ્વયં આ પ્રસંગે ઉપસ્થિત છે. ઉગ્રશ્રવા-સૌતિ સંવાદ રૂપે મહાભારતની કથા આગળ ચાલે છે. શૌનકના આગ્રહથી ભાગર્વવંશીય કથા પણ કહેવામાં આવી છે.

મહાભારતની મુખ્ય કથા છે કૌરવ-પાંડવોનું યુદ્ધ અને તે યુદ્ધ તરફ દોરી જતી ઘટનાઓ, પાંડવો ધૃતરાષ્ટ્ર પુત્રો સામે કેવી રીતે મહાન યુદ્ધ લડ્યા, દ્રૌપદીના અપમાનનો પ્રતિશોધ લેવા માટે અને દ્યૂતમાં કૌરવોએ પડાવી લીધેલું રાજ્ય પાછું મેળવવા માટે, એ ઉપરાંત

પણ અન્ય પ્રસંગો જે યુદ્ધ સુધી દોરી ગયા તેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. યુદ્ધ પછીની ઘટનાઓનું પણ વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

સૂત પુરાણી ઉગ્રશ્રવાએ વૈશમ્પાયને કહેલી કુરુ - પાંડવોની કથા સાંભળીને એને નૈમિષારણ્યમાં ભાર્ગવવંશી આચાર્ય શૌનકને કહી, પછી જગત સમક્ષ. આમ, મહાભારતની કથા વ્યાસજીએ રચી. પરંતુ પાંડવોની ત્રીજી પેઢીના અભિમન્યુપુત્ર જનમેજયના સમયમાં અને પછી જગત સમક્ષ મૂકાઈ એવું કહી શકાય.

વૈશમ્પાયને કુરુ પાંડવોની કહેલી કથાનાં ૧૮ પર્વોમાંથી લગભગ અડધા અર્થાત્ એક હજાર અધ્યાયોમાં કુરુ પાંડવોના પારસ્પરિક ભેદ અને યુદ્ધની કથા છે. મહાભારતની કથાના પ્રસંગો વિષે શ્રી વાસુદેવ શરણ અગ્રવાલ કહે છે, ‘‘રાજ્ય માટે જે મહાવીર ક્ષત્રિયોનો એકબીજાને હાથે જે શોચનીય વિનાશ થયો હતો, તેનો રુક્ષ નિષ્કરુણ સાહિત્યિક બોજો તે આ દેશની અધ્યાત્મ ભાવના કઈ રીતે સહન કરી શકત, જોકે, મનીષી વ્યાસે જાતિ અને ધર્મના અનેક પ્રસંગ, દર્શન અને અધ્યાત્મનાં તેજસ્વી પ્રકરણ, દેવતા અને ઋષિઓનાં ચરિત્ર, પુરાણ રાજર્ષિઓનાં વંશાનુચરિત, લૌકિક-વૈદિક આખ્યાન, ભુવન કોશ, તીર્થયાત્રા, ઈતિહાસ અને પુરાણોની અનેક વિધ લોકવ્યાપી સામગ્રીથી એને એ રીતે સજાવીને ધર્મ-સંહિતાનું રૂપ પ્રદાન કરી દીધું હોવાથી મહાભારતના લગભગ એક હજાર અધ્યાય આ પ્રકારની સામગ્રીથી સમૃદ્ધ છે. કોઈ કુશળ વાસ્તુવિદ્યાચાર્યની જેમ મેધાવી દ્વૈપાયન મુનિએ આ સામગ્રીને આદિથી અન્તપર્યન્ત ગ્રંથના સમગ્ર રૂપમાં સજાવી દીધી છે. ચાલતા કથાપ્રવાહમાં મહાન ઉપાખ્યાન પર્વત-શ્રૃંગો સમાન મસ્તક ઊંચું કરી ઊભાં છે.’’

આપણે માત્ર કૌરવ -પાંડવોની કથાનો જ સાર જોઈશું.

કુરુ પાંડવ ચરિતનો આરંભ આદિ વંશાવતરણ પર્વ (અ. ૫૭-૬૧)થી થાય છે. પ્રારંભમાં ચેદિ દેશના રાજા વસુ ઉપરિચરની કથા છે. વસુ ઉપરિચર સત્યવતીના પિતા છે, જેમણે યમુના તીરવાસી ધીવરરાજને પાલન કરવા માટે સોંપી દીધી હતી. યૌવનવતી થતાં આ સત્યવતીએ ઋષિ પરાશરથી આપણા મહાકવિ વેદવ્યાસજીને જન્મ આપ્યો. અંશાવતરણ પર્વના શેષ ભાગમાં કુરુ-પાંડવ વીરો અને એમના સમકાલીન અનેક રાજાઓના જન્મના ઉલ્લેખો છે. શ્રી વાસુદેવ શરણ અગ્રવાલ સંપૂર્ણ અંશાવતાર પર્વને મહાભારતનો મૂળ ભાગ માનતા નથી.

સંભવ પર્વમાં શકુન્તલોપાખ્યાન અને યયાતિ ઉપાખ્યાન છે. કુરું પાંડવોના પૂર્વ પુરુષ ભરતના જન્મની કથા શકુન્તલોપાખ્યાનમાં કહેવામાં આવી છે. ત્યાર પછી ઓગણીસ અધ્યાયોમાં યયાતિનું ઉપાખ્યાન કહ્યું છે. યયાતિનો પુત્ર પુરુ હતો, કુરુ-વંશ, પૌરવ વંશ કહેવાયો. આ પુરુના વંશમાં હસ્તિન્ નામનો રાજા થયો, જેના નામ ઉપરથી હસ્તિનાપુર નામ પડ્યું. આ હસ્તિન્‌ના પુત્ર અજમીઢ અને દ્વિમીઢ. અજમીઢે હસ્તિનાપુરનો પૌરવ વંશ આગળ વધાર્યો. તેનો પુત્ર ઋક્ષ હસ્તિના-પુરનો રાજા બન્યો. તેના વંશમાં સંવરણ નામનો રાજા થયો. તેના સમયમા પાંચાલના રાજાએ હસ્તિનાપુર જીતી લીધું હતું. સંવરણની તપતી નામની રાણી- જે સૂર્યપુત્રી હતી- થી કુરુ નામનો પુત્ર થયો. તેના નામ પરથી પ્રદેશ કુરુ-જાંગલના નામે પ્રસિદ્ધ થયો. કુરુક્ષેત્રમાં તેણે તપ કરવાથી તે ક્ષેત્રનું નામ કુરુક્ષેત્ર પડ્યું.

હસ્તિનના પુત્ર અજમીઢના ત્રણ પુત્રોમાં એક ઋક્ષે હસ્તિનાપુરની ગાદી સંભાળી હતી, જ્યારે બે પુત્ર નીલ અને બૃહદશ્વમાંથી નીલે ગંગાની ઉત્તરે અહિચ્છત્રમાં ઉત્તર પાંચાલની સ્થાપના કરી. બૃહદશ્વે ચર્મણ્વતીના પ્રદેશમાં દક્ષિણ પાંચાલ રાજ્યની સ્થાપના કરી. તેની બે રાજધાની હતી- કામ્પિલ્ય અને કાકન્દી. આ બધા રાજાઓને ‘ભારત’ સંજ્ઞાથી ઓળખવામાં આવતા હતા. અજમીઢથી કુરુના સમયમાં શક્તિનું કેન્દ્ર ઉત્તર પાંચાલમાં જતું રહ્યું હતું.

ઉત્તર પાંચાલ વંશમાં ભૃમ્યશ્વ, મુદ્‌ગલ,

દિવોદાસ, મિત્રયુ, સૃંજય, ચ્યવન, સુદામ, સહદેવ અને સોમક નામના રાજા થયા. સોમક કુરુનો સમકાલીન હતો. કુરુના પુત્ર થયા - પરીક્ષિત, જહ્નુ અને સુધન્વા. પરીક્ષિતનો પુત્ર જન્મેજય, આગળ જતાં જહ્નુના વંશમાં શન્તનુનો જન્મ થયો. શન્તનુનો વિચિત્રવીર્ય, તેના ધૃતરાષ્ટ્ર અને પાંડુ. ધૃતરાષ્ટ્રનો વંશ મહાભારતના ઘોર યુદ્ધમાં નાશ પામે છે. પાંડુના વંશમાં પણ માત્ર અર્જુનનો જ વંશ આગળ ચાલે છે. અન્ય પાંડવોના સઘળા પુત્રો યુદ્ધમાં માર્યા ગયા હતા. દ્રૌપદી તેમની પાંચેયની પત્ની હતી, એના પણ સઘળા પુત્રો મહાભારત યુદ્ધમાં મૃત્યુ પામ્યા હતા. પાંડુપુત્ર અર્જુનનો પુત્ર અભિમન્યુ, તેનો પરીક્ષિત અને પરીક્ષિતનો જનમેજય. તેના સર્પસત્ર યજ્ઞમાં વૈશમ્પાયન દ્વારા મહાભારત કથા કહેવામાં આવે છે.

સંભવપર્વમાં જ આપણને મહિમાશાળી ભીષ્મનું ચરિત્ર મળે છે. અગાધ પાંડિત્ય, અતુલિત શરીર સામર્થ્ય અને બહુમુખી પ્રજ્ઞાની ભીષ્મ સાકારમૂર્તિ છે. શન્તનુને ગંગાથી ભીષ્મ પુત્રરૂપે પ્રાપ્ત થયા. પરંતુ લગ્ન વખતે કરેલ પ્રતિજ્ઞાનું પાલન શાન્તનુ ન કરી શકવાને કારણે ગંગા તેમને છોડીને જતી રહી. ત્યારબાદ ચાર વર્ષ પછી તેમણે સત્યવતી સાથે લગ્ન કર્યા. તેમના લગ્ન માટે ભીષ્મે આજીવન બ્રહ્મચારી રહેવાની પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. તેથી તે ભીષ્મ કહેવાયા. સત્યવતીથી શાન્તનુને ચિત્રાંગદ્ અને વિચિત્રવીર્ય નામના બે પુત્રો થયા. ગંધર્વરાજાના આક્રમણમાં હિરણ્યવતી નદીને તીર ત્રણ વર્ષ સુધી ચાલેલા સંઘર્ષને અંતે ચિત્રાંગદ્ મૃત્યુ પામે છે. વિચિત્રવીર્યના વિવાહ અર્થે ભીષ્મ કાશિ-રાજની ત્રણ કન્યાઓ અંબા, અંબિકા અને અંબાલિકાનું અપહરણ કરી લાવ્યા. સત્યવતીની અનુમતિથી અંબિકા અને અંબાલિકાના વિચિત્રવીર્ય સાથે વિવાહ થયા. પરંતુ અંબા સૌભપતિ શાલ્વને ચાહતી હતી તેથી ભીષ્મ તેને શાલ્વ પાસે મોકલે છે. પરંતુ શાલ્વ અપહૃતા હોવાથી તેનો અસ્વીકાર કરી દે છે. અંતે અંબા શિવ પાસેથી પછીના જન્મમાં ભીષ્મને મારવાનું વરદાન મેળવી અગ્નિને શરણે જાય છે, જે દ્રુપદને ત્યાં શિખંડિની તરીકે જન્મે છે. પરંતુ તેણી પાછળથી ગાંધર્વ સ્થૂણાકર્ણના વરદાનથી પુરુષ (શિખંડી) બની જાય છે. ભીષ્મના મૃત્યુનું તે નિમિત્ત બને છે.

વિચિત્રવીર્ય પણ યક્ષ્માગ્રસ્ત થતાં મૃત્યુ પામ્યો. જે વંશ માટે સત્યવતીના પાલક પિતાએ ભીષ્મ પાસે મોટી પ્રતિજ્ઞા કરાવી હતી તે વંશ આટલેથી જ સમાપ્ત થઈ ગયો. સત્યવતીએ ભીષ્મને વિચિત્રવીર્યની રાણીઓ સાથે વિવાહ કરી લેવા અને નિયોગ વડે પુત્રોત્પત્તિ કરવા સમજાવ્યા, પરંતુ ભીષ્મ સંમત થતા નથી. અંતતોગત્વા સત્યવતીના કુમારિકાવસ્થાના પુત્ર વેદવ્યા વડે અંબિકા - અંબાલિકામાં નિયોગ વડે પુત્રોત્પત્તિ કરાવી. અંબિકાએ ધૃતરાષ્ટ્રને, અંબાલિકાએ પાંડુને અને અંબિકાની દાસીએ વેદ વ્યાસથી વિદુરને જન્મ આપ્યો. ધૃતરાષ્ટ્ર જન્મથી અંધ અને પાંડુ રોગીષ્ઠ હતા. ભીષ્મે ધૃતરાષ્ટ્રનો વિવાહ ગાંધારનરેશ સુબલની પુત્રી ગાંધારી સાથે કર્યો. ધર્મચારિણી ગાંધારીને તેનો પતિ નેત્રહીન હોવાની જાણ થઈ ત્યારે થઈ ત્યારે પતિવ્રતા ધર્મનો સંકલ્પ લઈને એણે પોતાની આંખો પર પાટો બંધાવી લીધો. ભોગ યા સુખના અનુભવમાં કોઈપણ રીતે પતિથી આગળ નહિ જવાનો એણે સંકલ્પ કર્યો. પોતાની બહેનને થયેલા અન્યાય જોઈ શકુનિ હસ્તિનાપુર આવ્યો અને ત્યાં જ રહી ગયો.

પાંડુના વિવાહ વસુદેવની બહેન પૃથા-કુન્તી સાથે થયા, કુન્તી ભોજની પાલક પુત્રી હતી. કુન્તીની સેવાથી પ્રસન્ન દુર્વાસા મુનિએ એને એક મંત્ર આપ્યો હતો, જેનાથી દેવને આવાહન કરતાં પુત્ર પ્રાપ્ત થાય. કુન્તીએ કુમાર અવસ્થામાં જ, કુતુહલવશ મંત્ર પ્રયોગ કરી સૂર્યદેવને નિમંત્રણ આપતાં કર્ણનો જન્મ થયો. ભીરુ કુન્તીએ પેટીમાં મૂકી કર્ણને યમુનાના જળમાં છોડી ધીધો. હસ્તિનાપુરના અધિરથ નામના સૂતના હાથમાં તે આવતાં, તેની પત્ની રાધાએ તેનું પાલન પોષણ કર્યું. કુન્તી ઉપરાંત મદ્રરાજની અદ્વિતીય સુંદરી બહેન માદ્રીનાં ભીષ્મે પાંડુ સાથે લગ્ન કરાવ્યાં. હિમાલયમાં

મૃગયા દરમ્યાન પાંડુને ઋષિનો શાપ મળવાથી તે પોતે પુત્રો ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી, પરંતુ કુન્તીના દુર્વાસાએ આપેલા મંત્રો વડે ત્રણ પુત્રો કુન્તીમાં અને બે માદ્રીમાં ઉત્પન્ન થયા.

ધૃતરાષ્ટ્રના ગાંધારીથી સો પુત્રો થયા અને વૈશ્યા સ્ત્રીથી એક યુયુત્સુ ઉપરાંત એક પુત્રી દુઃશાલા થઈ જેનાં લગ્ન સિંધુ દેશના જયદ્રથ સાથે થયાં. વનમાં પાંડુનું મૃત્યુ થતાં, માદ્રી તેની પાછળ સતિ થઈ. કુન્તી અને તેના પુત્રોને લઈને તપસ્વીઓ હસ્તિનાપુર આવ્યા.

પાંચ પાંડવો અને ધૃતરાષ્ટ્રના પુત્રો સાથે મોટા થયા. દ્રોણ તેમના શસ્ત્રગુરુ બન્યા. કર્ણે પણ તેમની પાસેથી વિદ્યા પ્રાપ્ત કરી. દ્રોણના સહુ શિષ્યોમાં અર્જુન ધનુર્વિદ્યામાં વિશેષ પારંગત બન્યો. કુમારોની શસ્ત્ર પરીક્ષા વખતે કર્ણ રાજકુલમાં ઉત્પન્ન નહિ હોવાને કારણે તેનું અપમાન કરવામાં આવ્યું. દુર્યોધને તેને અંગ દેશનો રાજા બનાવી મિત્ર પણ બનાવ્યો. ભીમ અને અર્જુનનો સર્વનાશ કરવા માટે કર્ણ-શકુનિની સહાયતાથી તેમને મારવાનો ઉપાય વિચાર્યો. તે માટે ધૃતરાષ્ટ્રની પણ મદદ લેવામાં આવી. વારણાવતમાં જતુગૃહ નિર્માણ કરીને તેમાં પાંડવોને બાળી મૂકવાનું ષડ્યંત્ર ઘડવામાં આવ્યું. પરંતુ વિદુરની સમય સૂચકતાને કારણે તેઓ જીવિત બચી ગયા.

જતુગૃહમાંથી બચેલા પાંડવો દક્ષિણ દિશામાં વનમાં છુપાઈ રહે છે. વનમાં ભીમસેન હિડિમ્બ નામના રાક્ષસનો વધ કરતાં હિડિમ્બા ભીમસેન પર મોહિત થઈ ગઈ. કુન્તિની સંમતિથી ભીમસેન તેની સાથે વિવાહ કરે છે. હિડિમ્બાથી ભીમસેનને ઘટોત્કચ નામનો પુત્ર પ્રાપ્ત થયો.

એકચક્રા નગરીના નિવાસ દરમ્યાન ભીમસેને બક નામના રાક્ષસનો વધ કર્યો, ત્યાં જ તેમને યજ્ઞસેન દ્રુપદની પુત્રી કૃષ્ણા યાજ્ઞસેનીના સ્વયંવરના સમાચાર મળ્યા. સ્વયંવરનું નામ સાંભળી પાંડવો રોમાંચિત થયા. કુન્તીએ પણ તેમના મનોભાવ સમજી પાંચાલ જવાનો નિર્ણય કર્યો. માર્ગમાં અગ્નિપર્ણ ગાંધર્વનો અર્જુને પરાજય કર્યો. તેની પાસેથી અર્જુનને ચાક્ષુષી વિદ્યા પ્રાપ્ત થઈ. જેની સહાયથી તે મત્સ્યવેધ કરવામાં સફળ થયો. માર્ગમાં ધૌમ્ય ઋષિનું પુરોહિત તરીકે વરણ કર્યું. ત્યાંથી તેઓ દક્ષિણ પાંચાલમાં પહોંચ્યા.

દ્રૌપદીનો સ્વયંવર થયો. ક્ષત્રિયો લક્ષ્યવેધ કરવામાં નિષ્ફળ ગયા. અંતે બ્રાહ્મણ વેશધારી અર્જુન લક્ષ્યવેધ કરી દ્રૌપદીને વર્યો. દ્રૌપદીનાં, કુન્તીના વચનને કારણે, પાંચ પાંડવ સાથે લગ્ન થયાં. ઘણીબધી આનાકાની પછી વેદવ્યાસના સમજાવવાથી દ્રુપદ સંમત થયો.

પાંડવો દ્રૌપદીને લઈને હસ્તિનાપુર આવ્યા. દુર્યોધન પાંડવોની ઉન્નતિ જોઈ શકતો નથી, તેથી તેમને મારી નાખવાના ઉપાયો વિચારે છે. પરંતુ તેમાં સફળ થતો નથી. અંતે હસ્તિનાપુરનું વિભાજન થઈને જ રહ્યું. પાંડવોએ નવું રાજ્ય સ્થાપ્યું, જેની રાજધાની બની ઈન્દ્રપ્રસ્થ અથવા ખાંડવપ્રસ્થ.

નારદમુનિની સલાહથી કરવામાં આવેલી શરતનો ભંગ કરતાં અર્જુને બાર વર્ષનો વનવાસ સ્વીકાર્યો. વનવાસ દરમ્યાન તેણે ચિત્રાંગદા, ઉલૂપી વગેરે સાથે લગ્ન કર્યાં અને તેમના દ્વારા સંતાનનો પિતા પણ બન્યો. વનવાસને અંતે તેણે કૃષ્ણની સલાહ-સહાયથી સુભદ્રાનું હરણ કર્યું.

ખાંડવદહન પ્રસંગના વર્ણન પછી આદિપર્વ સમાપ્ત થાય છે.

સભાપર્વ :

ખાંડવદહનમાંથી અર્જુન દ્વારા અભયપ્રદાન પ્રાપ્ત મયદાનવે ઈન્દ્રપ્રસ્તમાં એક સુંદર સભાનું નિર્માણ કર્યું. આગળ જતાં આ સભા જ દુર્યોધનના અપમાન અને પાંડવોના આપત્તિકાળનું નિમિત્ત બની, જેમાંથી વૈરાગ્નિના બીજનું વટવૃક્ષ ઊભું થાય છે.

કચ્ચિદધ્યાયમાં નારદજીનો યુધિષ્ઠિરને ઉપદેશ છે. નારદજીની પ્રેરણાથી યુધિષ્ઠિરે રાજસૂય યજ્ઞ કરવાનો વિચાર કર્યો. તે માટે સૌ પ્રથમ જરાસન્ધનો વધ કરવો આવશ્યક હોવાથી કૃષ્ણ, ભીમ અને અર્જુન મગધ ગયો. ભીમના હાથે જરાસન્ધનો વધ થયો. યુધિષ્ઠિરના

રાજસૂય યજ્ઞમાં કૃષ્ણની પૂજા કરાતી જોઈ શિશુપાલે ઉકળી ઉઠીને કૃષ્ણ, ભીષ્મ વગેરેનું અપમાન કરતાં, અન્તે કૃષ્ણે તેનો શિરચ્છેદ કર્યો.

રાજસૂયમાં રાજાઓ દ્વારા લાવવામાં આવેલી ઉપહાર સામગ્રીને યથાયોગ્ય રીતે લઈને મૂકવાનું કાર્ય દુર્યોધનને સોંપ્યું હતું. તે વૈભવે અને મયદાનવે બનાવેલી અદ્‌ભુત સભાએ દુર્યોધનમાં ઈર્ષાનો અગ્નિ પ્રજ્વલિત કર્યો. હસ્તિનાપુર પાછા આવી તેણે યેનકેન પ્રકારેણ યુધિષ્ઠિરના વૈભવ અને રાજ્ય પર પોતાનો અધિકાર પ્રસ્થાપિત કરવાના માર્ગો વિચાર્યા. અને શકુનિની બનાવેલી દ્યૂતની યોજના ધૃતરાષ્ટ્રના સહકારથી અમલમાં મૂકવામાં આવી. યુધિષ્ઠિર દ્યૂતનું અનીષ્ટ અને દુર્યોધન-શકુનિની દુષ્ટતા જાણતા-સમજતા હોવા છતાં, વિદુરજીની દ્યૂત નહિ રમવાની સલાહને અવગણી ક્ષત્રિયત્વના અહંકારને વશ થઈ, કૃષ્ણની સલાહ વિના જ દ્યૂત રમવા હસ્તિનાપુર આવ્યા.

દ્યૂત રમાયું. દુર્યોધનને બદલે ધૂર્ત શકુનિએ પાસા ફેંક્યા. યુધિષ્ઠિર ભીમાદિએ અર્જિત કરેલું સઘળું ધન-ઐશ્વર્ય હારી ગયા.તેમ છતાંય જાણે વૈરતૃપ્તિ થઈ ન હોય એમ દ્રૌપદીને દાવમાં મૂકવાનું સૂચન કરવામાં આવ્યું. જુગારીની માનસિકતામાં યુધિષ્ઠિરે દ્રૌપદીને દાવમાં મૂકી, એને હારી ગયા. પરિણામસ્વરૂપે દ્રૌપદીને સભામાં ઘસડી લાવીને દુઃશાસન, દુર્યોધન, કર્ણ દ્વારા તેનું ભયંકર અપમાન કરવામાં આવ્યું. વાતાવરણ તંગ થતા ધૃતરાષ્ટ્ર પાંડવોને તેમણે હારેલું વધુ પાછુ આપી દે છે. પરંતુ દુર્યોધનના આગ્રહથી, અર્ધ રસ્તેથી પાછા બોલાવીને પુનર્દ્યૂત રમવામાં આવ્યું. પાંડવો હાર્યા. પરિણામે બાર વર્ષના વનવાસ અને એક વર્ષના અજ્ઞાતવાસમાં જવું પડ્યું.

કુન્તીને વિદુરજીને ત્યાં મૂકી, સુભદ્રાને દ્વારકા અને દ્રૌપદીના પુત્રોને પાંચાલ મોકલી પાંડવોએ દ્રૌપદી સાથે વનપ્રયાણ કર્યું.

અરણ્યપર્વ :

અરણ્યપર્વમાં મુખ્યત્વે પાંડવોના વનવાસની કથા છે. એમાં વાર્તાની સામગ્રી પરિમિત છે. અનેક પ્રકારનાં આખ્યાન, ઉપાખ્યાન, ચરિત, નીતિ અને ધર્મના પ્રસંગો તથા તીર્થયાત્રાનાં વર્ણનો છે. બૃહદશ્વ નામના ઋષિએ પાંડવોનુ દુઃખ હળવું કરવા કહેલી નલોપાખ્યાનની સુંદર કથા પણ છે. તદુપરાંત ઋષ્યશૃંગ ઉપાખ્યાન, રામોપાખ્યાન, સાવિત્રી-સત્યવાન ઉપાખ્યાન પણ આ પર્વમાં છે. સુરભિ-ઈન્દ્ર સંવાદ, કાર્તવીર્ય, ચ્યવન-સુકન્યા ઉપાખ્યાન, માંધાતા-ઉપાખ્યાન વગેરે ઉપાખ્યાનો પણ છે.

વનપર્વમાં દ્રૌપદી-યુધિષ્ઠિર સંવાદ, દ્રૌપદી-સત્યભામા સંવાદ, અર્જુન દ્વારા ઈન્દ્રકીલ પર્વત પર જઈ ભગવાન શિવને પ્રસન્ન કરી દિવ્યાસ્ત્રોની પ્રાપ્તિ, દુર્વાસાનું ઉપાખ્યાન, સૂર્ય દ્વારા અક્ષયપાત્રની પ્રાપ્તિ, મૈત્રેય ઋષિ દ્વારા દુર્યોધનને શાપ, ભીમ દ્વારા કિર્મીરવધ, શ્રીકૃષ્ણ સમક્ષ દ્રૌપદીની દુઃખ-અભિ-વ્યક્તિ, આવકારપર્વ, યક્ષ-યુધિષ્ઠિર સંવાદ, માર્કંડેય-સમસ્યા, દુર્યોધનની ઘોષયાત્રા, જયદ્રથ દ્વારા દ્રૌપદીનું અપહરણ, ઈન્દ્ર દ્વારા કર્ણનાં કુંડલાહરણ વગેરે કથાનકો અરણ્યપર્વના વિરાટ ફલકમાં આલેખવામાં આવ્યાં છે.

વિરાટપર્વ :

અરણ્યપર્વથી બિલકુલ વિપરીત ઉપાખ્યાનો રહિત મહાભારતનું આ એકમાત્ર પર્વ છે. અહીં પાંડવોનું વિરાટનગરમાં આગમન, છદ્મવેશમાં વિરાટની સભામાં પ્રવેશ, કીચક દ્વારા દ્રૌપદીનું અપમાન, કીચકવધ, કૌરવો દ્વારા વિરાટની ગાયોનું અપહરણ, અર્જુનનું કૌરવ સેના સામે યુદ્ધ, અભિમન્યુ સાથે ઉત્તરાનો વિવાહ આટલા મુખ્ય પ્રસંગો છે.

વિરાટના સાળા કીચકની દ્રૌપદી ઉપર કુદૃષ્ટિ થતાં દ્રૌપદી માટે મુશ્કેલ પરિસ્થિતિ ઊભી થઈ. પહેલાં તો કીચકે સૈરન્ધ્રીના વેશમાં રહેલી દ્રૌપદીને સમજાવીને પોતાની પત્ની બનાવવાનો આગ્રહ કર્યો, દ્રૌપદી ન

માનતાં સુદેષ્ણાની મદદથી ષડ્યંત્ર કરી તેને પોતાના મહેલમાં બોલાવી. દ્રૌપદી એને ધક્કો મારી પાડી દઈ, વિરાટની સભામાં દોડી જાય છે. પરંતુ કીચકે તેને વાળથી પકડી લાત મારી. દ્રૌપદીની ફરિયાદ પ્રતિ વિરાટ ઉદાસીન રહેતાં પ્રગટ રીતે યુધિષ્ઠિર કંઈ કરી શકે તેમ ન હોવાથી દ્રૌપદીને સમસમીને જતું રહેવું પડ્યું. રાત્રે ભીમ પાસે જઈ તેની પાસેથી કીચકનો વધ કરવાની યોજના ઘડાવી. એ મુજબ અર્જુનની નાટ્યશાળામાં રાત્રિના સમયે છદ્મરૂપે કીચકનો અને ત્યારબાદ દ્રૌપદીને મૃત કીચકની સાથે બાંધવાનો પ્રયાસ કરનાર તેના એકસોને પાંચ ભાઈઓ-ઉપકીચકોનો ભીમસેને સ્મશાનમાં જ વધ કરી દીધો.

કૌરવો એ કરેલા આક્રમણને નિષ્ફળ બનાવી પાંડવોએ વિરાટની ગાયો પાછી લાવી આપી. ત્રીજા દિવસે અર્જુને રાજા વિરાટને પાંડવોનો પરિચય આપ્યો. અર્જુનના પુત્ર અભિમન્યુ સાથે વિરાટે પોતાની પુત્રી ઉત્તરાનો વિવાહ કરાવ્યો.

ઉદ્યોગપર્વ :

વનવાસની પ્રતિજ્ઞા પૂર્ણ થતાં પોતાનું રાજ્ય પાછું મેળવવા માટે પાંડવોએ વિરાટ નરેશના રાજ-પુરોહિતને હસ્તિનાપુર મોકલ્યા. તે દરમ્યાન પાંડવોએ કૃષ્ણને સહાયક તરીકે પ્રાપ્ત કર્યા. દુર્યોધને ઈન્દ્રપ્રસ્થ યુદ્ધ વિના પાછું નહિ આપવાનો નિર્ણય જણાવ્યો. છેવટે શ્રીકૃષ્ણ શાન્તિ દૂત બનીને ધૃરાષ્ટ્ર પાસે ગયા.

કૃષ્ણને વિષ્ટિ માટે જવા તૈયાર થયેલા જોઈ દ્રૌપદીએ પોતાનું અપમાન યાદ કરી યુદ્ધ માટેનો જ આગ્રહ રાખ્યો. કૃષ્ણ તેને એ પ્રમાણે આશ્વસ્ત કરે છે. કૃષ્ણે ધૃતરાષ્ટ્ર સમક્ષ ધર્મપૂર્વક પાંડવોને માત્ર પાંચ ગામ નિર્વાહ અર્થે આપવાની વિનંતિ કરી અને યુદ્ધના પરિણામરૂપે કુલક્ષયના દુષ્પરિણામનું ચિત્ર સ્પષ્ટ કર્યું. પરંતુ દુર્યોધન કંઈ પણ આપવા તૈયાર થયો નહીં. દુર્યોધને શ્રીકૃષ્ણને કેદ કરવાની ચેષ્ટા કરતાં, તેમણે પોતાનું વિરાટ સ્વરૂપ પ્રગટ કર્યું.

કુન્તીએ યુધિષ્ઠિરને કહેવડાવ્યું, 'ક્ષત્રિયાણીઓ જે દિવસ માટે પુત્રને જન્મ આપે છે, તે સમય આવી પહોંચ્યો છે.' વિદુલાનું દૃષ્ટાન્ત આપી તેણે પાંડવોને યુદ્ધ માટે પ્રેરિત કર્યા. અર્જુનને ખાસ સલાહ આપતાં તેઓ કહેડાવે છે કે, તે 'દ્રૌપદીના કહેવા પ્રમાણે કરે.'

કૃષ્ણે કર્ણને તેના જન્મનું રહસ્ય કહી પાંડવો સાથે ભેળવવાનો નિષ્ફળ પ્રયાસ કર્યો. કુન્તીએ પણ એવો પ્રયત્ન કર્યો, પરન્તુ કર્ણ દુર્યોધન પ્રતિ નિષ્ઠાવાળો જ રહ્યો. કુન્તી કર્ણ પાસેથી 'અર્જુન સિવાય કોઈ પાંડવને નહિ મારું' એવું વચન લેવામાં સફળ રહી.

યુદ્ધ અનિવાર્ય બની ગયું. સવાર થતાં જ કુરુ-ક્ષેત્રના મેદાનમાં બન્ને સેનાઓ વ્યૂહમાં ગોઠવાઈ ગઈ. પૂર્વમાં પાંડવ અને પશ્ચિમમાં કૌરવો પોતપોતાની વિરાટ સેનાઓ સાથે યુદ્ધ માટે ગોઠવાઈ ગયા. ધૃષ્ટદ્યુમ્ન પાંડવોનો અને ભીષ્મ કૌરવ સેનાના સેનાપતિ નિયુક્ત થયા.

ભીષ્મપર્વ :

યુદ્ધના પ્રથમ દિવસે અર્જુને કૃષ્ણને પોતાનો રથ બન્ને સેનાઓની મધ્યમાં લાવીને ઊભો રાખવાનું કદઉૅંું. પોતાનાં સ્વજનોને જ ચારેબાજુ જોઈને અર્જુન વ્યામોહિત થઈને ધનુષ્ય બાણ ત્યાં જ રથમાં બેસી પડ્યો. શ્રીકૃષ્ણે અહીં અર્જુનને ગીતાનો ઉપદેશ આપ્યો. કૃષ્ણે અર્જુનને કાયરતા છોડી ક્ષત્રિયનો ધર્મ અપનાવી યુદ્ધ માટે તૈયાર કર્યો. યુધિષ્ઠિરે પણ ઉઘાડા પગે કૌરવ સેનામાં જઈ ભીષ્મને પ્રણામ કરી, તેમની પાસેથી વિજયના આશીર્વાદ પ્રાપ્ત કર્યા. ધૃતરાષ્ટ્રનો પુત્ર યુયુત્સુ યુદ્ધ શરુ થયા પૂર્વે પાંડવોની શિબિરમાં આવી ગયો.

પ્રથમ દિવસે અભિમન્યુ-ભીષ્મનું યુદ્ધ થયું, એમાં વિરાટ પુત્ર અને અભિમન્યુનો સાળો ઉત્તર શલ્યના હાથે માર્યો ગયો. ભીષ્મને હાથે ઉત્તરના ભાઈ શ્વેતનો પણ વધ થયો. બીજા દિવસે ભીમનું કલિંગના રાજા સાથે યુદ્ધ થયું. ત્રીજા દિવસનું યુદ્ધ ભીષ્મ અર્જુન વચ્ચે થયું. પિતામહ તરફના મોહને લીધે અર્જુન યુદ્ધમાં શિથિલતા દાખવતાં કૃષ્ણ સ્વયં પ્રતિજ્ઞાભંગ કરીને,

ચક્ર લઈ ભીષ્મને મારવા દોડ્યા. અર્જુન તેમને રોકીને, પછી પૂર્ણ ઉત્સાહ સાથે ભીષ્મ સામે યુદ્ધ કરે છે. ચોથા દિવસે ભીમે દુર્યોધનના પાંચ ભાઈઓનો વધ કર્યો. ઘટોત્કચે પણ માયાવી યુદ્ધ કર્યું. પાંચમા દિવસે ભીષ્મ અને દ્રોણનું અર્જુન સાથે યુદ્ધ થયું. શિખંડી અર્જુનની સહાય માટે આવતા સ્ત્રીઓ સામે નહિ લડવાની પ્રતિજ્ઞાને કારણે ભીષ્મ રણયુદ્ધમાંથી ખસી ગયા. છઠ્ઠા દિવસે ભીમ અને દ્રોણ વચ્ચે ઘોર યુદ્ધ થયું.આઠમા દિવસે ભીમે દુર્યોધનના સાત ભાઈઓને મારી નાખ્યા. નવમા દિવસે યુદ્ધમાં પાંડવોનો ભારે પરાજય થતાં, કૃષ્ણની સમ્મતિથી પાંડવોએ ભીષ્મ પાસે જઈ યુદ્ધમાં તેમને પરાજીત કરવાનો ઉપાય પૂછ્યો. ભીષ્મે શિખંડીને આગળ કરી અર્જુનને યુદ્ધ કરવાની સલાહ આપી. દસમા દિવસે સૂર્યાસ્તના એક કલાક પહેલાં અર્જુને ભીષ્મની સલાહ અનુસાર તેમની સાથે યુદ્ધ કર્યું. અંતે ભીષ્મ પડ્યા. યુદ્ધ અટકી ગયું. ભીષ્મની બાણશય્યા બની. અર્જુને બાણ વડે ઓશીકું પણ બનાવી આપ્યું. ભીષ્મની તૃષાતૃપ્તિ માટે અર્જુને બાણ વડે પૃથ્વીમાંથી જલ પ્રકટ કર્યું. રાત્રિના અંધકારમાં કર્ણ ભીષ્મને મળવા આવ્યો. ભીષ્મે તેને આશીર્વાદ આપ્યા.

દ્રોણપર્વ :

કૌરવ સેનાના દ્વિતીય સેનાપતિ બન્યા આચાર્ય દ્રોણ. દુર્યોધને હવે યુધિષ્ઠિરને પકડવાનો વ્યૂહ ઘડવા માટે દ્રોણાચાર્યને કહ્યું. પરંતુ અર્જુનની ઉપસ્થિતિમાં એ શક્ય ન હતું. સુશર્માએ અર્જુનને રણક્ષેત્રમાંથી દૂર લઈ જવાનો પ્રયત્ન કર્યો. સાંજના સમયે દ્રોણ-યુધિષ્ઠિરનો સામનો થયો. ત્યાં સુધીમાં અર્જુન આવી જતાં સૂર્યાસ્ત સુધી ભીષણ યુદ્ધ ચાલું રહ્યું. દુર્યોધનની યુધિષ્ઠિરને પકડવાની અભિલાષા પૂર્ણ ન થતાં તેણે દ્રોણ પર આક્ષેપ કર્યો. બીજા દિવસે દ્રોણે ચક્રવ્યૂહની યોજના ઘડી જે અર્જુન અને કૃષ્ણ સિવાય કોઈ જાણતું ન હતું. સંશપ્તકોની સામે લડવા માટે અર્જુનને રક્ષણક્ષેત્રથી દૂર જવું પડતાં તેની અનુસ્થિતિમાં અભિમન્યુએ વ્યૂહમાં પ્રવેશ કર્યો. એકલા અભિમન્યુ વિરુદ્ધ સઘળા પ્રમુખ કૌરવ યોદ્ધાઓએ એકઠા થઈ તેનો વધ કરી નાખ્યો. પુત્રશોકમાં દુઃખી અર્જુને સૂર્યાસ્ત પહેલાં અભિમન્યુને મારવામાં નિમિત્ત રૂપ જયદ્રથનો વધ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી અને કૃષ્ણની સહાયથી તે પાર પાડી. કર્ણ અને ઘટોત્કચ વચ્ચેના યુદ્ધમાં કર્ણે ઇન્દ્રપ્રદત્ત શક્તિનો પ્રહાર કરી તેનો વધ કર્યો.

દ્રોણાચાર્યનો વધ કરવા માટે કૃષ્ણના કહેવાથી યુધિષ્ઠિરે 'અશ્વથામા મરાયો' એવી અફવા ફેલાવી. યુધિષ્ઠિરને સાચા માનીને પુત્ર શોકમાં શસ્ત્ર ત્યાગીને તેમણે યોગબળે પ્રાણ ત્યજી દીધા. ધૃષ્ટદ્યુમ્ને આવીને એમનું મસ્તક કાપી નાખ્યું. કૃપાચાર્ય પાસેથી સઘળો વૃત્તાંત પ્રાપ્ત થતાં અશ્વથામાએ ક્રુદ્ધ થઈ અર્જુન સાથે ભયંકર યુદ્ધ કર્યું. નારાયણાસ્ત્ર જેવાં નિષિદ્ધ શસ્ત્રોનો પણ તેણે પ્રયોગ કર્યો. કૃષ્ણની સલાહથી પાંડવોએ બચવાનો ઉપાય કર્યો. પાંડવોને બચી ગયેલા જોઈ અશ્વત્થામાએ પોતાનું ધનુષ્ય ફેંકી દીધું.

કર્ણપર્વ :

દ્રોણપર્વ પશ્ચાત્ અશ્વત્થામાના પ્રસ્તાવથી કર્ણ સેનાપતિ બન્યો. તેણે પાંડવો સાથે ભયંકર યુદ્ધ કર્યું. દુર્યોધને યુદ્ધનો સમગ્ર ભાર કર્ણને સોંપી દીધો. દુર્યોધનની વિનંતીથી શલ્ય કર્ણનો સારથિ બન્યો. કર્ણ અને યુધિષ્ઠિર વચ્ચેના યુદ્ધમાં કર્ણે યુધિષ્ઠિરને ઘાયલ કર્યા. પરંતુ કુન્તીને આપેલા વચનને કારણે જીવિત છોડી દે છે. અર્જુન અને કર્ણ વચ્ચે પણ ભયંકર યુદ્ધ થયું.

ભીમને દુઃશાસનને મારીને પ્રતિજ્ઞા પૂર્ણ કરવાનો અવસર પ્રાપ્ત થતાં, ભયંકર યુદ્ધને અન્તે દુઃશાસનને ગદા પ્રહાર કરી ભૂમિ પર પાડી દઈને એની છાતી ચીરી નાખી. અને તેના લોહીને આંગળીઓમાં લઈ પોતાના મોંઢા ઉપર લગાવ્યું. કર્ણની મદદમાં આવેલા તેના પુત્ર વૃષસેનને અર્જુને મારી નાખ્યો. અર્જુને કર્ણનું પણ કવચ ચીરી નાખી તેને મૂર્છિત કરી દીધો, મૂર્ચ્છામાંથી જાગીને કર્ણ લડવા લાગ્યો, પરંતુ પરશુરામના શાપ અને એક બ્રાહ્મણે આપેલા શાપનો પણ સમય આવ્યો હોવાથી

કર્ણના દુર્ભાગ્યે એનો રથ ભૂમિમાં ફસાઈ ગયો. કર્ણે અર્જુનને ક્ષત્રિય ધર્મ યાદ કરાવી થોભવાનું કહ્યું પરંતુ કૃષ્ણે એનાં દુષ્કૃત્યો યા દ કરાવી, અર્જુનને કર્ણ પર બાણ ચલાવવાનો આદેશ કરતાં અર્જુને તીક્ષ્ણ બાણ વડે એનો વધ કરી દીધો.

શલ્યપર્વ :

કૃપાચાર્યે દુર્યોધનને સંધિ કરી લેવા સમજાવ્યું. પરંતુ હવે સંધિ કરવાની નિરર્થકતા અને સભામાં દ્રૌપદીને અપમાનિત કરનાર પોતાને પાંડવો ક્ષમા નહિ આપી શકે, એવું વિચારી દુર્યોધને સંધિનો કૃપાચાર્યનો પ્રસ્તાવ અસ્વીકાર કરી દીધો.

શલ્ય નવો સેનાપતિ બન્યો. ભીમના પરાક્રમ સામે પલાયન કરતી કૌરવ સેનાને જોઈ શલ્યે ભીમ સાથે યુદ્ધ કર્યું. ભીમે તેનું કવચ છેદી નાખ્યું, યુધિષ્ઠિરે વિષ પાયેલી શક્તિ દ્વારા શલ્યનું હૃદય ચીરી નાખ્યું. ભીમે દુર્યોધનના દસ ભાઈઓ તથા અર્જુને સુશર્માનો વધ કર્યો. હવે દુર્યોધન અને એનો એક ભાઈ સુદર્શન બચ્યા હતા. અર્જુનની સાથે સાથે ભીમ અને સહદેવ સાથે પણ યુદ્ધ કરતાં શકુનિ પલાયન કરવા લાગ્યો ત્યારે સહદેવે પહેલાં તેનો હાથ કાપી નાખીને પછી મસ્તક પણ કાપી નાખ્યું. પાસાને જ પોતાનાં શસ્ત્રો સમજનાર કપટી શકુનિનો આ રીતે અન્ત થયો.

ભીમ અને અર્જુને દુર્યોધન, કૃપાચાર્ય અને અશ્વત્થામાને પરાસ્ત કરીને શેષ સેનાનો વધ કર્યો. આ જોઈ દુર્યોધન ભાગીને દ્વૈપાયન હૃદ નામના તળાવમાં જઈને છુપાઈ ગયો. સગડ મેળવીને પાંડવો સસૈન્ય ત્યાં પહોંચી ગયા.

યુધિષ્ઠિરે જુગારી મનોવૃત્તિનું પ્રદર્શન કરતાં પાંડવોમાંથી કોઈ એક સાથે દ્વન્દ્વ યુદ્ધ કરવાનો પ્રસ્તાવ મૂક્યો. પાંડવોના સદ્‌ભાગ્યે દુર્યોધને ભીમ સાથે ગદા યુદ્ધ કરવાનું સ્વીકાર્યું, તો ગદાયુદ્ધમાં શ્રીકૃષ્ણનો સંકેત સમજીને ભીમે તેના ઊરુ ઉપર પ્રહાર કરતાં દુર્યોધનનો પણ અંત આવી ગયો. દ્રૌપદીને ઊરુ પર બેસવાનો અભદ્ર સંકેત કર્યો હોવાથી ભીમે તેના ઊરુભંગની કરેલી પ્રતિજ્ઞા આ રીતે પૂરી થઈ. બલરામને આ નિયમભંગ ગમતો નથી. પરંતુ કૃષ્ણે તેમને સમજાવીને શાન્ત કર્યા.

સર્વનાશ છતાં દુર્યોધનનો પ્રતિશોધ પૂરો થતો નથી. પોતાના પિતાના વધથી ક્રુદ્ધ અને સંતપ્ત અશ્વત્થામાને તેણે અંતિમ સેનાપતિ નિયુક્ત કર્યો. અશ્વત્થામાએ પણ કૃષ્ણ હોવા છતાં પાંડવો અને પાંચાલોનો વધ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી.

સૌપ્તિકવધ પર્વ :

અશ્વત્થામાના સૈન્યમાં શેષ રદઊઁા — કૃતવર્મા અને કૃપાચાર્ય. વનમાં એક ઉલૂકને પક્ષીઓના માળા ઉપર આક્રમણ કરતો જોઈ રાત્રિના સમયે છલનાપૂર્વક પાંડવો અને પાંચાલોનો વધ કરવાની પ્રેરણા મેળવી તેણે ધૃષ્ટદ્યુમ્ન, શિખંડી, શેષ પાંચાળ સૈન્ય અને દ્રૌપદીના પાંચ પુત્રોનો નિર્દય રીતે વધ કર્યો. આ સમાચાર સાંભળીને દર્યોધન સંતોષપૂર્વક મૃત્ય પામ્યો.

પાંડવો અને વિશેષ તો દ્રૌપદીએ પોતાના પુત્રો અને ભાઈઓના મૃત્યુ પર વિલાપ કર્યો. અશ્વત્થામાનો વધ કરવાની તેણે હઠ પકડી. ભીમ, અર્જુન અને કૃષ્ણ અશ્વત્થામા પાસે પહોંચતાં જ તેણે બ્રહ્માસ્ત્રનો પ્રયોગ કર્યો. સામે અર્જુને પણ બ્રહ્માસ્ત્ર છોડ્યું. નારદ અને વેદવ્યાસની દરમ્યાનગિરિથી અર્જુને પોતાનું બ્રહ્માસ્ત્ર પાછું ખેંચી લીધું, પરંતુ અશ્વત્થામા તેમ કરી શકતો નથી. તેથી બ્રહ્માસ્ત્ર ઉત્તરના ગર્ભનો નાશ કરી શાન્ત થઈ ગયું. અશ્વત્થામા મસ્તક ઉપરનો મણી છીનવી લઈ દ્રૌપદીને આપવામાં આવ્યો. યુધિષ્ઠિરના કહેવાથી દ્રૌપદીએ મણિને પોતાના મસ્તક ઉપર ધારણ કર્યો.

સ્ત્રીપર્વ :

કૌરવ હવે એક પણ શેષ નહિ હોવાના સમાચારથી ધૃતરાષ્ટ્ર શોક સંતપ્ત થઈ જાય છે. કુલની સ્ત્રીઓને લઈને તે રણ ભૂમિ પર ગયો. પુત્રોનાં શબ જોઈ ધૃતરાષ્ટ્રે વિલાપ કર્યો. યુધિષ્ઠિર યુદ્ધ માટે પોતાને જવાબદાર ઠેરવી ધૃતરાષ્ટ્રનાં ચરણોમાં પડી ક્ષમા યાચી.

યુધિષ્ઠિર ગાંધારીનાં ચરણોમાં પડ્યા તો પણ ગાંધારી પોતાના ક્રોધને કાબૂમાં રાખી શકતાં નથી.

તેમની આંખમાંથી નીકળેલા તેજથી યુધિષ્ઠિરના હાથ અને પગના નખ કાળા પડી ગયા. કૃષ્ણે ઈચ્છયું હોત તો આ ઘોર યુદ્ધ અટકી શક્યું હોત, પણ એવું ન થયું તેથી કૃષ્ણને ઉત્તરદાયી માનીને ગાંધારીએ યાદવ વંશના વિનાશ અને કૃષ્ણનું એક વ્યાધને હાથે મૃત્ય થવાનો શાપ આપ્યો. કૃષ્ણે પ્રસન્ન વદને શાપનો સ્વીકાર કર્યો.

સહુનો ઉચિત દાહ-સંસ્કાર કરવામાં આવ્યો.

કુન્તીએ પણ અત્યાર સુધી છુપાવી રાખેલું કર્ણનું રહસ્ય યુધિષ્ઠિરને કદઉ્યું. યુધિષ્ઠિર ખૂબ દુ:ખી થઈ ગયા. યુદ્ધના વિનાશે સર્જેલી વ્યથાએ તેમને જંપવા ન દીધા. એમાં પણ પોતાના સગા મોટા ભાઈનો આમ અજાણતાં, માતાએ વાત છુપાવી રાખી, તેથી વધ થયો એમ વિચારી તે વ્યથિત થઈ ગયા.

શાન્તિપર્વ :

શાન્તિપર્વમાં કથાસૂત્ર ખાસ છે નહિ. તેમાં મુખ્યત્વે ભારતીય મનીષીઓએ વિચારેલા ધર્મ, નીતિના ઉપદેશોનો સંગ્રહ છે. મહર્ષી વ્યાસ વગેરે યુધિષ્ઠિરને રાજધર્મ અને નીતિનો ઉપદેશ આપે છે. યુદ્ધજનિત વિષાદ અને વિશેષ કરીને કર્ણના શોકે યુધિષ્ઠિરને વ્યાકુળ કર્યા. પરિણામે તેઓ રાજયગાદી ઉપર બેસવા તૈયાર ન થયા. દ્રૌપદી, કૃષ્ણ, વ્યાસ, ભીમ, અર્જુન સહુએ એમને સમજાવતાં તે માન્યા.

યુધિષ્ઠિરનો હસ્તિનાપુરની રાજયગાદી પર અભિષેક થયો. તત્પશ્ચાત્ પાંડવો શ્રીકૃષ્ણને સાથ લઈ ગંગા તટે બાણશય્યા પર સૂતેલા પિતામહ ભીષ્મ પાસે આવ્યા. યુધિષ્ઠિરની વિનંતીથી ભીષ્મે તેમને રાજધર્મ અને મોક્ષ સંબંધિત ઉપદેશ આપ્યો.

અનુશાસન પર્વ :

બાણશય્યા પરથી ભીષ્મે યુધિષ્ઠિરને ઉપદેશ આપ્યો. તેમણે ધૃતરાષ્ટ્રને પણ પાંડવોનો પુત્રવત્ સ્નેહ કરવાનો નિર્દેશ કર્યો. બાણશય્યા ઉપર ભીષ્મ અઢ્ઢાવન દિવસ સુધી રદઉ્યા. સૂર્ય ઉત્તરાયણમાં આવતાં ઈચ્છા-મૃત્યુને વરી ભીષ્મે પ્રાણનો ત્યાગ કર્યો.

સ્ત્રીપર્વ :

મહાભારતના યુદ્ધમાં થયેલા વધના પાપનું પ્રાયશ્ચિત કરવા યુધિષ્ઠિરે વ્યાસજીની સલાહથી અશ્વમેઘ યજ્ઞ કર્યો. અર્જુને દિગ્વિજય કરીને પુષ્કળ ધન એકઠું કર્યું. ઉપરાંત વેદવ્યાસજીના પરામર્શથી હિમાલયમાં દટાયેલું મરુત રાજાના અશ્વમેઘ યજ્ઞમાં વધેલું ધન પણ યુધિષ્ઠિરે પ્રાપ્ત કર્યું.

ઉત્તરના ગર્ભમાંથી મૃત બાળકનો જન્મ થયો. સુભદ્રા વગેરે સ્રીઓ શોક કરવા લાગી. કૃષ્ણને ઉત્તરાના ગર્ભને જીવિત કરવા સહુ સ્ત્રીઓએ કાકલુદીઓ કરી. શ્રીકૃષ્ણે આચમન દ્વારા અશ્વત્થામાના અસ્રનો પ્રભાવ ખતમ કરી યોગ બળે ઉત્તરાના પુત્રને સજીવ કર્યો, એનું નામ પરીક્ષિત રાખવામાં આવ્યું.

અશ્વમેઘ યજ્ઞ પૂરો થયો. યુધિષ્ઠિરે પોતાનું સમગ્ર રાજ્ય વ્યાસજીને અર્પણ કરી દીધું. વ્યાસજીએ દાન કરવા માટે તે યુધિષ્ઠિરને પાછું આપી દીધું. ત્યારબાદ કૃષ્ણ પણ દ્વારકા જતા રહ્યા. પછીથી કૃષ્ણ હસ્તિનાપુર ક્યારેય આવ્યા હોય તેવો ઉલ્લેખ નથી.

આશ્રમવાસિક પર્વ :

પાંડવો ધૃતરાષ્ટ્ર અને ગાંધારીની ખૂબ સેવા કરતા હતા હતા, એક માત્ર ભીમને બાદ કરતા. ભીમ કૌરવો સાથેના પોતાના વૈરને ક્યારેય ભૂલી શકતો નથી. તે સતત ધૃતરાષ્ટ્રને કુવાક્યો કહી પોતાની નારાજગી પ્રગટ કરતો રહેતો હતો. તેથી ધૃતરાષ્ટ્રને અસહ્ય દુ:ખ થતું હતું. વ્યાસ સાથે પરામર્શ કરીને યુધિષ્ઠિરે ધૃતરાષ્ટ્રની ઈચ્છાથી એમના વનગમનની તૈયારી કરી. જતાં પહેલાં ધૃતરાષ્ટ્રે મૃત પુત્રોનું શ્રાદ્ધ કર્યું. ધૃતરાષ્ટ્ર, ગાંધારીની સાથે વિદુર પણ વનમાં ગયા. પોતાના સાસુ-સસરા જેવાં જેઠાણીની સેવા કરવા માટે કુન્તી પણ વનમાં ચાલ્યા ગયાં. કેટલાક દિવસો પછી યુધિષ્ઠિર ધૃતરાષ્ટ્રને મળવા સપરિવાર વનમાં ગયા. વનમાં લાગેલા અગ્નિમાં ધૃતરાષ્ટ્ર, ગાંધારી અને કુન્તી ભસ્મ થઈ ગયાં. નારદજી દ્વારા યુધિષ્ઠિરને આ સમાચાર મળે છે. આ રીતે કુરુવંશની એક પેઢીનો અંત આવી ગયો.

સ્ત્રીપર્વ :

ગાંધારીએ યાદવોને આપેલા શાપની અવધિ નજીક આવી ગઈ હતી. દુર્વાસા મુનિની મશ્કરી કરવાને કારણે તેમણે કૃષ્ણ પુત્ર સામ્બને ગર્ભમાંથી મુશલ ઉત્પન્ન થવાનો શાપ આપ્યો હતો તે મુશળ ઉત્પન્ન થયું. તેને સમુદ્રમાં નાના ટૂકડા કરીને ફેંકી દેવામાં આવ્યું.

મહાભારત યુદ્ધ પછી છત્રીસમા વર્ષે યાદવો પ્રભાસપાટણ ગયા. પાછળ સ્ત્રીઓ દ્વારકામાં રહી. પ્રભાસમાં એકઠા થયેલા યાદવોએ મદિરાપાન કર્યું. કૃતવર્મા અને સાત્યકિ વચ્ચેનું વાગ્યુદ્ધ દ્વન્દ્વમાં પરિણમ્યું, તેમાં કૃતવર્મા માર્યો ગયો. કુટુંબીઓએ સાત્યકિને મારી નાખ્યો. યાદવ યોદ્ધાઓએ પરસ્પર લડીને સ્વયં પોતાનો અંત આણ્યો. વ્યથિત છયેલા કૃષ્ણ એક વૃક્ષને અઢેલીને બેઠા હતા ત્યારે એક પારધીએ મૃગની ભ્રમણામાં તેમના ઉપર બાણ-પ્રહાર કર્યો. કૃષ્ણ ગયા. અર્જુનને કહેવડાવ્યું હોવાથી અર્જુન આવીને, સહુના અગ્નિ-સંસ્કાર કરી,દ્વારકા આવી વિલાપ કરતી કૃષ્ણ પત્નીઓને લઈને હસ્તિનાપુર આવી રહ્યો હતા ત્યારે આભીરોની ટોળી તેના ઉપર આક્રમણ કરીને લૂંટી ગઈ. કૃષ્ણની કેટલીક સ્ત્રીઓને તેઓ પરાણે લઈ ગયા. કેટલીક સ્વયં તેમની સાથે ચાલી ગઈ.

કૃષ્ણ જતાં અર્જુનનું અર્જુનત્વ પણ ચાલ્યું ગયું.

મહાપ્રસ્થાનિકપર્વઃ

અર્જુન પાસેથી યાદવોના સર્વનાશ અને કૃષ્ણના સ્વધામ ગમનના સમાચાર સાંભળી યુધિષ્ઠિરે પણ યોગ્ય સમય જોઈ મહાપ્રસ્થાનનો નિશ્ચય કર્યો. પરીક્ષિતનો રાજ્યાભિષેક કરી, યુયુત્સુ અને સુભદ્રાને તેની સંભાળ રાખવાની ભલામણ કરી.

સ્ત્રીપર્વ :

પાંડવો તેમની સદાયની સંગિની દ્રૌપદી સાથે ઉત્તર તરફ ચાલી નીકળ્યા. સૌ પ્રથમ દ્રૌપદી, ત્યારબાદ એક પછી એક ચાર પાંડવો પણ મૃત્યુને શરણે થયા. અન્તે યુધિષ્ઠિર તેમના શ્વાન (ધર્મ) સાથે આગળ વધ્યા. ઈન્દ્રએ એમને શ્વાનને છોડીને રથમાં બેસી લઈ જવાનો પ્રસ્તાવ કર્યો. પરંતુ યુધિષ્ઠિર શ્વાનને છોડીને સ્વર્ગમાં જવા ઉત્સુક ન હતા. ત્યારે ઈન્દ્રે શ્વાનરૂપી સ્વયં ધર્મરાજનો પરિચય આપી, તેમને સ્વર્ગમાં સત્કાર્યા.

સ્વર્ગારોહણપર્વઃ

કેટલાક વિદ્વાનો સ્વર્ગારોહણ પર્વને મૂળ મહાભારતનો ભાગ માનતા નથી. ખરેખર તો મહા-પ્રાસ્થાનિક પર્વ આગળ જ મહાભારતની કથા પૂરી થઈ જવી જોઈએ. પરંતુ સુખાન્તમાં માનતી ભારતીય પરંપરાએ પાંડવોના મૃત્યુથી જન્મેલ વિષાદનું પ્રમાર્જન કરવા જ કદાચ આ પર્વનું આયોજન કર્યું હોય એમ લાગ્યા વિના રહેતું નથી. સમીક્ષિત આવૃત્તિમાં આ પર્વ સમાવિષ્ટ છે.

સ્વર્ગમાં પ્રવેશી યુધિષ્ઠિરે દુર્યોધનને દિવ્ય સિંહાસન ઉપર બેઠેલો જોઈ ખુશ થતા નથી. આ માટે ઈન્દ્રે તેમણે પૂછેલા પ્રશ્નનો નારદજી જવાબ આપે છે કે, ક્ષાત્રધર્મનું પાલન કરવાને કારણે એમને સ્વર્ગમાં પ્રવેશ મળ્યો છે. યુધિષ્ઠિરે પોતાના ભાઈઓ અને દ્રૌપદીને મળવાની ઈચ્છા પ્રકટ કરી.

યુધિષ્ઠિર નરકમાં પહોંચતાં જ ત્યાં સુવાસ ભરી હવા વહેવા લાગી અને ત્યાં રહેલા કર્ણ, દ્રૌપદી, અર્જુન, સહદેવ, દ્રૌપદીના પુત્રો વગેરેની પીડા ઓછી થઈ ગઈ. એક મુહૂર્ત સુધી યુધિષ્ઠિર નરકમાં જ ઊભા રહ્યા. થોડીકવાર પછી દેવેન્દ્ર અને ધર્મ ત્યાં આવ્યા. નરકનું દૃશ્ય અદૃશ્ય થઈ ગયું. આ વાસ્તિક નરક ન હતું, અહીં પણ દેવોએ તેમની પરીક્ષા લીધી હતી. યુધિષ્ઠિરનું કોઈ સ્વજન નરકમાં નહતું. આ તો માયા હતી.

શરીરની સાથે સાથે દ્વેષ, વૈર-વિરોધ, માનવી દુર્બળતાઓથી પણ નિવૃત્ત થઈને ધર્મરાજ યુધિષ્ઠિર પૂર્ણરૂપે પવિત્ર બની ગયા. મોટાભાઈ કર્ણ અને અન્ય ભાઈઓ ધૃતરાષ્ટ્રના પુત્રોની સાથે સાથે ક્રોધરહિત દૈવી સ્થિતિમાં દેવતાઓ અને ઋષિ-મુનિઓથી પૂજિત થઈને શાંતિપૂર્વક યુધિષ્ઠિરે સ્વર્ગમાં નિવાસ કર્યો.

આ રીતે, મહાભારતનાં મુખ્ય અઢાર પર્વોમાં કુરુ-પાંડવોની કથા કહેવામાં આવી છે. આ ઉપરાંત અનેક ઉપાખ્યાનો પણ એમાં સંગ્રહાયોલાં છે જે મહાભારતને એક 'રાષ્ટ્રીય સંહિતા' હોવાનું ગૌરવ અપાવે છે. ✲✲✲

'મૃચ્છકટિક' નું વસ્તુગૂંફન

– પ્રા. ભરત કિશોરી

◆ **મૃચ્છકટિક નાટકનું વસ્તુગ્રંથન :**

સંસ્કૃત નાટ્ય સાહિત્યના ઇતિહાસમાં વસ્તુ-ગ્રથનને વધુમાં વધુ જો કોઈએ માણ્યું હોય તો તે મૃચ્છકટિકના કર્તા શૂદ્રકે. વસ્તુગ્રથનની એકથી વધુ ભાતો છે. અને બધી ભાતો પરસ્પર નજરે ન ચઢે તેવી રીતે સંકળાયેલી છે. વસ્તુગ્રથન એ તાત્ત્વિક રીતે બૌદ્ધિક કળા છે અને એ રીતે મૃચ્છકટિકનો કર્તા પ્રખર બુદ્ધિ પ્રતિભા ધરાવે છે અને પોતાની વસ્તુગ્રંથનની કળા-સંવિત્તિને શૂદ્રકે નાટકના પ્રકરણ પ્રકારને પસંદ કરી વિશાળ ફલક પર દાખવી છે.

ડૉ. શયડરે મૃચ્છકટિકની પ્રસ્તાવનામાં નાટકના વસ્તુગ્રથન વિશે કેટલાંક નિરીક્ષણો કર્યાં છે, જે સમીક્ષણ માંગી લે છે. તેઓનાં નિરીક્ષણો આ પ્રમાણે છે –

૧. નાટક ખૂબ લાંબું છે.
૨. બીજાથી પાંચમા અંક દરમ્યાન આપણે લગભગ એ વાતને વિસરી જઈએ છીએ કે મુખ્ય વસ્તુ ચારુદત્ત–વસન્તસેનાના પ્રેમને નિરૂપતું છે.
૩. મૃચ્છકટિકમાં બે નાટકોનું કથાવસ્તુ છે.

નાટક લાંબુ છે એ વાત સાચી છે. પણ તેની લંબાઈ ક્યાંય રસમાં બાધાજનક નીવડતી નથી કે ક્યાંય નાટક લંબાઈને કારણે લથડતું હોય, ટાંટિયા ઘસડતું ગતિ કરતું હોય તેવું પણ જણાતું નથી.

વસ્તુફલક વિશાળ છે. એક બૃહદ્‌પટ પર નાટ્યકારે વસ્તુનું આલેખન કર્યું છે. પણ તેની લંબાઈ સાર્થક છે. વસ્તુગ્રંથન દસ અંકનું, પ્રકરણના વિશાળ ફલક પર કરવામાં આવ્યું છે. એટલે તેને અજોડ કૃતિ કહેવામાં આવી છે. કારણ કે, નાટ્યદુનિયાની જાણીતી બધી જ તસવીરોનો આમાં સમાવેશ થઈ ગયો છે. આટલા વિશાળ ફલક પર વસ્તુગ્રંથન કરવામાં આવ્યું હોય છતાં નાટ્યકારે ક્યાંય ઝોકું ખાધું નથી. અતંદ્રતાથી નાટ્યકાર શૂદ્રકે નાટકનું સંવિધાન રચ્યું છે – અને ગ્રંથન ચુસ્ત છે. નાટકમાં બિનજરૂરી કશું ઉલ્લેખ નથી પામ્યું. અને જે ઉલ્લેખ પામ્યું છે તેનો ક્યાંક ને ક્યાંક નાટ્યાત્મક વિનિયોગ સધાયો છે. નાટકને પાને પાને નાટ્યકારની સજગતા અને સાભિપ્રાયતાના પુરાવાઓ જડે છે. अस्मद् भागधेयं कुटिलेन दण्डकाष्टेन કહેતા વિદૂષકની વાંકી-ચૂકી લાકડીની પણ મહત્તા છે, તો જિર્ણ વૃદ્ધે આપેલા જાતિકુસુમવાસિત ઉપરણાની પણ નાટકમાં ઉપયોગિતા છે.

બીજાથી પાંચમા અંક દરમ્યાન મુખ્ય કાર્ય થંભી જાય છે એ મુદ્દો પણ વિચારણીય છે. બીજા અંકમાં જુગારોનું દશ્ય આવે છે. જેને મુખ્ય કાર્ય સાથે સંબંધ શો એમ પહેલી દષ્ટિએ પ્રશ્ન થાય. આ જુગારી-ઓના દશ્યમાંથી સંવાહકનું પાત્ર મુખ્ય કથાવસ્તુના નાયક-નાયિકા સાથે છેવટે સંકળાય છે. ચારુદત્તના ઘરનો એક વખતનો સંવાહક અત્યારે જુગારી છે. જુગારીઓથી ત્રાસીને તે વસંતસેનાના ઘરમાં ભરાય છે. અને વસંતસેના તેને ઋણમુક્ત કરે છે. વસંત-સેનાના ચારુદત્ત પ્રત્યેના સ્નેહની અભિવ્યક્તિ થાય છે. આ સંવાહક દુન્યવી બાબતોથી ત્રાસીને છેવટે બૌદ્ધ સાધુ બને છે જે આખરે – વસંતસેનાને ઉગારે છે. કર્ણપૂરકના દશ્યમાં કર્ણપૂરક એ જ સંવાહક, જે હવે બૌદ્ધ સાધુ બન્યો છ, તેને બચાવે છે.

ચારુદત્ત પાસેથી વિદૂષક પેલો જાતિકુસુમવાસિત ઉપરણો ઈનામમાં મેળવે છે. આ ઉપરણાને ફરી એક વાર પહેલા અંકની જે વસંતસેના પોતાની આસપાસ વીટીંને પોતાના સ્નેહીની સેન્દ્રિય ઉત્કટતા પ્રગટ કરે છે. એટલે બીજો અંક છે તો છેલ્લો અંક છે.

ત્રીજા અંકમાં ચોરીનું દશ્ય આવે છે. ત્યારે પણ પ્રશ્ન એ થાય કે, શર્વિલકને મુખ્યનાયક-નાયિકા

સાથે કોઈ સંબંધ ખરો ? નાટ્યકાર આલેખન એ પ્રકાર કરે છે કે જાણે કોઈ સંબંધ ન હોય ! એટલું નાટ્યકારનું વસ્તુગ્રંથન પરનું પ્રભુત્વ છે. શર્વિલક વસંતસેનાની દાસી મદનિકાને ચાહે છે. ચારુદત્તના ઘરમાંથી આભૂષણો ચોરે છે. આ આભૂષણો વસંત-સેનાનાં છે.

વસંતસેના પોતાનાં આભૂષણો પાછાં મેળવીને, ઉદારતાથી મદનિકાને મુક્ત કરે છે. વસંતસેનાના આ ઔદાર્ય ને શર્વિલક કઈ રીતે વિસરી શકે ? અને એટલે જ છેવટે, વસંતસેનાનાં આ આભૂષણો ચારુદત્ત—વસંતસેનાના સ્નેહને ગાઢ બનાવવામાં અને મિલનમાં ઉપયોગી બન્યાં છે – આભૂષણોએ બન્નેના સ્નેહની એક romantic પૂર્વભૂમિકા પૂરી પાડી છે. જેનો પ્રકર્ષ પાંચમા અંકમાં સધાય છે. વસંતસેના ચારુદત્તને 'દ્યૂતકર' કહીને સંબોધે છે. તેની પાછળ આ ભૂમિકા છે. કાર્યપ્રવાહને પુષ્ટ કરનારાં કેટલાંક કથાનકો આ બેથી પાંચ અંકો દરમ્યાન ઉમેરાય છે. એટલે બેથી પાંચ અંકો દરમ્યાન ચારુદત્ત વસંતસેનાની પ્રણય બેલડી સાથે કોઈને કોઈ રીતે પાત્રો સંકળાતાં જતાં હોવાથી આપણે ક્યારેય તેમનો પ્રેમ એ મુખ્ય નિરૂપ્ય વસ્તુ છે વાતને વિસરતા નથી.

ડૉ. રાયડરનું સૂચન – "પહેલા અંકનો મોટો ભાગ, સાથે છથી દસ અંકો મળીને એક નાટક રચાય અને પહેલા અંકનો મોટો ભાગ, સાથે છથી દશ અંકો મળીને એક નાટક રચાય અને પહેલા અંકનો છેવટનો ભાગ અને ત્રણથી પાંચ અંકની સમાગ્રીમાંથી એક હળવી નાટિકા રચી શકાય." વ્યવહારુ લાગતું નથી. ત્રણથી પાંચ અંકની સામગ્રી સિવાય બીજો પક્ષ ઉમેરીને છ થી દસ અંકો કેવી રીતે સંભવી શકે ? એટલે આ સૂચન યુક્તિસંગત કે વ્યાવહારું નથી એટલે હેન્રી વેલ્સ કહે છે તેમ – વળી બીજી રીતે પણ આ નાટકનું વસ્તુગ્રંથન નિવારી શકાય છે. નાટકમાં રાજકીય કથાવસ્તુ પણ ભેળવાએલું છે. 'ભેળવાએલું' શબ્દ ઠીક નથી. ચર્ચાને અંતે જણાશે કે, સંયોજાએલું છે. રાજકીય વસ્તુગૌણ છે. અને ચારુદત્ત-વસંતસેનાનો પ્રણય એ મુખ્ય નિરૂપ્ય વસ્તુ છે. ગૌણ અને મુખ્ય કથાવસ્તુનો સંબંધ નિરૂપવામાં લેખકે પોતાની અપ્રતિમ કલાત્મકતા દર્શાવી છે. મુખ્ય અને ગૌણ કથાવસ્તુ એકબીજાથી છૂટાં ન પાડી શકાય તે રીતે ગ્રંથન પામ્યાં છે. મુખ્ય કથાવસ્તુમાંથી આપણું ધ્યાન વિચલિત ન કરે તે રીતે તેનું નિરૂપણ થયું છે. ગૌણ કથાવસ્તુનો વિષય રાજ્યપલટો છે, રાજકીય ક્રાંતિ છે. રાજકીય કથાવસ્તુના મોટે ભાગે આછા નિર્દેશો થયા છે. ડૉ. જી.કે. ભટ્ટ બહુ સુભગ શબ્દ પ્રયોજે છે – જાણે કે તે દરમ્યાન રાજકીય ક્રાંતિની તડામાર પણ ચૂપચાપ તૈયારીઓ ચાલે છે. એટલી ગુપ્તતાથી આ રાજકીય કાવતરાં ઘડાઈ રહ્યાં છે કે સર્વજ્ઞની સ્થિતિમાં રહેતા વાચક ને પણ એની જાણ થતી નથી. તૈયારીઓ થઈ ચૂક્યા પછી તે સપાટી પર આવે છે. સપાટી પર ઉપસાઈ આવીને પણ ચારુદત્ત વસંતસેનાની વાર્તામાંથી ધ્યાન ચ્યુત કરનારું તો બનતું જ નથી. પણ મુખ્ય કથાવસ્તુને પોષક બને છે. લેખકે આ ગૌણ કથાનકના મુખ્ય કથાનક સાથેના સંબંધને અત્યંત કલાત્મકતાથી નિભાવ્યો છે.

ગૌણ કથાવસ્તુ સાથે સંબંધ ધરાવનારાં પાત્રો છે આર્યક, શર્વિલક, ચન્દક, દર્દુરક, અને વિટ. આટલાં પાત્રો તો રંગમંચ પર આવે છે. આ સિવાયનાં પાત્રો સૂચિત છે, જુલ્મી પાલકથી અસંતુષ્ટ એવા બધાં પાત્રો શર્વિલકના નેજા હેઠળ એકત્ર થઈ રહ્યાં છે. રેભિલ શર્વિલકનો મિત્ર છે એટલે કોઈક રીતે તે શર્વિલકને મદદ કરનારો હશે. વિટ અને ચન્દક આમ તો મુખ્ય કથાનક સાથે સંબંધ ધરાવે છે. વિટ તો છેક છેલ્લે વિપ્લવવાદીઓની ટોળકીમાં જોડાય છે. ચન્દક શર્વિલકનો મિત્ર છે અને શર્વિલકનો તેના પર મોટો ઉપકાર છે. તે શર્વિલકને પ્રાણપ્રદ મિત્ર તરીકે ઉલ્લેખે છે. આટલા બધા શબ્દોમાં એ વાત કહેવાઈ નથી. પણ ગૌણ કથાનકનાં સૂચનો તો નાટકમાં ઠેર ઠેર વેરાયેલાં છે.

(૧) સ્રગ્ધરાને જિર્ણવૃદ્ધ વિશેના ઉલ્લેખો જિર્ણ વૃદ્ધ, ક્યારે કુપિત રાજા પાલકથી નવવધૂના કેશની જેમ તને છેદાતો જોઈશ ?'

(૨) બીજા અંકમાં દર્દૂરકનો 'આર્યક રાજા થવાનો' તેવો સિદ્ધાદેશનો ઉલ્લેખ

(૩) ત્રીજા અને ચોથા અંકનો શર્વિલક. પાલકે આર્યકને જેલમાં નાખીને હુમલો કરી દીધો છે.

(૪) છઠ્ઠા અંકમાં શર્વિલકના પ્રયત્નોને પરિણામે આર્યકની જેલમાંથી મુક્તિ.

(૫) સાતમા અંકમાં પ્રવહણવિપર્યયને કારણે ચારુદત્ત આર્યકનું મળવું તે, ચારુદત્તની આર્યકને સહાય.

(૬) આઠમા અંકમાં વિટનું શકારને ત્યજીને ક્રાંતિકારીઓ સાથે જોડાવું.

(૭) ગૌણ કથવસ્તુને કારણે જ ચારુદત્તનું નવમા અંકમાં ન્યાયાલયમાં મૌન અને પરિણામે તેના પર વસંત સેનાના ખૂનના આરોપનું પુરવાર થયું.

(૮) દશમા અંકમાં રાજકીય ક્રાંતિનું સફળ થવું.

- પાલકને આર્યક હણે છે. તે પોતે રાજા બને છે. શર્વિલક આવે છે. ને રાજ્યક્રાંતિમાં સહાયભૂત થનારા સૌને યોગ્ય પુરસ્કાર મળે છે.
- એટલે મુખ્ય અને ગૌણ કથાવસ્તુ એકબીજાથી અવિયોજ્ય છે. મુખ્ય અને ગૌણ બન્નેના નિર્વહણનો આધાર પણ પરસ્પર છે. ગૌણ કથા વસ્તુનાં પાત્રો કોઈને કોઈ રીતે મુખ્ય કથાવસ્તુનાં પાત્રો સાથે સંબંધમાં છે. તેઓ પ્રત્યે આદર ધરાવે છે. અથવા તો સહાય કરે છે અને પછી તે બળવાખોરોમાં ભળી જાય છે.
- દર્દુરકે માથુર સાથે વિરોધ વ્હોર્યો એટલે તે વિપ્લવ વાદીઓ સાથે જોડાય છે.

શર્વિલકે ક્રાંતિને સફળતાપૂર્વક પાર પાડી છે. તેણે જ આર્યકના હકનું રાજ્ય પડાવી લીધું હશે, અને આર્યક નિર્વાસિત બન્યો હશે. પણ જ્યોતિષી-ઓના કથનને કારણે વિક્ષુબ્ધ બનીને આર્યકને જેલમાંથી છોડાવે છે. આર્યક ભાગી જાય છે. છેવટે તે પાલકને હણે છે.

પાલક દુષ્ટ તો જણાય છે. શરૂઆતમાં સૂત્રધારની ઉક્તિમાંથી જ પાલકની દુષ્ટતા પ્રતિપાદિત થાય છે. તેના જુલ્મથી પ્રજા ત્રાસી હશે. એમાં વળી નિર્દોષ આર્યકને જેલમાં નાખવાથી રાજભક્ત પ્રજાજનોની લાગણી દુભાઈ હશે. વળી[૧] આ અસંતોષને વ્યાપક બનાવવાનું કામ તો, તેના સાળા શકારે જ કર્યું હશે કારણ કે તે જુલ્મી મદાંધ રાજસત્તાનું પ્રતિક બનીને આવે છે.

(૨) બૌદ્ધ ભિક્ષુઓને તણે અકારણ પીડયા છે –

(૩) નગરની સ્ત્રીઓ તેને કારણે સહી સલામતી અનુભવતી નથી અને છેલ્લે સમસ્ત નગરીનો આદર ધરાવનાર ચારુદત્તને પાલકે મૃત્યુની સજા કરી હોવાથી પણ આ અસંતોષ ભભૂકી ઉઠ્યો હોય, જે છેવટે રાજપલટામાં પરિણમ્યો હોય, પણ આ સર્વ ઉપકારવશ છે.

શર્વિલક વસંતસેનાથી ઉપકૃત છે, આર્યક ચારુદત્તથી. ચારુદત્તના મિત્ર રેભિલને ઘરે શર્વિલક પોતાની પત્ની મદનિકાને રાખે છે. ચન્દનકને ચારુદત્ત વસંતસેના પ્રત્યે માન છે. વિટ પણ આ બન્ને પ્રત્યે આદર ધરાવે છે. જો આર્યક રાજા ન બને તો, ચારુદત્ત-વસંતસેના સુખપૂર્વક જીવી ન શકે, એટલું જ નહીં પણ વસંતસેના ગૃહિણીપદ પણ પ્રાપ્ત ન કરી શકે. અને જો આર્યકને ચારુદત્તે સહાય ન કરી હોત તો તે પકડડાઈ ગયો હોત ને પરિણામે ક્રાંતિ સફળ ન થાત. પણ આર્યકને સહાય કરી માટે જ તે પોતાના પર આવેલા વસંતસેનાના ખૂનના આરોપનો જવાબ ન આપી શક્યો, મૌન રહ્યો. આમ આ બન્ને કથાવસ્તુઓનો પરસ્પરનો સંબંધ અવિભાજ્ય છે. વળી પ્રણયવસ્તુને એક જીવનથી ધબકતી વાસ્તવિક સૃષ્ટિ સાંપડે છે. એ ગૌણ કથાવસ્તુનું બીજું સાર્થક્ય.

મુખ્ય કથાનકનાં નાયક-નાયિકાનાં ભાગ્યને રાજ્યના ભાગ્ય સાથે જોડીને નાટ્યકારે ઊંચા પ્રકારની સર્જકતા દાખવી છે. વિદ્વાનો એવો મત ધરાવે છે કે ગૌણ કથા વસ્તુનો મુખ્ય કથાવસ્તુ સાથેનો સંબંધ શિથિલ છે, તે માન્યતા બરાબર નથી.

નાટ્યકારે વસ્તગ્રથનમાં અપ્રતિમ કુશળતા દાખવી છે. લેખકે નિર્જીવ પદાર્થોનો પણ નાટ્યાત્મક ઉપયોગ કર્યો છે. આભૂષણો તો આખાય નાટકમાં વ્યાપેલાં છે. દીવો, વિદૂષકની લાકડી, માટીનું ગાલ્લું ઉપરણો વગેરેને લેખકે નાટ્યાત્મક રીતે પ્રયોજ્યાં છે.'

લેખકની કલાકાર તરીકેની સંપ્રજ્ઞતા તો વસ્તુ ગ્રંથનમાં પદે પદે પ્રતીત થાય છે. પહેલા અંકમાં વસંતસેના બહાર છે, શેરીમાં તો બીજા અંકમાં ચારુદત્ત વસંતસેનાની સર્વ માનસિક ગ્રંથિઓને અતિક્રમી જઈને સ્નેહ પ્રકર્ષને સાધે છે. તો ત્યાર પછીથી સ્થૂલ વિઘ્નો તેમના પર ખડકાય છે. આભૂષણોથી ચારુદત્તના દરિદ્ર ઘરમાં સમૃદ્ધિ તો આવે છે, પણ સાથે વિષાદ પણ લાવે છે. માટીના ગાડામાં નાટ્યકારે રથની ગતિ ફૂંકી છે. પોતાનું હૃદય ચોરાઈ ગયું હોવાથી, શર્વિલક કોઈકના ઘેર ખાતર પાડે છે. ઘરફાડું શર્વિલક જેલ પણ તોડે છે. આવી અસંખ્ય નાની નાની વક્રતાઓથી લેખકે નાટક ખરડી દીધું છે અને કેલિડોસ્કોપીય વિવિધરંગી સૌંદર્ય જન્માવ્યું છે. નાટકના વિશાળ પ્રાસાદમાં આવી નક્શીઓનું નિરીક્ષણ પણ અતિ આહ્લાદક નીવડે તેમ છે.

એટલે નાટ્યકારે પોતે આરંભમાં અને છેલ્લે, ડોકિયું કરીને अहो संविधानकम् જેવું આત્મપ્રશંસાત્મક કથન કર્યું છે, તે સર્વથા ન્યાય્ય કરે છે.

● ● ●

•••••• આજીજી •••••

"મા મને ! તું આ જગતમાં આવવા દે,
આંગળી પકડીને તારી ચાલવા દે મા !
મને તું આ જગતમાં આવવા દે,

વંશનું તુજ બીજ કો ફણગાવવા દે,
ગોરમાની છાબ લીલી વાવવા દે,
તું પરીક્ષણ ભ્રૂણનું શાનું કરે છે ?
તારી આકૃતિ ફરી સરજાવવા દે.
ઢીંગલી, ઝાંઝરને,ચણિયાચોળી,
મ્હેંદી બાળપણનાં ગીત પ્રગટાવવા દે,
વહાલની વેલી થઈ ઝુલીશ દ્વારે,
આંગણે સંવેદના મહેકાવવા દે,
સાપનો ભારો નથી, તુજ અંશ છું હું,
લાગણીના બંધને બાંધવા દે,
મા આ જગતમાં મને આવવા દે"

પ્રિ. ડૉ. અભય વી. પરમાર

मुमताज के हस्ताक्षर

– मालिनी गौतम

''सादिक''... मालिशवाली बाई मुमताज की बारीक और तीखी-सी आवाज ओटले के खुले हुए दरवाजे पर गूँजी। उस आवाज को सुनते ही बगीचे की नर्म धूप में अपने पालने में लेटा पाँच महिने का सात्विक खिलखिला कर हाथ-पांव उछालने लगा। इतने छोटे बच्चे भले ही बोल नहीं पाते, चल नहीं पाते लेकिन वे खूब समझते है, दुलारने-पुचकारने वाली आवाजों को, पहचानते हैं चेहरो को, यहां तक कि हाथों के स्पर्श भी उनके लिए अपने-पराये होते है। अपनी परिचित आवाजों को सुनकर वे मुस्कराते हैं, खिलखिलाते हैं और सुरक्षित लगती गोदों में रोते नही, सूकुन से सिमट जाते है।

मुमताज की आवाज सुनकर सात्विक की दादी ने मुँह बिचकाते हुए कहा –

''यह लो, आ गयी तुम्हारी चहेती। अच्छे खासे नाम को मुसलमान बनाकर रख दिया है इसने''

बडबडाते हुए दादी अपनी लाठी लेकर ठक-ठक करती हुई घर के अंदर चली गयीं, उनके सोने का समय हो रहा था। मनस्विनी ने कई बार मुमताज़ को सही नाम बोलना सिखाने की कोशिश की थी, लेकिन मुमताज की ज़ुबान हमेशां लड़खड़ा जाती और उसके मुँह से सात्विक की जगह सादिक ही निकलता।

सात्विक के पालने के पास ही मनस्विनी धूप में चटाई बिछाकर लेटी हुई थी। इस बरस ठंड इतनी अधिक पड़ रही थी कि घर के अंदर दीवारें और फर्श तो मानों हिमालय-कश्मीर हुए जा रहे थे। रसोई के अलावा घर के अन्य कामों के लिए बाई आती थी, तो मनस्विनी जैसे-तैसे खाने वगैरह का काम निपटाकर पूरे दिन बगीचे वाले हिस्से में ही रहती। बगीचे के आधे भाग में शाम चार बचे तक धूप आती थी। यहाँ सात्विक को भी नर्म-नर्म धूप का सेंक मिलता और मनस्विनी भी अलसाई सी पडी रहती।

मुमताज़ सात्विक के पालने के पास बैठ कर जोर-जोर से तालियाँ बजाते हुए उसे खिलाने लगी।

''सादिक... सादिक... म्हारो दीकरो...''

मुमताज की बारीक आवाज सुनकर जितना सात्विक खिलखिलाता, उससे दोगुना हँसी मुमताज के चेहरे पर फैल जाती। मस्जिद के आसपास की किसी पतली-सँकरी गली में रहती मुमताज सुबह-सबेरे ही निकल जाती अपने घर से जच्चा-बच्चा की मालिश करने और उन्हे नहलाने के लिए। यूँ तो इस कस्बेनुमा गाँव में और भी कई मालिशवालियाँ थीं, लेकिन मुमताज का स्वभाव ही कुछ ऐसा था कि सब उसे ही बुलाना पसंद करते। अलग-अलग घरों में माएँ बच्चों को अलग-अलग समय पर मालिश करवाना पसंद करती थीं। किसी को सुबह का वक्त ठीक लगता तो किसी को ग्यारह – बारह बजे का, तो कोई दोपहर दो-तीन बजे तक मालिश करवाना पसंद करती। लेकिन मुमताज सबका समय संभालना जानती थी। कोई बच्चा अगर सो रहा हो और उसकी माँ अगर उसे जगाना न चाहे तो फुर्सत होने पर मुमताज आधा घंटा बैठकर इंतजार भी कर लेती, बतियाती रहती जमाने भर की बातें उसकी माँ से। इसीलिए गाव भर में जन्म लेने वाला बच्चा मोहन हो या रोनी, अशफ़ाक हो या बलविंदर, मालिश के लिए मुमताज़ की पहली पसंद थी। बिते भर के बच्चे को अपने पैरों की पिंडलियाँ पर उल्टा लिटाकर, जब मुमताज सिर से पैर तक मालिश करती, तब शुरुआत में कितने ही दिनों तक उसके सधे हुए गोल-गोल घूमते हाथों के साथ संगत करती बच्चे के रोने की लयबद्ध आवाज को देखने सुनने के लिए पूरा घर इकट्ठा हो जाता। बच्चों को नहलाकर, तैयार करने के बाद मुमताज़ उसे एक बडे से महीन, नरम, धोतीनुमा कपड़े में कसकर बांध देती। बच्चों को बांधने का मुमताज़ का यह अंदाज निराला ही था। वह कहती कि बच्चे अच्छी नींद सोते हैं इस तरह बाँधने से। छोटे- छोटे बच्चों पर ऐसा तो नशा चढ़ता मुमताज़ की मालिश का कि वे आंखे मूँदे चार-पाँच

छः घटें तक सोते ही रहते। घर भर को राहत मिलती और माएँ भी अपने बचे खुचे काम निपटाकर बच्चे से लगे लगे ही सो जाती।

सात्विक को पालने से निकालते हुए मुमताज ने पूछा –

''कर दूँ न मालिश अभी''

मनस्विनी ने अलसाए स्वर में कहा –''हाँ कर दो। अंदर से इसका तेल लेती आओ जरा।''

कपड़े उतारकर मुमताज़ ने सात्विक को पैरों पर उल्टा डाला और उसके सधे हुए हाथ गोल-गोल घूमने लगे। सात्विक एक गोल-मटोल बच्चा था, जो अपने दूध में केसर मिले रंग, घुँघराले बाल, काजल लगी आँखें और माथे पर लगे काले टीके से किसी का भी मन एक ही बार में मोह लेता था। मालिश करवाते वक्त अब वह रोता नहीं था बल्कि किलकारियाँ मारकर हँसता था। पिछले कुछ दिनों से ठंडे मौसम के कारण सात्विक को सर्दी हो गयी थी। कई बार सोते समय उसकी नाक बंद हो जाती और वह रोने लगता। अभी जब वह हाथ-पैर उछाल रहा था, उसकी छाती में से कफ जमा होने के कारण घुर्र...घुर्र की आवाज आ रही थी। मुमताज़ बोली–''मनु बेन सादिक की दवा करायी की नहीं ?''

इस छोटे से कस्बे के इकलौते पीडियाट्रिक के पास मनु और शशांक दो-तीन बार सात्विक को ले जा चुके थे, लेकिन उसकी दी हुई दवाईयाँ से कोई फर्क पड़ ही नही रहा था।

''आज भईलू को मालिश करके सीधे कपड़े पहनाएगी, नहलाना नही है वरना और सर्दी हो जायेगी।''

मनस्विनी ने सिर हिला कर हामी भरी। सात्विक को तैयार करके मुमताज़ ने उसे कपड़े में बाँधा और झूले में डाल दिया। सात्विक तुरंत सो गया। बगीचे में रखे हुए मुड्डे पर बैठकर मुमताज़ उसे झूला देती रही। मनस्विनी ने कहा –

''अब कहाँ जाओगी ? कोई घर बाकी है मालिश के लिए या सीधे अपने घर जाओगी ?''

मनस्विनी की आवाज़ शायद मुमताज़ के कानों के उपर होकर निकल गयी। वो शून्य मे निहारती हुई सात्विक को झूला देती रही।

यूँ तो परेशानियों और मुमताज़ का चोली-दामन का साथ था। मुमताज़ की आर्थिक स्थिति कुछ खास न थी। अरबवाले की एक सँकरी सी गली में जहाँ दोनों तरफ गटर की नालियाँ उफनती रहतीं, मुर्गी के चूजे इधर-उधर दौड़ लगाते रहते, घरों के बाहर अंडों के छिलके और कचरे का ढेर लगा होता, मुमताज़ का दो कमरे और किचन का कच्चा-पक्का मकान था। उसका आदमी रिक्शा चलाता था। रिक्शा मालिक को भाड़ा चुकाने के बाद उसके हाथ में कुछ खास पैसा नहीं बचता था। मुमताज़ की सास शाहनाज़ बानू ने अपना सारा हूनर मुमताज़ को सिखा दिया था। जज्जा-बच्चा की मालिश, बच्चों की छोटी-मोटी बीमारियों के देसी नुस्खे, और जरूरत पड़ने पर बिना नाक मुँह सिकोड़े बच्चे के पोतड़े तक धो डालना। मुमताज़ के अपने भी तीन बच्चे थे, दो लड़कियाँ और एक लड़का। मुमताज़ खटती रहती पूरा दिन, इस घर से उस घर। उसी के पैसों से घर चलता था, बच्चों की स्कूल फीस भरी जाती थी। वो अक्सर मनस्विनी से कहती -

''मनु बेन, मैं अपनी लड़कियों को पढ़ाएगी, ये मालिश वाला काम नहीं सिखाएगी उनको''

''लड़कियाँ कैसी है तेरी पढ़ने-लिखने में ?''

''ठीक-ठाक ही है, कोई खास मन नहीं लगातीं पढ़ने में। हमारे यहाँ निकाह गाँव के गाँव में ही होता, इसलिए ध्यान रखना पड़ता, इनके नैन-मटक्के शुरु होने में वक्त नहीं लगता। लेकिन कुछ पढ़-लिख लेगीं तो चार पैसे कमाएँगी। आप को तो खबर है कि निकाह के अजीब रिवाज है हमारे। शादी-ब्याह गाँव के गाँव में ही होता और शादी के बाद भी लड़कियाँ रात को ही ससुराल जातीं,सुबह अपने मायके वापिस आ जाती।''

यहाँ के घांचियों का यह रिवाज मनस्विनी को भी बेहद अजीब लगता था। यह क्या बात हुई भला कि शाम को मायके से खा-पीकर ससुराल जाओ और

मुँह अंधेरे वापिस मायके आ जाओ । मुमताज़ शून्य में निहारते हुए अब भी सात्विक को झूला दिए जा रही थी।

मनस्विनी ने उसे फिर आवाज़ देकर पूछा —

''मुमताज़ घर नहीं जाना है क्या ? क्या हुआ ? सब ठीक है न''

मुमताज़ बुझे स्वर में बोली —

क्या कहूँ मनु बेन, मैं पूरे दिन घर से बाहर रहती । लड़का अभी से आवारा हुआ जा रहा मेरा । पूरा दीन बाहर रखड़ता रहता यार दोस्तों के साथ। छोटा है लेकिन कमबख्त का गुस्सा तो देखो, बड़ी बहनों पर भी हाथउठा देता । चौकी करता उनकी ।''

तेरी सास क्या करती है पुरा दिन ? जरा बच्चों पर नज़र रखती हो तो ।

''अरे कहाँ बेन। अब हाथ-पैर साथ नही देते उसके। दिन भर खटिया पर पड़ी रहती है । ये नाशुक्राने बच्चे उसके दस बार चिल्लाने पर उसकौ एक काम करते है ।

ऐसी हजारों चिंताएँ मुमताज़ के इर्द-गिर्द घूमती रहती । मनस्विनी चुपचाप मुमताज को देखती रहती जब वह सात्विक की मालिश कर रही होती । चिंताएँ उसकी आँखो के नीचे पसरती जा रही थीं काले गड्ढे बनकर । लेकिन इन सब चिंताओ के बावजूद उजले रंग की थोडी मोटी और ठिंगनी सी मुमताज जब हँसती तो मनस्विनी को लगता कि हरसिंगार झर रहा है ।

दिन बीतते गये, मौसम अब और सर्द होता जा रहा था। सात्विक की सर्दी और कफ़ ठीक होने का नाम ही न लेते थे । लगातार नाक बंद रहने के कारण वह फीडिंग भी नहीं कर पाता और पूरे दिन रोता-चिड़चिड़ाता रहता था । मनस्विनी और शशांक उसे दिन में दो बार नैब्युलाइज़ेशन के लिए डॉक्टर के पास लेकर जाते, तब कहीं उसकी नाक खुलती और वह दूध पीकर कुछ देर सोता । मनस्विनी और शशांक हैरान-परेशान थे कि जब मौसम का मिज़ाज बदले और उनके फूल से बच्चे को सुकून मिले । हड़बड़ाई-सी मनस्विनी इन दिनों मुमताज़ से ज्यादा बात भी नहीं कर पाती थी ।

एक दिन मुमताज़ ने कहा -

''मनु बेन ये सब दवा-ववा का चक्कर छोड़ो... देखो तो सादिक की क्या हालत हो गई है । गुस्सा न करो तो एक देसी दवा बताती मैं... वो तुम ब्राह्मण हो न... तो बोलते नही बना इतने दिनों से मेरे को...''

मनस्विनी को तो जैसे तिनके का सहारा मिला —

''बोल मुमताज बोल, क्या करूँ कि ये लड़का ठीक हो जाये ।''

''तुम देसी दारु की मालिश करवाओ सादिक को पाँच-छः दिन, फिर देखो सर्दी कैसे गायब होती है ।''

मनस्विनी का मुँह खुला का खुला रह गया — ''शिव शिव शिव... लगाम लगा अपनी जुबान को, दादी सुन लेगी तो तेरा काम पर आना बंद हो जाएगा । कह क्या रही है तू ? हमारी सात पीढ़ियों में किसी ने दारू को हाथ नहीं लगाया और तू सात्विक को मालिश करने के लिए कह रही है । इसके पापा को पता चल गया तो कच्चा चबा जायेंगे मुझे । आज बोली सो बोली, फिर कभी मत करना ऐसी फालतू बात ।''

मुमताज़ का चेहरा उतर गया और वो चुपचाप चली गयी । लेकिन सात्विक से बहुत स्नेह था उसे । दूसरे दिन फिर बोली —

''मेरी बात मानों मनु बेन, मैं अपने साथ ही लेती आयेगी, तुमको कुछ नहीं करना है । बाजार वाले राजपूत के बेटे को भी सर्दी है । वे लोग करवाते मालिश बच्चे को । उनसे ही थोड़ी-सी माँग कर ले आयेगी । किसी बात की ना नहीं बोलते वो मेरे को । मालिश के बाद चार-पाँच घंटे तो सात्विक सो जाता है । जब उठे तो तुम अच्छे से पाउडर बाउडर छिड़क देना । कैसे पता चलेगा साहब को क्या मनु बेन तुम है न बेकार में ही इतना डरती और फिर इतना बोलकर मुमताज़ ठठाकर हँसने लगी ।''

मरती क्या न करती । मनस्विनी ने हाँ कह दी । मुमताज़ दूसरे दिन अपने दुपट्टे के नीचे छुपाकर एक बॉटल में दारू लायी और सात्विक की छाती पर, पीठ पर, तलुए में, पेरों और हाथों के नाखूनों पर, कानों के पीछे, अच्छे से मालिश करके उसे कपड़े में बाँध दिया।

शाम को शशांक ऑफिस से आए। मनस्विनी डर के मारे पीली थी कि कहीं शशांक को बास आई तो ? शशांक का विश्वास उस पर से उठ जाएगा और पता नहीं कैसे रिएक्ट करेंगे शशांक। देसी इलाज पहली ही बार में अपना असर दिखा चुका था। कई दिनों बाद सात्विक का हँसता चेहरा देख शशांक का चेहरा भी खिल उठा।

''डॉक्टर की दवा अब असर कर रही लगता है। देखो तो मनु, आज सात्विक बेहतर लग रहा है।''

अपनी जुबान काटते-काटे मनस्विनी ने शशांक को सारी बात बताई। शशांक का चेहरा देखकर एक पल के लिए तो मस्विनी को लगा कि सारा ज्वालामुखी यहीं उसके घर में ही फट जाएगा। लेकिन शशांक नीची नजरे किये बोला —

''ठीक है। दवा के रूप में ही लगा रही हैं न। उसे करने दो वो कर रही है। तुम मत छूना।''

मनु ने राहत की साँस ली। उसे शशांक से इस जवाब की उम्मीद बिल्कुल नहीं थी। बच्चों के लिए प्यार, माँ-बाप को किस हद तक विवश कर देता है बदलने के लिए। दूसरे दिन मुमताज़ जब अपने नियत समय पर आई तब मनस्विनी धूप में खाना खा रही थी। शशांक एक दिन पहले रसगुल्ले लेकर आये थे। मनस्विनी की थाली में दो रसगुल्ले रखे हुए थे। उसने एक कटोरी में दो रसगुल्ले मुमताज़ को दिए।

''लो पहले यह खा लो, फिर मालिश करना।''

अय हय हय मनु बेन... तुम रसगुल्ले खा रही हो ? कुछ वक्त काबू में रखो अपनी चटोरी जीभ को। ये मिठाई, रसगुल्ले खाना बंद करो कुछ महीने। तभी तो मैं कहूँ की सादिक को इतनी सर्दी हो केसै जाती है। अभी तो तुम्हारे दूध से ही पेट भरता है। ये शक्कर ही है, जो जाती है उसके शरीर में और कफ बनाती है।

सात्विक हाथ-पैर हिलाते हिलाते घुर्र-घुर्र की आवाज कर रहा था। उसकी छाती पर कान टिकाते हुए मुमताज़ बोली —

''लो सुनो अभी भी बज रहा है कफ़ —''

मनु डर गयी, उसने मन ही मन प्रण किया कि हे भगवान ! ये कफ़ मिटा दो सात्विक का। अब जब तक सात्विक दूध पीना बंद नही करता तब तक मैं शक्कर की कोई चीज नही खाऊँगी। मनस्विनी का लटका हुआ चेहरा देखकर मुमताज़ बोली —

''मनु बेन उदास मत होओ तुम, इसका कफ़ निकालने की अस्सल दवा है मेरे पास।

खरगोश के खून की एक बूँद पानी के साथ मिलाकर पिला देंगे सादिक को, सारा कफ़ साफ हो जायेगा।''

मनस्विनी आँखे फाड़ कर देखती रही मुमताज़ को। क्या पागलों-सी बात करती है यह औरत। अब मेरे बेटे के लिए क्या कोई जंगल जाकर खरगोश को मारेगा। और उसका खून...छि...छि...छि... मनस्विनी के चेहरे पर वितृष्णा के भाव आ गये। चलते-चलते मुमताज़ फिर बोली —

''तो कल ले आउँ न खरगोश का खून ?''

मनस्विनी विस्फारित नैत्रों से उसे देखते हुए लगभग चिल्लाकर बोली —

''कैसे लाओगी ? और कौन मारेगा खरगोश ? बेवकूफ न हो तो ...''

मुमताज़ ही ... ही ... ही करके हँसने लगी।

''क्या मनु बेन तुम भी .... खरगोश का खून तो हम लोग सुखाकर इकट्ठा कर लेते हैं। सूखा हुआ जरा-सा टुकड़ा पानी में घोलकर पिला दो, बस्स।

अगले दिन रूमाल के एक कोने में बंधे हुए गहरे कत्थई रंग के छोटे छोटे टुकडे मुमताज़ के हाथ में थे।

उसने एक छोटा सा टुकड़ा पानी में घोला और पिला दिया सात्विक को। मनु साँस रोके यह सब देखती रही। उसी समय उसे शशांश का खयाल आ गया और उसने अपनी जबान काट ली की यह बात तो वह शशांक को बिल्कुल नहीं बतायेगी। बाकी के टुकड़े मुमताज़ ने मनस्विनी को दे दिये, ज़रुरत पड़ने पर वापरने के लिए। मनस्विनी ने उन्हें कागज़ की पुड़िया में सहेज कर अपनी साड़ियों वाली अल्मारी में नीचे बिछे हुए अखबार के नीचे छुपा कर रख दिया।''

निगोड़ी ठंड थी कि जाने का नाम ही न ले रही थी। लेकिन सात्विक अब उसके असर से मुक्त था। मुमताज़ के देसी नुस्खों ने उसे हँसता-खिलखिलाता कर दिया था। देसी दवाओं में बिल्कुल विश्वास न करने वाली मनस्विनी अब अहसानमंद थी। मुमताज़ की, जिसके कारण वह अपने बच्चे को आज मुस्कराता हुआ देख रही थी। मुमताज़ अब उसके और भी ज्यादा करीब थी। मुमताज़ की तकलीफों, दुख-दर्द और चिंताओं की वह अब और भी अधिक राज़दार थी।

मुमताज़ हर रोज सात्विक की मालिश करती, नहलाती, पाउडर, काजल, नज़र का टिका लगाती, और फिर बालों में तेल लगाकर हाथों को कुछ इस तरह थपथपाती बालों पर कि बाल घुँघराले होकर माथे पर आगे-आगे इकट्ठे हो जाते। मुमताज़ फिर खुद ही सात्विक को देखकर मुस्कराती और कहती –

''मनु बेन, इतने सारे बच्चों की मालिश करती मैं, पर सबसे ज्यादा प्यार मुझे इस सादिक से ही है। कितना प्यारा दिखता है घूँघराले बालों वाला मेरा बच्चा।'' इतना कहकर वह जोर से खिलखिलाती और मनस्विनी को देखकर कहती –

''चिंता नई करने का मनु बेन.. मेरी नज़र नहीं लगेगी इसको।''

दिन बस इसी तरह बीतते जा रहे थे। एक दिन सात्विक को बगीचे में लिए मनस्विनी मुमताज़ का इंतज़ार कर रही थी। अमूमन मुमताज़ अपने समय से बहुत आगे पीछे नहीं होती थी। बारह-साढ़े बारह के बीच वह आ ही जाती थी। लेकिन आज उसका कहीं अता-पता नहीं था। घड़ी ने पहले एक का घंटा बजाया और फिर दो का। उकताई-सी मनस्विनी झल्ला रही थी कि कहाँ रह गयी यह आज। आ जाये तो काम पूरा हो। सात्विक सो जाये तो वह भी कुछ देर आराम कर सके।

तीन बजे मुमताज़ प्रकट हुई। लेकिन उसके चेहरे पर हँसी की जगह विषाद की रेखायें थी। ऐसा पहली बार हुआ कि उसने ओटले से ही जोर से आवाज न लगाई हो ... 'सादिक' और खिलखिलाकर हँसी न हो। मनस्विनी उसे डाँटने ही वाली थी कि उसका तमतमाया चेहरा देखकर चुप हो गयी। मनस्विनी ने उसे इतना आक्रोश मे पहले कभी नही देखा था।

सात्विक के कपड़े उतारते-उतारते वह दनादन गालियों की बौछार किये जा रही थी।

''भड़वा साला... कीड़े पड़े तुम लोगो को.. नाली में गिरो हरामी''

मैं गरीब हूँ तो क्या मेरी कोई इज्जत नहीं है...

पुलिस भेजता है साला मेरे घर .. ले, देख ले... कुछ निकले मेरे घर से तो...

मनस्विनी ने मुमताज़ के हाथ से सात्विक को लेते हुए कहा –

''मुमताज़ मालिश बाद में करना... तू बैठ कुछ देर''

मनस्विनी दो कप चाय बना कर लायी अपने और मुमताज़ के लिये।

मुमताज़ के चेहरे पर आंसुओ की लकीरें थी। आँसू गाल और होठों से होते हुए टपाटप गिरते जा रहे थे ज़मीन पर।

''मनु बेन... तुम बताओ... मैं चोर लगती तुमको ? तुम्हारे घर की एक भी चीज़ कभी इधर से उधर हुई ? ये सादिक छह दिन का था, तबसे मैं आती इधर। वो भड़वा साला .. पाँच महीने से उसके घर भी जाती बच्चे को मालिश करने को। उसके बच्चे के सोने के नज़राने नहीं मिल रहे कल से, तो पुलिस को बोला कि बस मुमताज़ ही आती इधर तो बच्चे को मालिश करने के वास्ते। पुलिस वाले को मेरे घर भेजा तफ़्तीश करने को....

तुम बोलो मनु बेन, मैं उसके बच्चों को पाँच महीने से मालीश करती – मैं... मैं चुरायेगी उसके सोने के नज़राने... ?''

ये...ये अपना सादिक भी तो पहनता सोने का लॉकेट... सोने के नज़राने, सोने के मोती वाला कंदोरा... कुछ गायब हुआ क्या कभी ?

खाक पड़े मेरे भाग में जो में बच्चे का कुछ चुराउँ तो। जनम बिगड़ जाये मेरे बच्चों का जो अपने धंधे से बेईमानी करूँ तो ...

मनस्विनी चुपचाप मुमताज़ का हाथ पकड़े उसे तसल्ली देती रही, जैसे देती है एक औरत दूसरी औरत को बुरे दिनों में।

मुमताज़ के गुस्से का लावा फिर फूटा ''मनुबेन, अबसे तुम इदरीच बैठना, अब मैं सादिक को मालिश करूँ तो कल कुछ खो गया तो... तुम भी मेरा नाम लोगी...''

मुमताज़ केजाने के बाद मनस्वीनी की सास बोली—

''मैं तो पहले ही कहती थी, कि गाँव भर की मालिशवालियाँ मर गयी है क्या, जो इस मुसट्टी को रखा हुआ है मालिश के लिए। देखो ... दिखा दी न इसने अपनी जात... चोट्टी कहीं की।''

शशांक ने घूर कर अपनी माँ को देखा। मनस्विनी होठ भींचे चुपचाप बैठी रही। वह जानती थी कि मालिश वाले हर बच्चे से मुमताज का मन का नाता है। वो हर बच्चे के शरीर, आदतों, क्रियाकलापों, और आवाज़ से उतनी ही परिचित है, जितनी उनकी माँ। मुमताज़ किसी बच्चे के नज़राने चुराये यह संभव नहीं था।

अगले कुछ दिनों तक मुमताज़ के इस दुख को भुलाने के लिए मनस्विनी जानबूझकर मालिश के समय बगीचे में न रहकर घर के काम निपटाने लगती, ताकि मुमताज़ का खोया हुआ विश्वास वापिस लौट सके। उसे लोग–बाग शक की नजर से देखते हैं, यह बात उसके दिमाग से निकल सके। मुमताज़ के कई–कई बार आवाज़ लगाने के बाद भी मनस्विनी मालिश के समय बाहर नहीं आती।

रमज़ान का महिना अगले दिन से शुरु होने वाला था। मनस्विनी ने मुमताज से कहा —

''मुमताज़ चाहो तो एक महिने की छुट्टी ले लो। सात्विक अब बड़ा हो गया है, मैं खुद कर लुँगी उसकी मालिश। बिना खाये–पिये कैसे करोगी इतनी दोड़ भाग।''

लेकिन मुमताज आती रही पहले की तरह ही। धीरे–धीरे अवसाद की रेखाएँ छँटती गयी उसके चेहरे से। ईद के पाक महीने में भूला दी उसने बीतें बातें और वह पहले से भी अधिक पाक हो गयी। इद के एक दिन पहले मुमताज़ बोली —

मनु बेन कल ईद है... कल नहीं आयेगी मैं ''मनुने हँस कर सिर हिलाते हुए ईद मुबारक कहा।

दूसरे दिन बारह बजे के आसपास मनस्विनि सात्त्वि को मालिश के लिए उठा ही रही थी कि दरवाजे पर वही बारीक–तीखा स्वर सुनाई दिया... सादिक... सादिक... और फिर जोर से हाथ–पैर उछालते सात्त्विक के साथ वही हरसिंगारी खिल खिलाती हँसी।

'अरे आज तो ईद है। तुम तो आज नहीं आने वाली थी न।'

''क्या करु मन ही न माना मेरा। सिवैयाँ बनाकर अपनी सास को बोलकर दौड़ती आयी हूँ।''

फटाफट सात्विक को नहलाकर सुलाने के बाद मुमताज़ अपनी मुट्ठी में दबे पचास रूपये सात्विक की मुट्ठी में दबाते हुए बोली —

''घूँघर वाला बच्चा है मेरा, ...वो क्या बोलते मनु बेन... तुम्हारे किशन भगवान जैसा... इसको ईदी दिए बिना मेरी ईद कैसे मनती मनु बेन ?'' हरसिंगार के फूल मनस्विनी के बगीचे में झर गये।

मुमताज के हाथों में उसके तीनों बच्चों के लिए कपड़े और ईदी थमाते वक्त मनस्विनी की आँखे नम थी और मुमताज़ की भी। दोनों जानती थी कि मुमताज सिर्फ एक नाम भर नहीं है। मुमताज़ नाम है एक विश्वास का, एक मुस्कान था, एक आस्था का, एक माँ का जिसके हाथों में सब सुकून और निश्चिंतता से सौंप देते हैं अपने एक दिन के बच्चे को... और विश्वास... मुस्कान, आस्था और ममता का कोई धर्म नही होता... कोई जाति नहीं होती ...।

IMPACT OF COVID-19 ON EDUCATION

****

Prof. Dipty Christian

Education has changed dramatically after Covid-19 and is undertaken on digital platforms. Covid-19 has shut schools and colleges to Globally and people are wondering whether the new adaptation of digital learning will go on. In Future there has been a significant surge in online learning after Covid-19, it can become an integral component of school education. It has changed the way teaching and enables to reach out the students more efficiently and effectively through that groups, video meetings and sharing of documents, especially during the pandemic.

However there are many challenges to over come. There are many villages in india where reliable internet and technology is absent. The current pandemic has impacted The rural students more than there who live in cities. Even the local authorities face tough time to integrate high speed internet facilities. Therefore people in rural areas have to deal with low power supply and old electronic devices students in rural india are denied from new electronic devices. Many students depend on the mobile phones belonging to their family members in order to attend the classes. Watching small screens for hours may impact the health of the students. Many families face financial crisis and it has affected the Participation of both, The teachers and the students. Due to pandemic rural india has faced a sudden reliane on digital learning but their is no clarity as to low many of the students have access to online learing. Little or no access to the internet has been the biggest hindrance of digital education among rural areas. Some rural areas have good internet Connectvity but there are facilites which rely on midday meal Scheme inorder to feed their children, in this situation how can they spend thousands of rupees on smart phones, desktop or laptop? In Jhamri village of Haryana a teacher had adopted the practise of taking cart at the village centre to impart lessons through loudspeakers and the students took part in the class from their home. Various innovative practises have been adopted by the teachers so that they can remain in touch with the students, but these methods can not offer a permanent solution. It is very necessary to create a proper learning environment for the students while mainntining Covid precautions Although the govrnmemnt has taken initiative to reform the education sector, much more needs to be done. The institutions should have well-designed buildings and the teacher fraternity should be inmibed with modern technology tools to tranin the students. Since the studentrs spend hours in front of Electronic screen it can casue physical and mental breath issues such as headaches, eyestrain and body pain, stress and anxiety. In order to overcome these problems important steps has to be taken by the parents to keep thier children healthy. Attending online classes for over to months has been diffuclt for the students and it is very necessary for parents and the teachers to understand this predicament and continue the journey of decuation.

◆◆◆

આત્મહત્યા – સમાજની વૈજ્ઞાનિક સમસ્યા

– પ્રા. પારૂણ દાણી

થોડાક દિવસો પહેલાં એક યુવતી નામે આયેશા આરીફ ખાન આત્મહત્યા કરતાં પહેલા વીડિયો બનાવીને સાબરમતી રિવરફ્રન્ટ પરથી નદીમાં કૂદી જઈને દુનિયાને અલવિદા કરી ગઈ. આ ઉપરાંત પણ રોજબરોજ આત્મહત્યાનું પ્રમાણ વધતું જાય છે જે કોઈપણ સંવેદનશીલ વ્યક્તિને હચમચાવી મૂકે છે. આ જ કારણ છે કે થોડુંક આત્મહત્યાની ઘટના વિશે લખવા પ્રેરે છે.

આત્મહત્યા એ વ્યક્તિના પોતાના દેહનો અંત આણવાનું સ્વેચ્છાપૂર્વકનું કૃત્ય છે. તેમાં સામાજિક સાંસ્કૃતિક અને મનોવૈજ્ઞાનિક પરિબળો ભાગ ભજવતાં હોવાથી સમાજશાસ્ત્રમાં આત્મહત્યાને સમાજ મનોવૈજ્ઞાનિક સમસ્યા તરીકે ઓળખાવાય છે.

કોઈપણ પ્રકારના મૃત્યુની જેમ આત્મહત્યા પણ માનવ કરૂણતાને સૂચિત કરતી દુઃખદાયક ઘટના છે. અને એટલે ગીબ્ઝ કહે છે કે મોટાભાગના સમાજોમાં આત્મહત્યા કેવળ કરૂણ જ નહિ, પરંતુ ક્રૂર કહી શકાય એવી પરિસ્થિતિ ગણવામાં આવે છે, તેનું નિવારણ પણ કરી શકાય છે. આવી માન્યતા જ આત્મહત્યાને સામાજિક સમસ્યાનું સ્વરૂપ આપે છે. મનુષ્યનાં કુદરતી મૃત્યુનું પ્રમાણ વધારે છે. આત્મહત્યાથી થતાં મૃત્યુનું પ્રમાણ કુદરતી મૃત્યુની સરખામણીમાં ઘણું ઓછું જોવા મળે છે. પરંતુ કુદરતી મૃત્યુ અનિવાર્ય પરિસ્થિતિ હોવાથી તેને સામાજિક સમસ્યા ગણતા નથી. સમાજ પર વિપરીત અસર પડતી હોવા છતાં કુદરતી મૃત્યુને સામાજિક સમસ્યા ગણવામાં આવતું નથી જ્યારે આત્મહત્યા નિવારી શકાય એવી પરિસ્થિતિ હોવાથી તેને સામાજિક સમસ્યા ગણવામાં આવે છે.

આત્મહત્યા સમાજનું મૂલ્યોથી વિરૂદ્ધ જતું ધોરણ-ભંગ વર્તનનું કૃત્ય છે.

આત્મહત્યા વિશે સૌપ્રથમ સમજ ફ્રેન્ચ સમાજ-શાસ્ત્રી એમિલ દુર્ખિમે ૧૯મી સદીના અંતમાં પોતાના આત્મહત્યા અંગેના સિદ્ધાન્તમાં આપી છે. જેથી આત્મ-હત્યાની ઘટના વિશે એ સમયમાં વિશ્વભરનાં વિદ્વાનોનું ધ્યાન ખેંચાયું હતું, ત્યારબાદ યુરોપ અને અમેરિકામાં આત્મહત્યા પર વ્યાપક સંશોધનો થયાં. ગીબ્ઝ લખે છે કે, ૧૯૪૫ માં કાઢેલા એક અંદાજ પ્રમાણે આત્મહત્યા પર પ્રસિદ્ધ થયેલો ગ્રંથો-લેખોની સંખ્યા ૪૦૦૦ કરતાં વધુ હતી.

વર્તમાન સમયમાં શહેરી જીવનનો વિકાસ, અમર્યાદિત ભૌતિક વિકાસની લાલસા, ભૌતિક વિકાસ માટેની સતત સ્પર્ધા, તેમાંથી જન્મતી માનસિક તંગદિલી અને દબાણની પરિસ્થિતિ, માનસિક રોગોમાં થઈ રહેલી વૃદ્ધિ, આધુનિકીકરણની પ્રક્રિયાએ વિકસાવેલા આધુનિક વ્યક્તિત્વ ઉપર પરંપરાગત મૂલ્યોનું દબાણ વગેરે, વધતી બેરોજગારીની પરિસ્થિતિ, મોંઘવારી, દેવું જેવી પરિસ્થિતિઓને કારણે આત્મહત્યાની સમસ્યા વધારે ગંભીર બની રહી છે.

આત્મહત્યા એટલે શું ?

આત્મહત્યા માટે અંગ્રેજી શબ્દ Suicide છે. આ શબ્દ લેટિન શબ્દો Sui અને cideoથી બનેલા છે. એનો અર્થ થાય છે – 'મારી નાંખવું.' આમ આત્મહત્યા – Suicide એટલે પોતાની જાતને મારી નાંખવી.

ઑક્સફર્ડ શબ્દકોષ અનુસાર – "આત્મ હત્યા એટલે પોતાની જાતને મારી નાંખવું."

આત્હત્યા વિશે સમજાવતા દુર્ખિમ લખે છે કે "વ્યક્તિનું એવું કંઈપણ હકારાત્મક કે નકારાત્મક કૃત્ય જે પ્રત્યક્ષ કે પરોક્ષ રીતે પોતાના મૃત્યુમાં પરિણમે છે તેને આત્મહત્યા કહેવાય છે. કારણ કે એમની વ્યાખ્યા મુજબ સમાજનાં ધોરણો કે બલિદાન સાંસ્કૃતિક મૂલ્યો અનુસાર વ્યક્તિ પોતાના દેહનું બલિદાન આપે તો તેને પણ આત્મહત્યા જ કહેવાય.

(જો કોઈ દેશ માટે લડતાં લડતાં શહીદ થાય, કોઈ સ્ત્રી પતિ પાછળ સતી થાય, કોઈ ક્ષત્રિય ગૌ, બ્રાહ્મણ કે સ્ત્રીનું રક્ષણ કરતાં મૃત્યુ પામે, જૈન ધર્મમાં કોઈ સંથારો કરે આવી બધી ઘટનાઓને પણ દુર્ખિમ આત્મહત્યા જ ગણે છે, એટલે એમની વ્યાખ્યા આધુનિક સમાજશાસ્ત્રના વિદ્વાનોમાં સ્વીકાર્ય રહી નથી. આમ છતાં સૌપ્રથમ આત્મહત્યા વિશેની વૈજ્ઞાનિક સમજ કેળવવામાં તેઓએ મહત્ત્વનો ભાગ ભજવ્યો છે.માર્શલ કલીનાર્ડ રૂથ કેનનને ટાંકીને આત્મહત્યા વિશે જણાવે છે કે " સામાન્ય રીતે વ્યક્તિ જ્યારે પોતે જ પોતાનું મરણ નિપજાવે (ખતમ કરીને) ત્યારે તેને આત્મહત્યા કહેવાય. કાયદાકીય પરિભાષામાં આત્મહત્યા એટલે 'સેલ્ફ મર્ડર.' જ્યારે જહોન રેઈન માને છે કે સભાનતાપૂર્વક, હેતુપૂર્વક, સફળતાપૂર્વક પોતાના હાથે પોતાનું મરણ નિપજાવે છે ત્યારે એવી વ્યક્તિઓ આત્મહત્યા કરે છે. એમ કહી શકાય."

આમ, આત્મહત્યા એ પોતાની જાતનો નાશ કરવાના હેતુવાળું સભાનતાપૂર્વકનું પ્રાણઘાતક કૃત્ય છે. વ્યક્તિ જ્યારે હેતુપૂર્વક પોતાના જીવનનો અંત આણે અથવા પોતાનું જીવન સાચવવાનું શક્ય હોય છતાં આવા ભયનો સામનો કરવામાં વ્યક્તિ નિષ્ક્રિય રહે ત્યારે તેને આત્મહત્યા તરીકે ઓળખાવી શકાય. વ્યક્તિ પોતાના દેહનો અંત આણવાના ઈરાદાથી જ જ્યારે કોઈ પ્રયાસ કરે અને આવો પ્રયાસ સફળ થતાં તેના દેહનો અંત આવે ત્યારે તે વ્યક્તિએ આત્મહત્યા કરી કહેવાય. કાયદાની દૃષ્ટિએ આત્મહત્યાનો પ્રયાસ કાનૂની ગુનો ગણવામાં આવે છે.

આત્મહત્યા અંગેના સમાજશાસ્ત્રીય-માનસ-શાસ્ત્રી સિદ્ધાંતો નીચે મુજબ છે :

સમાજશાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્તો :

(i) દુર્ખિમનો સિદ્ધાન્ત :

દુર્ખિમ, આત્મહત્યાના પ્રત્યેક કિસ્સામાં કોઈને કોઈ સામાજિક કારણ રહેલું છે, તેવું સ્પષ્ટપણે માને છે. વ્યક્તિનું વ્યક્તિગત જીવન કે વ્યક્તિત્વ આત્મહત્યા માટે કારણભૂત હોતું નથી. વ્યક્તિ જે સમુદાય કે જૂથના સભ્ય તરીકે જીવન જીવે છે એ સમુદાય કે જૂથની સંસ્કૃતિ, પારસ્પરિક સામાજિક વ્યવહાર વડે સમાજ-શાસ્ત્રીય પરિબળો આત્મહત્યા માટે કારણભૂત બને છે. જૂથથી ભિન્ન વ્યક્તિનું કોઈ સ્વતંત્ર અસ્તિત્વ હોતું જ નથી. આથી વ્યક્તિ જો જીવન ટકાવી રાખે છે તો જૂથ (બીજા)ની ઈચ્છા ને કારણે અને વ્યક્તિ પોતાના જીવનનો અંત આણે છે તો તે પણ પોતાની ઈચ્છાને જ કારણે. પોતાના જૂથ સાથે વ્યક્તિનો વધુ પડતો ઘનિષ્ઠ સંબંધ અને અત્યંત ઢીલો સંબંધ એ પણ આત્મહત્યાની કારણભૂત પરિસ્થિતિ છે. વ્યક્તિ અને તેનો જૂથ વચ્ચેનો સંબંધ થોડોકે અવ્યવસ્થિત થઈ જાય ત્યારે વ્યક્તિ સામૂહિક જીવનમાંથી ફેંકાઈ ગયાની લાગણી કે પોતાની સામાજિક ઉપેક્ષા થતી હોવાનો અનુભવ કરે છે. આવી પરિસ્થિતિમાં વ્યક્તિનો અહમ ઘવાય છે. અંતે પોતાના અહમને અપમાનમાંથી બચાવવા માટે વ્યક્તિ આત્મહત્યા કરવા પ્રેરાય છે. દુર્ખિમને મતે આવો અહમવાદી આત્મહત્યા કરે છે.

વ્યક્તિ અને જુથ વચ્ચેનો અતિશય ગાઢ સંબંધ હોય ત્યારે વ્યક્તિનું વ્યક્તિત્વ જૂથમાં સંપૂર્ણપણે વિલીન થઈ જાય છે. આવી વ્યક્તિ પોતાનું જીવન પોતાના જૂથ માટે જ જીવે છે. આને દુર્ખિમ પરહિતવાદી આત્મહત્યા કહે છે. દા.ત. સતીપ્રથા.

વ્યક્તિના જૂથ જીવનમાં કોઈ અચાનક ફેરફાર થાય ત્યારે વ્યક્તિ સમક્ષ તદ્દન નવી પરિસ્થિતિ સર્જાય છે. આવી પરિસ્થિતિમાં વ્યક્તિ અનુકૂલન સાધવામાં નિષ્ફળ જાય છે તો માનસિક તંગદિલી ઊભી થાય છે. અને એ તંગદિલીમાંથી બહાર આવવા માટે વ્યક્તિને જે એકમાત્ર રસ્તો દેખાય છે તે છે આત્મહત્યા, જેને દુર્ખિમ એનોમિક આત્મહત્યા તરીકે ઓળખાવે છે. દુર્ખિમે વ્યક્તિગત પરિબળોની અવગણના કરી છે, તે તેમના સિદ્ધાન્તની મર્યાદા છે.

દુર્ખિમના સમકાલીન ફ્રેન્ચ સમાજશાસ્ત્રી ગ્રેબ્રિયલ બર્ડે સમાજશાસ્ત્રમાં સામાજિક આત્મક્રિયાનો સિદ્ધાન્ત

આપ્યો છે. આ સિદ્ધાન્તને Waves of imitation of suicide,' હું કેવો છું,' 'મારો વ્યવહાર કેવો છે,' 'મારા અંગે અન્ય લોકોની ધારણાઓ શું છે?' વગેરે પ્રશ્નના ઉત્તરમાં વ્યક્તિને જે ધારણાઓ પ્રાપ્ત થાય છે, તેને આધારે વ્યક્તિ શરમ, પશ્ચાતાપ જેવી લાગણી અનુભવે છે. આવી લાગણીઓના આધારે વ્યક્તિ પોતાનું મૂલ્યાંકન કરે છે, અને આવું મૂલ્યાંકન જયારે નકારાત્મક હોય છે ત્યારે વ્યક્તિ આત્મહત્યા કરવા પ્રેરાય છે.

કાલવાસનો સિદ્ધાન્ત : કાલવાસ વ્યક્તિના માનસિક જીવનને આત્મહત્યાનું મહત્ત્વનું કારણ માને છે. સામાજિક જીવનની વિવિધ પરિસ્થિતિઓ વ્યક્તિને સામાજિક જીવનથી અલગ કરી દે છે. વ્યક્તિનું સામાજિક જીવન છિન્ન-ભિન્ન થઈ જાય છે અને વ્યક્તિ આત્મહત્યા કરવા પ્રેરાય છે.

કુબ્લીન અને બુન્ઝેલનો સિદ્ધાન્ત : અમેરિકામાં કુબ્લીન અને બુન્ઝેલના આત્મહત્યા વિશેના અભ્યાસો ઉપરથી તેમણે જાતિ (Race) રંગ (Colour), ઉંમર, લિંગ (sex), ધર્મ, ગ્રામ, શહેર વિસ્તાર, લગ્નવિષયક દરજ્જો, આર્થિક પરિસ્થિતિ વગેરે પરિબળો સાથે આત્મહત્યાનો સંબંધ જોડ્યો હતો.

આત્મહત્યા અંગેના મનોવૈજ્ઞાનિક સિદ્ધાન્તો :

મૈંનિજરનો સિદ્ધાન્ત : મૈંનિજરે "મેન અગેઈન્સ્ટ હિમસેલ્ફ"માં આત્મહત્યા અંગેનું મનોવૈજ્ઞાનિક વિશ્લેષણ કર્યુ છે. તેઓ કહે છે કે વ્યક્તિનાં મનમાં જીવવાની અને મરવાની એમ બંને પ્રકારની ઈચ્છાઓ હોય છે. મરવાની ઈચ્છા જયારે તીવ્ર બને છે ત્યારે વ્યક્તિ ઘાતક ઉપાયોનો આશ્રય લઈને પોતાના જીવનનો અંત આણે છે. પરંતુ મરવાની ઈચ્છા ઓછી તીવ્ર હોય છે ત્યારે વ્યક્તિ મદ્યપાન કે એવા કોઈ બીજા સાધનનો ઉપયોગ કરીને ધીમે ધીમે પોતાના જીવનનો અંત આણે છે. મૈનિજર માને છે કે વ્યક્તિના મનમાં બીજાને મારવાની પણ ઈચ્છા હોય છે અને બીજાઓ પોતાને મારે એવી પણ ઈચ્છા હોય છે જયારે બંને ઈચ્છાઓ સંતોષાતી નથી ત્યારે વ્યક્તિ પોતાનો જ પોતે ઘાત કરે છે. તેઓ વધુમાં કહે છે કે આત્મહત્યા કરનારી વ્યક્તિ પોતાના જીવન પ્રત્યે અને સમાજ પ્રત્યે ઘૃણા કરે છે. આવી ઘૃણા-નફરત વિકૃત બનીને આત્મ-હત્યાના સ્વરૂપમાં પ્રગટ થાય છે.

કેવનનો સિદ્ધાન્ત : કેવન આત્મહત્યાના કારણ તરીકે આંતરિક-માનસિક સંકટને વધુ મહત્ત્વ આપે છે અપ્રગટ ઈચ્છા, પ્રગટ ઈચ્છા, માનસિક સંઘર્ષ અને બાહ્ય પરિસ્થિતિ દ્વારા વ્યક્તિનું વિઘટન વગેરે બાબતોને કેવન મનોવૈજ્ઞાનિક સંકટ તરીકે જણાવે છે. આવી માનસિક સંકટની સ્થિતિમાં વ્યક્તિને પોતાનું જીવન નીરસ લાગે છે. પરિણામે તેની પસંદગી જીવવા કરતાં મૃત્યુ તરફ વધારે ઢળે છે. વ્યક્તિ માનસિક સમતુલા ગુમાવી બેસે છે અને તે આત્મહત્યા કરવા પ્રેરાય છે.

માર્ટિન ગોલ્ડનો સિદ્ધાન્ત : આત્મહત્યાના સિદ્ધાન્તમાં માર્ટિન ગોલ્ડ વ્યક્તિના બાલ્યકાળની પ્રતિક્રિયાઓ ઉપર વધું ભાર મૂકે છે. તેના મત પ્રમાણે જે વ્યક્તિને તેના બાલ્યકાળમાં સખત શારીરિક શિક્ષા કરવામાં આવે છે તે વ્યક્તિ પુખ્ત વયે બીજાઓ ઉપર પોતાનો ગુસ્સો પ્રગટ કરે છે. પરંતુ જે વ્યક્તિઓને બાલ્યકાળમાં માનસિક ત્રાસ આપવામાં આવે છે એવી વ્યક્તિઓ પુખ્તવયે પોતાનો રોષ પોતાના શરીર ઉપર વ્યક્ત કરે છે. આ રીતે માર્ટિન ગોલ્ડ બાલ્યકાળના માનસિક ત્રાસને આત્મહત્યાનું કારણ માને છે. જોકે હાલ આ મત સ્વીકાર્ય નથી.

આત્મહત્યાના સમાજશાસ્ત્રીય મનોવૈજ્ઞાનિક સિદ્ધાન્તોમાં આત્મહત્યાની ઘટનાને કોઈ એક કારણ વડે જ સમજાવવાનો પ્રયાસ થાય છે. સમાજશાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્તોમાં વ્યક્તિગત પરિબળોની અવગણના કરવામાં આવે છે. અને કેવળ સામાજિક પરિબળોને જ આત્મહત્યા માટે કારણભૂત ગણવામાં આવે છે. તે જ રીતે મનોવિજ્ઞાનીઓ વ્યક્તિગત-માનસિક પરિબળોને

જ આત્મહત્યા માટે કારણભૂત ગણે છે. આમ બંને પ્રકારના સિદ્ધાન્ત અધૂરા અને એકાંગી છે.

વાસ્તવમાં આત્મહત્યા એક જટિલ ઘટના છે. તેમાં કોઈ એક જ કારણ ભાગ ભજવતું હોતું નથી; પણ સામાજિક, સાંસ્કૃતિક, આર્થિક, વ્યક્તિગત વગેરે વિવિધ કારણોનો સંકુલ તેમાં જવાબદાર હોય છે. અહીં આપણે ભારતીય સમાજ અને સંસ્કૃતિના સંદર્ભમાં આત્મહત્યાની સમસ્યાને સમજવાનો પ્રયાસ કરીશું.

ભારતમાં આત્મહત્યાનું પ્રમાણઃ

સેન્ટ્રલ બ્યૂરો ઑફ ઈન્વેસ્ટિગેશનના ૧૯૬૬ના રિપોર્ટ મુજબ ભારતમાં ૧૯૬૪માં કુલ ૨૯,૭૨૪ વ્યક્તિઓએ આત્મહત્યા કરી હતી. જેમાં ૧૮,૮૩૫ (૫૬.૭) પ્રમાણ પુરુષોનું અને સ્ત્રીઓમાં ૧૨,૮૯૯ (૪૩.૩) પ્રમાણ હતું. જગતનાં અન્ય દેશોની જેમ ભારતમાં પણ સ્ત્રીઓ કરતાં પુરુષોની આત્મહત્યાનો દર ઊંચો જોવા મળે છે.

ભારતમાં મદ્રાસમાં આત્મહત્યાનું પ્રમાણ સૌથી વધુ હતું. ત્યાર પછી આંધ્ર અને મૈસુર તથા બંગાળનું સ્થાન હતું, પરંતુ બિહાર, પંજાબ અને આસામમાં પ્રમાણ ઘણુ ઓછું જોવા મળ્યું હતુ. ગુજરાતમાં ૧૭૧૩ વ્યક્તિઓએ આત્મહત્યા કરી હતી, વિભિન્ન રાજ્યોમાં ગુજરાતનું સ્થાન આઠમું હતું.

આત્મહત્યાના ૨૪% હિસ્સામાં શારીરિક રોગો અને ગાંડપણને કારણે બન્યા હતા. આ ઉપરાંત કૌટુંબિક ઝઘડા પરીક્ષામાં નિષ્ફળતા, ગરીબી જેવાં કારણો જવાબદાર હતાં.

૧૯૬૯માં આત્મહત્યાનું પ્રમાણ વધ્યું હતું. ૧૯૭૦માં થોડો ઘટાડો થયો. તેની સંખ્યા ૪૦,૪૨૮ રહી હતી. ગુજરાત અને તામિલનાડુમાં આત્મહત્યાના બનાવો વધતા જવાને કારણે આ બંને રાજ્યોમાં તપાસ સમિતિઓ રચવામાં આવી હતી. ત્યાર પછી ભારતમાં આત્મહત્યાની સમસ્યોઓના કેટલાંક અભ્યાસો થયા, તે પરથી જણાયું છે કે ભારતમાં દર વરસે એક લાખની વસ્તીએ આત્મહત્યાના ૬ કિસ્સા બનતા હતા. તે હવે નવ થવા પામ્યા છે. બેંગલોરમાં આ પ્રમાણ ૨૮નું જણાયું છે, જે સૌથી ઉંચું છે. ગુજરાત અને તામિલનાડુમાં સ્ત્રી-આત્મહત્યાના કિસ્સા વધારે બને છે. ગુજરાતમાં દહેજને લીધે શ્વસુર પક્ષ તરફથી સ્ત્રીને થતી કનડગત સ્ત્રીઓની આત્મહત્યા માટે વિશેષ જવાબદાર હોવાનું જણાયું છે. સ્ત્રીઓની આત્મહત્યાનું પ્રમાણ પુરુષોની આત્મહત્યાના પ્રમાણ કરતાં ઊંચું જણાયું છે. જુદાં જુદાં જૂથોમાં આત્મહત્યાના પ્રમાણ અંગે દુર્ખિમનાં તારણ કરતાં આ ઘટના તદ્દન વિરૂદ્ધની છે. દુર્ખિમનાં તારણમાં સ્ત્રીઓ કરતાં પુરુષોમાં આત્મહત્યાનું પ્રમાણ વધારે હોય છે. ભારતમાં ૧૫ થી ૩૪ વર્ષની વયજૂથની સ્ત્રીઓમાં આત્મહત્યા અન્ય વયજૂથો કરતાં વધારે જોવા મળે છે.

અધ્યયનના અભ્યાસમાં આંતરજ્ઞાતીય લગ્ન આત્મહત્યા માટેનું કારણભૂત પરિબળ છે. અપરિણીત સ્ત્રીઓ કરતાં પરિણીત સ્ત્રીઓમાં આત્મહત્યાનો ઉંચો દર જોવા મળે છે. જેનાં સંભવિત કારણોમાં સંયુક્ત કુટુંબ, સંયુક્ત કુટુંબ પ્રથામાં પુત્રવધુ-સાસુ વચ્ચેના કટુ સંબંધો, દહેજ, વરવિક્રય, કન્યા વિક્રય અને જ્ઞાતિના આંતર્લગ્નના કારણે સર્જાતાં કજોડાં લગ્નને જવાબદાર પરિબળો ગણ્યાં છે. આ ઉપરાંત ખામી યુક્ત કે અયોગ્ય સામાજિકરણ બાળકના સામાજિક અનુકૂલનની ગંભીર સમસ્યાઓ ઊભી કરે છે. અને આવાં બાળકો પુખ્તવયે જીવનની વાસ્તવિક પરિસ્થિતિ સાથે બંધ બેસતા થ શખતાં નથી તેથી આત્મહત્યાઈ ઢળવાનો સંભવ રહે છે. પરીક્ષામાં નાપાસ થવાનો ડર કે નાપાસ થનાર છોકરા છોકરીઓ આત્મહત્યા કરી લે છે તે ઘટના વાસ્તવમાં તેમના સહુના વિકાસનું અપર્યાપ્તપણું જ સૂચવી જાય છે.

ગીબ્જ કહે છે કે ૧૯મી સદી દરમિયાન ગ્રામ સમુદાય કરતાં શહેરી સમુદાયમાં આત્મહત્યાનો દર ઉંચો હતો. પરંતુ વર્તમાન સમયમાં ગ્રામ સમુદાયમાં શહેરી સંસ્કૃતિના પ્રસરણને આત્મહત્યાના દરનો તફાવત-ગ્રામ-શહેર તફાવત ઘટવા લાગ્યો છે. વધતું

જતું શહેરીકરણ આત્મહત્યાનું પોષક પરિબળ બની રહે છે. નિમ્ન આર્થિક વર્ગમાં મધ્યમવર્ગ અને ઉચ્ચવર્ગ કરતાં આત્મહત્યાનો દર ઉંચો જોવા મળે છે. ગરીબી પણ આત્મહત્યાનું મહત્ત્વનું કારણ છે.

અમેરિકામાં થયેલા અભ્યાસોના આધારે જહોન કેઈન એવું કહે છે કે વ્હાઈટ કોલર વ્યવસાયોમાં કામ કરતી વ્યક્તિઓ કરતાં બ્લ્યુકોલર વ્યવસાયોમાં કામ કરતી વ્યક્તિઓનો આત્મહત્યાનો દર ઉંચો છે.

આત્મહત્યા એ અંતિમ પગલું છે. માણસ જીવનની કઠિન પરિસ્થિતિથી ચારે તરફ ઘેરાઈ જાય ત્યારે પોતાનું જીવન જીવવાની તમામ આકાંક્ષાઓ ગુમાવવા લાગે છે અને છેવટના ઉપાય તરીકે આત્મ-હત્યાનો રસ્તો અપનાવે છે. માનવીય જિંદગી અમૂલ્ય છે. માણસોને પોતાનું જીવન અત્યંત વ્હાલું હોય છે. આથી સામાન્ય રીતે માણસોને મરવું ગમતું નથી. તેમ છતાં અપમાન, જુલમ, ત્રાસ, રિબામણી, મારપીટ શારીરિક-જાતીય શોષણ, અત્યાચારનો સામનો કરવાની અશક્તિ, લાચારી, પ્રતિષ્ઠા ગુમાવવાનો ભય, અસલામતી, બધું જ લુંટાઈ જવાની લાગણી, હવે જીવન વિકાસ માટેની કોઈ તક નથી તેવી લાગણી, યાતનાથી ભરેલી જિંદગી જ્યારે માણસને ભારરૂપ લાગે, પોતાનું કોઈ નથી, ક્યાંય આશ્રયસ્થાન — આરો ઓવારો નથી એવું લાગે ત્યારે તેમાંથી મુક્ત થવાના એકમાત્ર અંતિમ "આખરી-રસ્તા" તરીકે આપઘાત કરવા પ્રેરાય છે.

આત્મહત્યાનાં સામાજિક સાંસ્કૃતિક કારણોઃ

સામાજિક સલામતીનો અભાવ : અયપ્યન અને જયદેવનાં અભ્યાસમાં આ પરિબળ કારણભૂત હતું.સામાજિક સલામતીના અભાવે ચાર વૃદ્ધ વિધુરોએ, બે વૃદ્ધ વિધવાઓએ આત્મહત્યા કરી હતી. ઉદ્યોગીકરણ, શહેરીકરણ પ્રક્રિયાએ સામાજિક સલામતી પુરી પાડતી કુટુંબ, જ્ઞાતિ અને ગ્રામ સમુદાય એ સંસ્થાઓનાં વિઘટનને વેગ આપ્યો છે. વિશાળ શહેરી સમુદાયમાં ઔપચારિક જુથ સંબંધો મુશ્કેલીના પ્રસંગોમાં વ્યક્તિને સામાજિક સલામતી પુરી પાડી શકતા નથી. આથી વ્યક્તિ માનસિક તંગદિલી અનુભવે છે. અસલામતીનો ભય જીવન પ્રત્યે વ્યક્તિને નીરસ બનાવે છે. સામાજિક અસલામતીના અભાવવાળી પરિસ્થિતિ વ્યક્તિને પોતાના જીવનનો અંત આણવા માટે પ્રેરિત કરે છે.

સામાજિકસાંસ્કૃતિક ધોરણો અને મૂલ્યો : આત્મ-હત્યાની ઘટના સાથે નિકટનો સંબંધ ધરાવે છે. જેમાં દહેજ પ્રથાનું ધોરણ ગરીબ માતા-પિતા અને લગ્ન વયે પહોંચી ચૂકેલી પુત્રીના મન પર ભારે દબાણ લાવે છે.

કુલીન લગ્નપ્રથા ને લીધે એકબાજું દહેજ ને ઉત્તેજન મળે છે. તો બીજી બાજુ કજોડા લગ્નને પ્રોત્સાહન આપે છે.

જાતીય વર્તન અંગેનાં ચુસ્ત ધોરણો : લગ્ન સુધી સ્ત્રીઓએ જાતિય પવિત્રતા જાળવવી જોઈએ. આ ધોરણનો અમલ કરાવવાનો ખાસ આગ્રહ રખાય છે. ગ્રામસમુદાયમાં જો આ ધોરણનો ભંગ થાય, અપરિણીત સ્ત્રી જો ગર્ભવતી બને તો સમુદાયિક જીવન જીવવું મુકેલ બને છે, જે સ્ત્રિઓને આત્મહત્યા તરફ વાળે છે.

તે જ રીતે પતિ પત્ની વચ્ચેના સંબંધમાં **જાતીય વફાદારી**નાં ધોરણ અનુસરણનો સખત આગ્રહ પણ ક્યારેક વ્યક્તિને આત્મહત્યા કરવા તરફ ધકેલે છે.

સ્ત્રીઓ માટે ફરજિયાત વૈધવ્ય : એકલવાયું, પરાવલંબી જીવન માનસિક તંગદિલી જન્માવે છે, જે કેટલીક વખત વિધવા સ્ત્રીઓને આત્મહત્યા કરવા તરફ દોરી જાય છે.

ભારતીય સમાજ અને સંસ્કૃતિનાં કેટલાંક ધોરણો, મૂલ્યો, આધુનિક જીવનમાં અનુકલન સાધવામાં અવરોધક બને છે, જે આત્મહત્યાના સ્રોત બને છે. એવું નથી, પરંતુ સામાજિક સાંસ્કૃતિક ધોરણો અને મૂલ્યો દ્વારા સર્જાતી દબાણયુક્ત પરિસ્થિતિ સાથે અનુકૂલન સાધીને માનસિક તંગદિલીનું નિવારણ કરવામાં વ્યક્તિ નિષ્ક્રિય થાય ત્યારે તે વ્યક્તિ આત્મહત્યા તરફ વળવાનો સંભવ છે. સંસ્કૃતિ સાથે આત્મહત્યાની નિકટતા રહેલી છે.

આ ઉપરાંત કુટુંબ રચના : ભગ્નકુટુંબ, પતિ-પત્ની વચ્ચે પારસ્પરિક અનુકૂલનનો અભાવ સંયુક્ત કુટુંબ પ્રથા પ્રત્યક્ષ કે પરોક્ષ રીતે ઓછોવધતે અંશે જવાબદાર પરિબળ છે. સંયુક્ત કુટુંબનું વિઘટન વ્યક્તિને માટે સામાજિક સલામતીની સમસ્યા ઊભી કરે છે. તો બીજી બાજુ વ્યક્તિવાદી વલણોનો વિકાસ, સંયુક્તકુટુંબના સભ્યો વચ્ચે પારસ્પરિક સંબંધોમાં કૌટુંબિક મિલકતનું વિભાજન, સાસુ-વહુ વચ્ચેનો સંબંધ.

લગ્ન : આંતરજ્ઞાતીય લગ્ન, યોજિત લગ્નપ્રથાના પ્રભુત્વને લીધે સ્વપસંદગી લગ્નો સ્વીકાર ન થતાં આત્મહત્યા તરફ ક્યારેક યુવક-યુવતી કે બંને વળે છે.

લગ્ન વિષયક દરજ્જો : લગ્નજીવનમાં અંગત સંબંધો આત્મહત્યા અટકાવવામાં મહત્ત્વનો ભાગ ભજવે છે. અમેરિકા અને યુરોપમાં એવું પણ જોવા મળ્યું કે અપરિણીતોમાં પરિણીતો કરતાં આત્મહત્યાનો દર ઉંચો હતો. ભારતમાં જોઈએ તો સૌથી વધુ આત્મહત્યા પરિણીત સ્ત્રીઓ, છૂટાછેડા લીધેલી સ્ત્રીઓ, છેલ્લા સ્થાને અનુક્રમે જોવા મળ્યું. ભારતમાં પરિણીત અપરિણીત આત્મહત્યાનો દર સરખો હતો, વિધૂર ને છૂટાછેડા લીધેલા પુરુષોનો આત્મહત્યાનો દર ઉપરોક્ત ક્રમમાં જોવા મળ્યો હતો.

અયોગ્ય સામાજીકરણ : જીવનના ઘણા બધા ધ્યેયો બાળકમાં આકાંક્ષા ઊભી કરવાનું ધ્યેય, કંઈક કારકીર્દિ બનાવવાની, સફળતા પ્રાપ્ત કરવાની આકાંક્ષા — સામાજીકરણનાં આ ધ્યેય છે. સામાજીકરણની પ્રક્રિયા બાળકમાં અહમ્ (ego) સર્જે છે. યોગ્ય રીતે સામાજીકરણ એટલે બાળકમાં પર્યાપ્ત અહમ્ (adequate ego) વિકસે છે. આવો પર્યાપ્ત અહમ્ ધરાવતી વ્યક્તિ હતાશામાં ભાંગી પડ્યા વિના અનુકૂલન સાધી લે છે. જ્યારે વ્યક્તિને બાલ્ય-કાળમાં સખત શારીરિક શિક્ષા કરવામાં આવી હોય તો તેવો પર્યાપ્ત અહમ્ વિકસતો નથી. આવી વ્યક્તિ ભાંગી પડે છે. અપર્યાપ્ત અહમ્ ને લીધે વ્યક્તિ પોતાની મહત્ત્વાકાંક્ષા પૂરી ન થતાં આત્મહત્યા તરફ વળે છે.

ધર્મ : યુરોપિયન અને અમેરિકન સમાજના ધર્મોને અનુલક્ષીને વિવિધ અભ્યાસો થયા છે. યુરોપ અને અમેરિકામાં પ્રોટેસ્ટન્ટ ખ્રિસ્તીધર્મીઓ કરતાં કેથોલીક ખ્રિસ્તીધર્મીઓમાં આત્મહત્યાનો દર નીચો જોવા મળે છે. યહૂદીઓમાં આત્મહત્યાનો દર કેથોલીક ખ્રિસ્તીધર્મીઓ કરતાં નીચો હતો, પરંતુ હવે યહૂદીઓમાં આત્મહત્યાનો દર વધ્યો છે. એવી જ રીતે કેથલીક અને પ્રોટેસ્ટન્ટ ખ્રિસ્તીઓમાં પણ આત્મહત્યાનો દર ઉંચો ગયો છે. વ્યક્તિનાં મૃત્યુ પછીના જીવન પર પ્રોટેસ્ટન્ટ, કેથોલીક ધર્મ વધુ સ્પષ્ટ છે.

ગ્રામ અને શહેરી જીવન : વધતું જતું શહેરીકરણ આત્મહત્યાનું પોષક પરિબળ બની રહે છે. કારણ કે શહેરી જીવનશૈલીમાં વ્યક્તિનું વૈયક્તીકરણ થાય છે, જેને કારણે વ્યક્તિ એકલી અટૂલી પડી જાય છે. આવું એકાંતીકરણ પણ વ્યક્તિને આત્મહત્યા તરફ દોરે છે. ગ્રામ સમુદાયમાં પણ શહેરી સંસ્કૃતિનું પ્રસારણ આત્મહત્યાનો દર ઉંચો લઈ જવામાં સહાયક બની રહે છે.

આર્થિક કારણો :

અયપ્પન અને જયદેવના અભ્યાસમાં જોવા મળ્યું કે, જે વ્યક્તિની માસિક આવક ૫૦ રૂા. કરતા ઓછી હતી તે વ્યક્તિઓમાં આત્મહત્યાનો દર સૌથી વધારે (૮૦ થી ૯૦% જેટલો) હતો, જેમાં ખેતમજૂરો, મિલમજૂરો અકુશલ મજૂરોનો સમાવેશ થાય છે. જે વ્યક્તિઓની માસિક આવકનો દર ૨૦૦ રૂા. કરતા વધારે હતો તેવી વ્યક્તિઓનો આત્મહત્યાનો દર ૨૦% હતો. ૨૦૦/- રૂા. થી વધારે આવક ધરાવનારમાં એકપણ આત્મહત્યાનો કિસ્સો જોવા મળ્યો ન હતો.

ગરીબી આત્મહત્યાનું મહત્ત્વનું કારણ છે.

અમેરિકામાં વ્હાઈટ ડૉલર જોબ કરતાં બ્લ્યૂ ડૉલર જોબ કરનારામાં આત્મહત્યાનો દર ઉંચો હતો.

ભારતમાં આર્થિક પાયમાલી - આર્થિક દૂર્દશા મહત્ત્વનું કારણ જણાયું હતું. ખેડૂતોની આત્મહત્યાના કિસ્સામાં જોઈએ તો પાક નિષ્ફળ જવો, પાકના વાજબી ભાવ ના મળવા જેવાં કારણો જોવા મળ્યાં હતાં. એજ રીતે ધંધામાં

ખોટ જવાથી દેવું વધી જવું જેવાં આર્થિક કારણો પણ ખેતી સિવાયનાં વ્યવસાયોમાં જોવા મળ્યાં હતાં.

વ્યક્તિગત પરિબળો : આત્મહત્યાનાં વ્યક્તિગત પરિબળોમાં વ્યક્તિની લિંગ, શારીરિક ખોડખાંપણ, માનસિક વિકૃતિ વગેરે ગણાવી શકાય. **લિંગ –** આત્મહત્યાનો પ્રયાસ કરવાની બાબતમાં પુરુષો કરતાં સ્ત્રીઓનું પ્રમાણ વધારે છે, પરંતુ મોટા ભાગના પ્રયાસોમાં પ્રાયઃ સ્ત્રીઓ નિષ્ફળ જાય છે. એટલે જ કલીનાર્ડ એવું કહે છે કે સ્ત્રીઓ અમુક ધ્યેય પ્રાપ્ત કરવાના સાધન તરીકે આત્મહત્યાની ધમકી આપતી હોય છે. ૧૯૬૪ના આંકડા બતાવે છે કે પુરુષોનું આત્મહત્યાનું પ્રમાણ સ્ત્રીઓ કરતાં વધારે છે. જો કે દક્ષિણ ભારત અને ગુજરાતમાં પુરુષો કરતાં સ્ત્રીઓની આત્મહત્યાનું પ્રમાણ વધારે જોવા મળ્યું હતું.

ઉંમર (Age) : જહોન કેઈન કહે છે કે ૧૦ વર્ષથી નીચેનાં બાળકો કદી આત્મહત્યા કરતાં નથી. ૧૫ થી ૩૫ ની વયજૂથમાં સ્ત્રીઓની આત્મહત્યાનું પ્રમાણ પુરુષો કરતાં વધારે જોવા મળ્યું હતું સ્ત્રીઓની આત્મહત્યાના પ્રત્યેક કિસ્સામાં ૧૦૦ કેસમાં ૧૫ થી ૩૪ વર્ષની ૯૬ સ્ત્રીઓ જોવા મળી હતી; જ્યારે અમેરિકા ને યુરોપમાં વૃદ્ધોની આત્મહત્યાનું પ્રમાણ વિશેષ જોવા મળે છે. ક્લીનાર્ડ એવું કહે છે કે આત્મહત્યા વૃદ્ધાવસ્થાની ચિંતા અને નિરાશાનું પરિણામ છે, જ્યારે યુવાવસ્થાનો આશાવાદ આત્મહત્યાની લાલચને વશ નહિ થવા માટે અમુક આકર્ષણ પૂરું પાડે છે.

શારીરિક રોગ-ખોડખાંપણમાંથી મુક્તિ મેળવવા પણ કેટલીવાર વ્યક્તિ આત્મહત્યા કરવા પ્રેરાય છે. અસાધ્ય રોગ, નિર્ધનતા, યોગ્ય સારવારનો અભાવ, સામાજિક ઉપેક્ષા વગેરે કારણોને લીધે વ્યક્તિ આત્મહત્યા તરફ વળે છે.

માનસિક વિકૃતિ - ગાંડપણ કે માનસિક બિમારી વ્યક્તિની અનુકૂલન ક્ષમતાને છિન્નભિન્ન કરે છે. વ્યક્તિ જીવનનું ધ્યેય અને વિવેકશક્તિ ગુમાવી બેસે છે, પરિણામે ક્યારેક આત્મહત્યા કરવા પ્રેરાય છે.

આમ ઘણાં બધાં કારણો આત્મહત્યાની સમસ્યા માટે જવાબદાર છે.

આત્મહત્યા કુટુંબની અર્થવ્યવસ્થા અને પ્રતિષ્ઠા ને હાનિ પહોંચાડે છે. વ્યક્તિનાં કુટુંબને સામાજિક કલંક લાગે છે. સામાજિક વિઘટનની પરિસ્થિતિ સર્જાય છે.

એવી જ રીતે આત્મહત્યાની સમાજ પર પણ વિપરીત અસરો પડે છે. કુટુંબ એ સમાજનું એકમ છે. નવાં જન્મેલાં બાળકોનું યોગ્ય સમાજીકરણ ઉપયોગી એકમ છે. નવા જન્મેલા બાળકોનું યોગ્ય સમાજીકરણ ઉપયોગી સભ્ય પુરા પાડવાનું કાર્ય આત્મહત્યાને લીધે અવરોધાય છે.

સમાજ પર વિપરીત અસર એક સારો કલાકાર, કવિ લેખક વગેરે ગુમાવે છે, જેની ન પુરાય તેવી ખોટ સમાજને પડે છે.

આત્મહત્યાની સમસ્યાનું નિવારણ કરવાના ઉપાયો :

કયા ઉપાયો કરવાથી આત્મહત્યાની સમસ્યા દુર કરી શકાય એની કલ્પના પણ મુશ્કેલ છે, પણ અસંભવ નથી. કાનૂની પગલાં અસરકારક રહ્યાં નથી, કારણ કે આત્મહત્યા કરનાર વ્યક્તિ પોતે જ પોતાની જાતને સૌથી મોટી સજા કરી રહ્યો છે જેને કાયદાની સજાનો ભય નથી.

વ્યક્તિને આત્મહત્યા તરફ દોરી જતી સામાજિક આર્થિક પરિસ્થિતિઓમાં સુધારણા કરવી જરૂરી બની રહે છે. મતલબ એ કે આત્મહત્યા માટેની કારણભૂત બનતી પરિસ્થિતિનું નિવારણ કરવું એ જ આત્મહત્યા નિવારણનો શ્રેષ્ઠ ઉપાય છે. ટૂંકમાં જે કોઈ કારણો છે આત્મહત્યાનાં એનું જ મારણ કરી, જે તે સમસ્યાનું નિરાકરણ લાવી શકાય.

ભારતના સંદર્ભમાં નિવારણ અંગેનાં પગલાં વિચારીએ તો આર્થિક વિકાસના પ્રયાસો, બેકારી નિવારણ યોજનાઓ, માનસિક ચિકિત્સાલયોની સગવડ, સામાજિક આર્થિક સલામતીની વિવિધ યોજનાઓ અમલમાં મૂકી કેટલેક અંશે આ પરિસ્થિતિઓ હળવી કરી શકાય. આ ઉપરાંત વ્યક્તિને સામાજિક સલામતી પૂરી પાડતી જ્ઞાતિ, સંયુક્ત કુટુંબ, ગ્રામ જેવી સંસ્થાઓનું વિઘટન થતું અટકાવવું, કારણ કે આ સમાજની મૂળભૂત-પાયાની સંસ્થાઓ છે. જેના કારણે

વૃદ્ધાવસ્થા, વૈધવ્ય અવસ્થા, ત્યક્તાપણું જેવી સ્થિતિમાં વ્યક્તિનું જીવન દુષ્કર બને છે. આ ઉપરાંત, LIC, કામદાર વીમા યોજના; વૃદ્ધો, વિધવા અને ત્યક્તા સ્ત્રીઓને આશ્રય મળી રહે તો કદાચ આત્મહત્યાનું પ્રમાણ ઘટાડી શકાય.

મૂલ્યો અને ધોરણોમાં પરિવર્તન : મૂલ્યો અને ધોરણો પણ વિવેક પુરઃસરનાં સ્વીકારવામાં આવે તે જરૂરી છે. કજોડા લગ્ન, દહેજ, બાળલગ્નના વિરોધની સાથે સાથે આંતરજ્ઞાતીય લગ્ન, પ્રેમલગ્ન, સ્ત્રીઓની વ્યાવસાયિક ભૂમિકા માટે પરિવારમાં એક પ્રકારની સહાનુભૂતિ વગેરે વિવેક રખાય તો આત્મહત્યાની ઘટનાને કેટલાંક અંશે હળવી કરી શકાય. વિકલાંગને તાલીમ અને રોજગારી માટે તૈયાર કરી લઘુતાગ્રંથિ દૂર કરી સ્વમાનભેર જીવી શકે એ માટેનું વાતાવરણ નિર્માણ કરવું, ગરીબ, બેકાર, રોગીષ્ટ વ્યક્તિને યોગ્ય સારવાર મળી રહે એવો પ્રબંધ કરવો જોઈએ.

માનસિક ચિકિત્સા અને સારવાર કેન્દ્ર : વ્યક્તિ ક્યારેક ડિપ્રેશનમાં આવી જાય છે. હતાશા તરફ વળે છે. ઑનલાઈન (ઓળખ છુપાવીને) જે તે વ્યક્તિને યોગ્ય માર્ગદર્શન આપવાનું કામ પણ જો થાય તો કંઈક આ સમસ્યા હળવી કરી શકાય. સ્વૈચ્છિક સંસ્થાઓ વિકસાવી અને તેની મદદ લઈ, ગંભીર શારીરિક, જાતીય રોગો અંગેની સારવાર, માનસિક રોગોની સારવાર આપી શકાય, તો ઘણી બધી વ્યક્તિઓને આત્મહત્યામાંથી બચાવી શકાય. મનોરોગો વિશે પણ શારીરિક રોગ જેવો જ એટીટ્યૂડ કેળવાશે તો લોકો મનોરોગોની પણ સારવાર લેવા તૈયાર થશે. હતાશા, નિરાશા, ડિપ્રેશનમાંથી બહાર જિંદગી જેવી છે એવી એને સ્વીકારી હારવા, આત્મહત્યા કરવામાંથી પાછા વળવા તૈયાર કરી શકાશે.

અને અંતમાં આટલું ચોક્કસ કહી શકાય કે આ સમસ્યાને જો હલ કરવામાં કોઈ સહાયક બની શકે એમ છે, તો તે સામાજિકીરણની પ્રક્રિયા છે. સામાજીકીરણનાં માધ્યમો છે કુટુંબ, મિત્રજૂથ, શાળા, અને સંચાર માધ્યમો, જેમાં અનૌપચારિક માધ્યમ તરીકે કુટુંબ અને મિત્રજૂથ જે વ્યક્તિને આત્મહત્યા કરતાં અટકાવવામાં મદદરૂપ થઈ શકે એમ છે. શાળાના શિક્ષકો અને માસમીડિયા પણ મદદરૂપ બની શકે. જો કે સૌથી વધુ જવાબદારી તો કુટુંબ પર જ આવે છે. જો કુટુંબમાં બાળકનું યોગ્ય સમાજીકીકરણ થાય, તો આવી ઘટનાઓને અટકાવી શકાય. બાળક શો પીસ-પ્રદર્શનની વસ્તુ નથી, વળી માતા પિતાની અધૂરી રહી ગયેલી ઇચ્છા કે મહાત્ત્વાકાંક્ષા સંતોષવા માટે માતા પિતા દ્વારા થતું વધુ પડતું દબાણ જો ઓછું થાય કે પછી ઘરમાં મિત્રો કે સગાસંબંધીઓ સામે બાળકની વધારે પડતી તારીફ કે અપમાન પર જો માતાપિતા જ સ્વયં સ્વનિયંત્રણ મૂકે તો આવી પરિસ્થિતિને હળવી કરી શકાય. મતલબ એ છે કે સમાજીકીકરણનો ટ્રેન્ડ-તરાહ જો બદલીશું તો આ સમસ્યાને દૂર કરવી અઘરી નથી. ઘણીવાર માસમીડિયા, ટીવી ફિલ્મ, સોશ્યલ મીડિયાની ચકાચૌંધથી પણ વ્યક્તિ અંજાઈ જાય ત્યારે કુટુંબમાંથી જ એને હાર-જીત, સફળતા નિષ્ફળતાને પચાવવાનો વિવેક શીખવવામાં આવે, એ પણ એટલું જ જરૂરી છે. સાથે પારિવારિક ભાવના-મજબૂત રહે, અને - પારિવારિક સંબંધો ગાઢ બને એ જરૂરી છે. જો કે પારિવારિક સંબંધોની ઘનિષ્ઠતા એ — આત્મહત્યાની નવા તરાહ-ટ્રેન્ડ — સામૂહિક આત્મહત્યા'ની નવી જ ચિંતાજનક પરિસ્થિતિ ઊભી કરે છે. ગુજરાતમાં વડોદરાના સોની પરિવાર અને આણંદના શાહ પરિવારમાં બનેલી ઘટના આત્મહત્યાની પરિસ્થિતિ અંગે પણ પુનઃવિચારણા માંગે છે.

ક્યારેક આપણે નવી પેઢીને આ સમજાવવામાં સફળ થઈશું કે શિક્ષણ નોકરી, મિત્ર, પ્રેમમાં નિષ્ફળતા કે ફરજ કે ગરીબાઈ બધાં કરતાં જિંદગી-શ્રેષ્ઠ છે, જેના પર માત્ર આપણો જ નહિ, સાથે જોડાયેલા તમામ સ્વજનો-સગાંનો પણ હક છે.

આવો શુભ શરૂઆત કરીએ અને જીવનને હકારાત્મક દૃષ્ટિકોણથી જોવાનું શરૂ કરીએ.

◉◉◉

POSITION AND PROBLEMS OF TRIBAL STREET VENDORS

(With Special reference to Santrampur Taluka of Mahisagar District, Gujarat)

– Dr. Kamini Dashora

Introduction

Street vending is a global phenomenon and the most visible aspect of the informal sector. Like other informal sector street vending is characterized by low level of income, easy of entry, self-employed and it involves large number of people. In cities and towns throughout the world, millions of people earn their living by selling wide range of goods and service on the street. Despite a general belief that street vending will recede as economy develops and income rises, it is actually on increase in many places.

Street vendors are often those who are unable to get regular jobs in the remune-rative formal sector on account of their low level of education and skills. They try to solve their livelihoods problems through their own insufficient financial resources. They are the main distribution channel for a large variety of products of daily consumption like fruits, vegetables, readymade garments, shoes, household gadgets, toys, stationery, news-papers, magazines and so on. If they were to be eliminated from the urban markets, it would lead to a severe crisis for fruit and vegetable farmers, as well as small scale industries which cannot afford to retail their products through expensive distribution networks in the formal sector. The importance of this sector cannot be undermined, especially considering that the government does not have the capacity to provide jobs to the millions of unemployed and underemployed people in India. Even the corporate sector is able to absorb only a tiny proportion of our expanding work force. Overall employment in the formal sector is actually declining, this means most people in India have to fend for themselves. People in the informal sector ought to be encouraged to grow and prosper if the governments want to reduce unemployment and poverty in our country. They contribute significant role in local economic growth and development of the urban economies. Public authorities considered street vendors as a nuisance and as encroachers of sidewalks and pavements and do not appreciate the valuable services that street vendors provide to the general population of the world. Street vendors provide valuable services to the urban masses while making out a living through their own enterprise, limited resources and labour. Street vendors have been demanding protection from civic agencies and the state government so they can earn their livelihood without fear,

Street Vendors :

Street vendors belong to the group of entrepreneurs as they organize a business venture and assume the risk for it. They have a great contribution to the overall level of economic activity and to the provision of goods and their services.

According to National Policy on Urban Street 2009, the street vendors are consi-dered as micro entrepreneurs. It clearly indicates the activities and motivations of the street vendors. They proposed that the general public is very much dependable on these street vendors for their daily needs. Street vending is thus not simply considered as a source of employment to them but they are considered as the inevitable part of the urban population. Among the diverse problems faced by them unemployment and poverty worry them a lot. Therefore protection of the rights of these

poor people is necessary and it is the responsibility of the state as per the National policy on street vendors. By giving them proper education and training they can improve their entrepreneurial skills, so that they could increase their income level and have a better livelihood.

Concept of Street Vending :

Street vendors are also termed as street traders, hawkers, sidewalk traders and peddlers. The terms that describe them are based on time or place where they work. Their usages vary according to locality and region. Their terming also differs from state to state and from country to country. Street Vendors act as distributers of goods and services at affordable rates to the customers with an option to assess the product according to their economic and social conditions.

McGee (1973) divided vendors according to three main types of locations :

(a) Vendors who sell in places where people assemble, such as markets and bus terminals

(b) Vendors who sell on the street. This type of vendor poses problems of congestion and obstruction.

(c) Vendors who sell in a bazaar.

A bazaar is equivalent to the seasonal or periodic market where vendors sell on a piece of public or private land. According to National Commission on Labour, street vendors are identified as self employed workers in the informal sector who offer their labour for selling goods and services on the street without having any permanent built-up structure. Street Vendors may allude to merchants with settled slows down, for example, Kiosks, Vendors who work from semi settled slows down like collapsing tables, cartons, collapsible stands, wheeled push trucks that are expelled from the avenues and put away overnight, merchants who offer from settled areas without a tall structure, showing stock on fabric or plastic sheets, or portable sellers who walk or oar their bikes through the lanes as they offer.

The National Policy for Urban Street Vendors, 2004 characterizes a road merchant as "a man who offers merchandise or administrations available to be purchased to general society without having a lasting developed structure yet with an imper-manent static structure or portable slow down (or head stack). Road merchants might be stationery by possessing space on the asphalts or other open/private territories, or might be portable as in they move from place to put conveying their products on push trucks or in cycles or bins on their heads, or may offer their products in moving trains, transport and so forth. The term urban merchant in the approach incorporates the two dealers and specialist co-ops, stationary and in addition versatile sellers and joins all other nearby/area particular terms used to depict them, for example, vendor, pheriwalla, rehri-patriwalla, pathway dukandars, walkway brokers and so on.

The revised National Policy for Urban Street Vendors, 2009 defined a street vendor as 'a person who offers goods or services for sale to the public in a street without having a permanent built-up structure.'

There are three basic categories of street vendors : (a) stationary; (b) peripatetic and (c) mobile.

Stationary vendors are those who carry out vending on a regular basis at a specific location, e.g. those occupying space on the pavements or other public places and/or private areas either open/covered (with implicit or explicit consent) of the authorities.

Peripatetic vendors are those who carry out vending on foot and sell their goods and services and include those who carry baskets on their head/slung on their shoulders and those who sell their goods on pushcarts.

Mobile street vendors are those who move from place to place vending their goods or services on bicycle or mobile units on 10 wheels, whether motorized or not. They also include vendors selling their wares in moving buses, local trains etc.

The term 'Urban Street Vendor' incorporates all other local/regional specific terms used to describe them, such as hawkers, pheriwallas, rehri-patriwallas, footpath dukandars, sidewalk traders, etc.

The Street Vendors (Protection of Livelihood and Regulation of Street Vending) Act, 2014 characterizes road seller as a "man occupied with distributing of articles, products, products, nourishment things or stock of ordinary utilize or offering administrations to the overall population, in a road path, side walk, trail, asphalt, open stop or some other open place or private region or by moving from place to put and incorporates vendor, merchant, squatter and all different synonymous terms which might be nearby or district particular". Road merchants constitute a subset of those occupied with retail exchange, even a subset of the individuals who are independently employed in retail exchange. These independently employed sellers can be considered as small scale business people.

Policies in Plan and Action :

Street Vendors act 2014 Street Vendors (Protection of Livelihood and Regulation of Street Vending) Act, 2014 is an Indian legislation aimed to regulate street vendors in public areas and protect their rights with following key highlights Town Vending Committee will be responsible for conducting of survey of all the vendors under its jurisdiction, and such survey must be conducted every five years. No street vendor will be evicted until such survey has been made and a certificate of vending has been issued.

Research Area :

Santrampur, which used to be known as Brahmpuri, is a town in Mahisagar District, Gujarat, India. It serves as the administrative headquarters for Santrampur tehsil and is located on the banks of the Suki river in the lap of the Aravalli hills. It is 155 km from the state capital at Gandhinagar.

As of 2011, Santrampur had a population of almost 19,000 people. The town is known for its historical tower built in the western part of the city. An open-air market, called Haat bazaar, take place on every Tuesday in the town. The town has various heritage buildings, administrator offices and educational institutions.

Objectives of the Study :

The very general objective of this research was to describe the current status and problems of Street Vendors in Santrampur Taluka.

The Specific Objectives were :

(1) To study the current status of urban street vending in Santrampur Taluka.

(2) To identify the major constraints that the vendors face while operating their business.

(3) To examine the environmental impact of street vending to society.

(4) To study the current status of Occupational Hazards/Diseases among street vendors in Santrampur Taluka.

(5) To study the needs & problems of imigrants engaged in vending.

(6) To study the awareness level on current Govt. schemes/programmes to uplift street vendors (rules like the 'The Street Vendors (Protection of Livelihood and Regulation of Street Vending) Act, 2014, 2016 etc.)

Research Methodology :

The present study is an action research with descriptive and empirical nature. The registered and non-registered street vendors from urban area (Corporation and Muni-cipality LSG Regions) of Santrampur Taluka of Gujarat State constitute the universe of this study. The sample size for the study was fixed as 150, after due deliberations and brainstorming sessions with different stakeholders. The sample frame clearly covers all subpopulation/ categories of street vending community. In order to draw samples from the universe, the researcher used mixed sampling technique, the proper blend of Random Sampling and Purposive (Judg-mental) Sampling. Simple percentage and mean score calculation techniques were used here.

Major Findings :

Street vendors can be stationary and occupy space on the pavements or other public/private areas, or could be mobile, and move from place to place carrying their wares on push carts or on cycles or baskets on their heads, or could sell their wares in moving buses. It is assumed that there are nearly 1crore street vendors in India. They are mainly observed in Indian cities. It is an informal economy which is not regulated. The study clearly revealed the current status of local as well as in-migrant street vendors, in terms of their current needs & problems. The recent trends of street food vending are also reflected in the study, Most of them survived along with their nuclear family through this primary occupation. Most of them have basic education. Urban street vending is predominant in municipal areas. Even though the central government has come out with Street Vendors Act, (Protection of Livelihood & Regulation of Street Vending), 2014 the registration through Town Vending Committees (TVCs) are not upto the mark. Their licensing process is still under discussions. Strict & controlled programmes are to be implemented to convert BPL category of street vendors to APL.

Mobility of street vendors is the real difficulty to track & study their current living & trading standards. This creates an ambi-guity to identify the actual population of this community. Since they have got a long trading track, they are not at all willing to relocate from their current location. The promising factor is that a majority of them have election ID, ration card and Aadhar card. Few of them are yet to enter into the circle of banking activities.

Health issues, having only low capital for investment and family occupation are the major reasons for being in this. Women and differently abled people are also engaged in street vending. Since the daily income is so meager, they have to work continuously more than the normal (more than 8hours). The recent trend shows that the evening & night street trading is increasing phenomenally. The leading vending style is stationary mode, at least for that day. Being in a telecom-munication era, street vendors are also trying to connect with the world properly. They do not have proper investments as securities for their future life (like own home and land, ornaments, fixed deposits, etc.).

Almost all of them are doing their business independently. The alarming fact is that the

majority of street vendors are struggling to survive. The living standards are also getting affected due to the income-expense imbalance.

Savings from their own trading is the primary investment for their business. Few of them have faced forced eviction. The influences of alcohol, cigarette, etc. are still there across street vending community. The popularity of SHGs is not at all visible among them. Since social services are intended to aid disadvantage, distressed and vulnerable persons, street vendors are much inclined towards their peer community.

The proper awareness on continuing education should be made among them. Since the streets of Santrampur are easily hit by natural calamities, the street vendors are the most affected community. The recent severe flood proved this fact. The status of street vendors are much affected by their demographic structures, family life, social security, health and hygienic conditions (physical state, mental/emotional state, enjoyment of life, working condition, overall quality of life and hygienic conditions), financial stability and trading conditions (registration status, space and location, nature of purchase, style of trading, nature of buyers, storage facility, relationship with stakeholders, influence of trade union, sales forecasting, political environment, economic environment, social environment, technological environment and legal environment.

It is observed that most of the street vendors in Santrampur engage in trading activities more than 8 to 10 hours. They cannot support the family or family members at their time of need. In terms of social security, the street vendors are not getting support from NGOs or any other resources. The government authority could not provide sufficient numbers of seminars or training and awareness programs on social security. The health condition of street vendors is a much contributing factor to the smooth and perfect trading practices.

The study shows that a considerable number of street vendors are affected with neck or backache, sore arms or legs, headaches, tensions, stiffness, lack of flexibility in spine, fatigue, low energy, colds, flu, nausea, constipation, menstrual disco-mfort, allergies, skin rash, dizziness, light-headedness etc. Most of them have never undergone any kind of medical check-ups during their vending period. May be due to the struggled living standards, they could have been able to handle mental/ emotional stress. Like others, they are also trying to manage their lives using their limited income.

The working conditions like access to clean and safe drinking water, toilet facility, medications, nutrient food etc. should be improved. Even though, the working conditions are average or below, the overall quality of the life is satisfactory. Street vendors should be properly educated regarding personal and working place hygiene. In spite of sound knowledge in banking practices, they are apparently week in banking activities like internet banking, mobile banking, overdraft facilities, transactions through debit or credit card etc. To set off the mental or emotional stresses, they should be exposed to some quality/standard recreational activities.

The study clearly revealed that the lower/ meager disposable income is a major factor for not meeting the common expenses like basic needs, medical needs, children's education, paying rent, transportation expenses, purchase expenses etc.

It is observed that the street vendors are facing difficulties while registering the TVC. Since, the street trading are much dependent on pedestrians, the street vendors are always trying to keep the vending space neat and clean. They are also trying to maintain rapport with nearby shop owners. They always purchase through legal channels and also enjoy sufficient credit facilities too. To get at a cheaper price, they purchase vending products from wholesalers and distributors. Suppliers are the pivotal agents to fix the selling price. Almost purchases are against cash. Daily and weekly modes are dominant purchase styles from suppliers. They are not offering repair or replacement to the products sold, because from the supplier side they do not enjoy the same.

Normally, street vendors hold a positive relationship with the customers. Storage of products is one of the difficulties they are facing. This results in street vendors being forced to rent/share for storage spaces with the fellow traders. Street vendors are always practicing to hold better relationship with suppliers, customers, partners, government officials, nearby shop owners and peers.

A good number of street vendors are expecting a proper support through government policies and laws. Majority of them are affected by bandhs, hartals and other strikes. Street vendors in Santrampur are affected by GST and demonetisation. Organised retail shops are the real threats to survival of street vendors. Usually street vendors are used to target low and average income families, youth, housewives and working men. Very few of them use Paytm type digital gateways to transact with customers and suppliers.

The interesting fact is that a few street vendors have started to market their products and services through social media. The government or concerned agencies should take proper steps to make the street vendors aware of the laws and rules which favour them. The street vendors are lying in the bottom of the low level vending pyramid. They are also facing a lot of difficulties during their vending period. The study also tries to dig the major constraints faced by street vendors while operating their trading.

The major challenging areas are health, work, financial instability and social factors. The street vendors are working daily for more than 8 hours to survive. Most of them seem to be worried about their family and life. They cannot spend much time with their family members. It may be because of the good culture of Kerala that the street hawkers are getting better treatment though not always from the public in their vending place. It seems that few are struggling to repay their credits availed. It’s quite common that they had clash with fellow vendors for occupying vending zone and on the price at which they sell. Most of the vendors feel that seasonal changes affect their working condition due to the lack of proper storage facilities. As it is everywhere, women street vendors are not so safe at night time. Due to the extended work time, street vendors are prone to health problems intermittently. They find difficulty to have food, to sit, and to take periodic breaks while vending. They have also missed health check-ups, even when need. Access to public toilet facilities is always a problem across Santrampur. Few are suffering from hearing difficulty due to their work atmosphere. Some suffer from body pain and hypertension due to their working condition. Skin rashes, rheumatic problems, cold & flues, mental ill-health like, acute distress etc. are quite common among them. Primary investment to

procure goods and money for children's education are two major bottle neck issues they encounter. Some of them faced difficulty to avail loan and to earn enough for basic needs of life.

They are not irritated by the bargaining practices by the customers. They also try to cater to all domains of people with affordable prices. They allow customers to choose their products, unlike other organised shops. They try to keep the surroundings clean to prevent spread of diseases. Easy access to the common public is the crux behind the colour of urban street vending. Health and hygienic conditions of street vendors are to be addressed properly by the respective authorities. This research clearly pitched at this spot. The most common health related difficulties among street vendors in Kerala are : skin rashes, allergies, cracked heels, musculoskeletal diseases, difficulty in walking/bending, elbow/joint pain, respiratory diseases, breathing difficulty, sore throat, cough, infectious/contagious diseases like fever, malaria, frequent headache, diarrhea, air borne & water borne diseases. Frequent injuries due to lifting/carrying objects are another threat. Acute vascular disorders and Cardiac problems like rapid heartbeat, hypertension etc are also quite common. With respect to behaviour problems, most of them suffer from anxiety disorder and mood swings. Some are disturbed by noise in the surroundings while few get angry easily. Mental illness is also common. Physical problems like allergic issues, urinary problems, Sunburn etc are to be treated seriously.

With respect to psychological problems, Sleeping disorders are too common among them. Anxiety about future makes them lose their temper during trading. There are both economic and social imbalances among states in India and this leads to internal migration in general to Kerala too. In-migrant street vendors are part and parcel of Kerala's street vending community. Like others, they are also facing various problems. The study also is trying to shower light on it to unveil those issues. Among in-migrants also Street vending is male dominated. Most of them have only an educational qualification of lower primary and belong to the age category of 14-25. Majority of them are from Tamil Nadu and mostly engaged in vending street food and stationary items. It is clear that they belong to BPL category. Most of them stayed in rented spots. Most of them are able to earn daily profit of less than -500. They do not get sufficient time to take care of their family. A few of them are affected by medical problems during vending like sunburn, skin rashes, body pain etc. Few of them use masks or gloves during vending. Toilet facility is not available in vending zones. Mobility is the most seen phenomenon among in-migrant street vendors. They are keeping average health and hygienic standards. The vending activities are mostly affected by bad weather conditions like recent floods. The trading materials are kept in rented areas on a sharing basis. They expect more support from LSG authorities and law enforcers. Their survival is mostly affected during bandhs, hartals and other strikes. They are much anxious about future. They struggle to repay their credits. Most of them face difficulty to find money for primary investment. They always try not to encroach footpaths, not to cause difficulty to pedestrians or vehicular traffic and try to dispose waste properly. They also seem to be affected by occupational diseases like skin rashes or allergies, cracked heels, difficulty in walking and bending, continuous standing and elbow or joint pain, musculoskeletal diseases,

respiratory diseases like breathing difficulty and sore throat, diarrhea, air & water borne diseases, allergic issues, body pain , sunburn, urinary diseases, cardiac & acute vascular problems etc. Like other local street vendors, in-migrant street vendors also undergo mental ill-health, hypertension, anxiety, depression etc. Daily survival is the bare minimum requirement. But building their own homes is the motive behind their migration. Almost all of them are unskilled.

They are also unaware of the condition that they should not have been prosecuted and convicted or penalized earlier for any reason connected with vending and the restriction that certificate of vending cannot be passed to legal heir. Clauses for cance-llation or suspension of the certificate of vending and the notice period for the cancellation of certificate of vending are also unknown to them. For the last few years, central and state government have been trying to implement laws and schemes to uplift street vendors. Street vendors are an integral part of urban economies and they offer easy access to a wide range of goods and services in public spaces. But, they seem to lack social protection and are prone to many health issues as they are vending on roadsides. Sometimes, they are regarded as public nuisance as they encroach footpaths. So, these laws and schemes are put forward to regulate and protect street vendors. The central government law and state govern-ment scheme also, are intended to give recog-nition to the street vendors. But it seems that, it has not reached its target. Many vendors are still unaware of a law existing to support them, while some have vague knowledge about schemes and act.

A major observation to be made on the awareness level of street vendors on these laws/schemes is the ignorance on the same. Majority seem to be unaware of Town Vending Committees, certificate of vending and issue of ID cards. Vendors remain ignorant on the benefits provided by these laws and schemes. Vending zone is an attractive element introduced by the gover-nment which is under implementation. It gives them a particular place to vend, taking into consideration the difficulty to find a space for vending. Sometimes, they will be evicted, if they encroach busy paths. Hence provision of a vending zone will be a great advantage to the vendors, provided, vending space allotted, is near to a busy area. Provision of ID cards and certificate of vending are subjected to certain conditions. Hence, it is important to give awareness about it to the vendors, as it is specifically focusing them. The study revealed the lack of awareness of the laws/schemes, intended to protect them.

Challenges faced by Street Vendors :

(1) Street Vendors faces many problems as they are vulnerable population, who are neither protected by government, NGOs, labour union nor by any labour law. They are deprived by laws made by gover-nment in respect of labour union,

(2) The street vendors always suffer com-petition with other street vendors because of fluctuation in market prices, insecure and irregular employment. Their incomes are often minimal and their sales fluctuate. Another reason for decrease in income of street vendors is that they are forced to pay 15 to 20 percent of their daily income as bribes to local police.

(3) Street vendors are usually associated with encroachment of public spaces, causes traffic congestion, inadequate hygiene, and poor waste disposal. Safety of food has

been increasingly become a concern in regard to street vendors. No Gover-nment agency is authorized to verify the content of food as they are not regulated by any government agency.

(4) The government does not recognize the contribution of street hawkers towards economic and social well-being of urban population. They survive without government support. But ultimately, gover-nment has passed "Street Vendors Bill 2013", which protects the rights of street vendors, Ministry of Urban Development and Poverty Alleviation [2002].

(5) Negative impact of online shopping on retailers and street vendors-Online shopping is a form of electronic com-merce whereby consumers directly buy goods or services from a seller over the internet without any intermediary service. Online shopping has become the trend and the new mode of purchasing. There are around 1000s of online marketing enterprises selling cosmetics, clothes, shoes, accessories, vitamin supplements, etc. literally the entire range of consumer items. The trend is very clear; retail shop demand will fall and even shrunk. Online shopping is indeed having an adverse impact on the retail sector.

(6) Uncertainty and insecurity: The basic problems of street vendors is insecurity and uncertainty as their profession is considered illegal, but according to government of India assessment done in 2004 shows around 2.5% of local poor urban population survive by working in this occupation. If government provide license to street vendors, they can be protected from harassment and eviction by local authorities and local police.

(7) Bicycles, pedestrians and bus traffic attract street vendors. Often the side roads and pedestrian paths are occupied by people selling food, drinks and other articles which are in demand by road users. Vendors often locate themselves at 4 places which are natural markets for them. A careful analysis of the location of vendors, their numbers at each location and the type of services provided clearly shows that they are needed since they work under completely 'free market' principles. If their services were not required at those locations, they would have no incentive to be there. Road and city authorities, however, view their existence as illegal,

(8) With increasing urban migration and the shrinking formal sector, hawking and street vending have emerged as one of the critical means of earning a livelihood for the urban poor in India. Today, ven-ding is an important source of employ-ment for a large number of urban poor as it requires low skills and small financial inputs. People engaged in vending tries to solve their problems through their own meager resources. Unlike other sections of the urban population they do not demand that government create jobs for them, nor do they engage in begging, stealing or extortion. It appears that irrespective of the location and type of vendors, they try to live their life with dignity and self-respect through regular vending acti-vities.

Recommendations :

The following recommendations are put forward on the light of the observations, stake holder discussions, data analysis, inferences, and findings.

(i) The concerned govt. departments should

do/finish the census survey to enumerate all categories of street vendors in Santrampur as soon as possible.

(ii) The steps are to be taken to enhance the Self Help Group (SHG) cultural activities among street vendors in specific vending zones.

(iii) Continuing education schemes could be implemented among street vendors, which will boost their academic as well as non-academic standards.

(iv) Since the financial instability is the major threat, there should be proper education, exposure and awareness of: a. Proper handling of bank accounts b. Exposure on schemes or benefits of banking services c. Training on the benefits of digitalization, GST, digital transactions, payment gateways, money wallets like Paytm, Rupay, etc. d. Proper education on the evil impacts of over interest loans, chitties, etc. e. Make them confident and equip them to save properly from their daily income. f. Financial support to build own houses, own land, two/three wheelers, etc. g. Sufficient timely support to educate their children decently

(v) Strong awareness programs should be implemented at the earliest on: (a) The existence and benefits of rules like Street Vendors (Protection of Livelihood and Regulation of Street Vending) Act, 2014 (Central Act 7 of 236 2014) and The Kerala Street Vendors (Protection of Livelihood and Regulation of Street Vending) rules-2016. (b) Benefits of Town Vending Committees (TVCs) (c) Registration and Licensing procedures through LSGs (d) Concept of legal and restricted vending zones (e) Renewal procedures for certificate of vending

(vi) LSG or related authorities/agencies should take care of the facts like :

(a) Toilet facility

(b) Safe drinking water facility

(c) Encroachment of vending spaces

(d) Proper storage facility

(e) Proper cleaning of drainage systems close to vending zones

(f) Taking care of aged street vendors

(g) Security to women vendors

(vii) Skill based training on :

(a) Soft skill enhancement

(b) Strong Work Ethics

(c) Timely enhancement of positive attitude, communication, time management, self-confidence, ability to accept and learn from good and bad experiences, social skills etc.

(viii) In terms of health & hygiene conditions, the authorities should :

(a) Take care of their physical state to address body pain, fatigue or low energy, menstrual discomfort, skin rashes, headaches etc.

(b) Take care of mental and emotional health of street vendors like others to curtail the ill-effects of short–temper, over-excitement, depression, indecisiveness and anxiety

(c) Promote recreational activities to entertain their lives smoothly

(d) Improve the hygienic conditions like personal hygiene, social hygienic factors, etc.

(e) Hold special medical camps/clinics to handle occupational diseases or hazards separately.

(f) Conduct special clinics by Commu-

nity medicine departments of Govt. Medical Colleges or Taluka Hospitals/ dispensaries for musculoskeletal diseases, Respiratory diseases, Infectious or Contagious diseases, special fevers/flues, mental diseases, etc.

(ix) Needs and problems of inmigrants should be addressed properly.

The actions should be taken to :

(a) Improve the living standards of in-migrants

(b) Upkeep the correct database of in-migrants to avoid crimes.,

This will also help them to handover the govt. schemes and benefits timely and properly. The authorities should ensure the ownership of identification documents like Election ID, Aadhar card, Ration card, vehicle license, Medical cards, Bank accounts etc. c. Build proper shelters to them near to vending zone:

(d) Alleviate the feeling of alienation from the local community and agencies e. Accommodate the in-migrants into the legal framework of LSGs through TVCs

References :

1. A. H. Subratty, P. Beeharry, & M. Chan Sun, 2004, 'A survey of hygiene practices among food vendors in rural areas in Mauritius'. Nutrition & Food Science.
2. Amod K. Kanth, 2000, 'Vendors, Police &Governance'.
3. Anu Varghese, 2016, 'Socio economic conditions of street vendors', Inter-national Education and Research Journal.
4. B. E. Solomon-Ayeh, R. S. King, &I. Decardi-Nelson, 2011, 'Street vending and the use of urban public space in Kumasi, Ghana'.
5. Bhowmik, S. 2010. Legal protection for street vendors. Economic and Political Weekly.
6. D. B. Adhikari, 2012, 'Income generation in informal sector: A case study of the street vendors of Kathmandu Metro-politan City', Economic Journal of Development Issues.
7. D. Saha, 2011, 'Collective bargaining for street vendors in Mumbai: Toward promotion of social dialogue', Journal of Workplace Rights
8. D. Saha, 2011, 'Working life of street vendors in Mumbai', The Indian Journal of Labour Economics.
9. D. Widiyastuti, 2013, 'Transformation of Public Space: Social and Spatial Changes A Case Study of Yogyakarta Special Province', Indonesia (Doctoral dissertation, Technical University of Dortmund.
10. Destombes, T.J.J. 2010. Informal Entre-preneus: Street Vendors, their Livelihoods and the influence of Social Capital. The case of cut-flower and fruit vendors in Old Downtown Cebu City, 2007 Master's thesis.Dhliwayo, S. 2008. Experiential learning in entrepre-neurship education: A prospective model for South African tertiary institutions. Education+ Training, 504, 329-340.
11. Dimas, H., 2008, 'Street Vendors: urban problem and economic potential', Retrieved from Bandung.
12. F. Lund, 1998, 'Women street traders in Urban South Africa. A synthesis of selected'.
13. G.M. Bhat & A.H. Nengroo, 2013, 'Urban informal sector: A case study of street vendors in Kashmir', International Journal on Management Business Studies.
14. H. R. Sekar, 'Insecurities and Vulnerabilities of Informal Sector Vendors with Special Focus on Street Vending Children of NOIDA'.
15. H. Sharma, 2015, 'Laws Pertaining To Rights Of Street Vendors In India: An Analysis', Pranjana: The Journal of Management Awareness.
16. Hassan, N. 2003. Accommodating the street hawkers into modern urban management in Kuala Lumpur. In International Conference of

the International Society of City and Regional Planners, Cairo. Retrieved from www. isocarp. net/Data/case_studies/293. pdf.

17. I. Chakravarty, & C. Canet, 1996, 'Street foods in Calcutta. Food Nutrition and Agriculture'.
18. Ikechebelu, J. I., Udigwe, G. O., Ezechukwu, C. C., Ndinechi, A. G., & Joe– Ikechebelu, N. N. 2008. Sexual abuse among juvenile female street hawkers in Anambra State, Nigeria. African journal of reproductive health.
19. Indira, K. 2014. A Study of Street Vending Across the Globe. International Journal of Advanced Research in Computer Science and Software Engineering.
20. J. Charmes, 2009. Concepts, measurement and trends. Is informal normal.
21. J. S. Anjaria, 2006, 'Street hawkers and public space in Mumbai', Economic and Political Weekly.
22. K. Ndung'u, & M Zacharia, 2004, 'Claim to urban space: a study of hawkers street vendors within the central business district of Nairobi-Kenya', Doctoral dissertation, University of Nairobi, Kenya.
23. K. S. Pradeep Kumar, 2015, 'Socio - Economic features of street vending enterprises in Kerala', International Journal of Management and Commerce Innovations.
24. Mavalankar D and A.K. Srivastava, 2008, Lessons from Massive Floods of 2006 in Surat City: A framework for Application of MS/OR Techniques to Improve Dam Management to Prevent Flood, IIM, Ahmedabad
25. McGee, T.G. and Yeung 1977, 'Hawkers in South-East Asian Cities: Planning for the Bazaar Economy', Ottawa, IDRC.
26. Ministry of Urban Development and Poverty Alleviation 2009, Model Street Vendors Protection of livelihood and regulation of Street vending Bill, New Delhi, Government of India.
27. N. Nirathron, 2006, 'Fighting poverty from the street', A Survey of Street Food Vendors in Bangkok.
28. N. Y. G. Boakye, 2014, 'Goals of Migrant and Non-Migrant Youth in Accra Doctoral dissertation', University of Ghana.
29. National Sample Survey Round, Schedule 10- Employment and Unemployment, 2009-10;
30. P. Dabir-Alai, 2004, 'The Economics of Street Vending: an empirical framework for measuring vurnerability in Dehli in the late 1990s'. In EDGI and UNUWIDER Conference, Unlocking Human Potential: Linking Informal and Formal Sectors pp. 17-18.
31. P. Jain, 2013, Neo-liberalizing the Streets of Urban India: Engagements of a Free Market Think Tank in the Politics of Street Hawking
32. Policy guidelines for Street Vendors Hawkers -2014, Urban Local Bodies Department
33. Priyanka Kulkarni, 2008, 'Planning and Design Solution for Informal Sector: A Case Of Street Vending In Ahmedabad' Planning Dissertation, School of Planning, CEPT University, Ahmedabad.
34. R. Karthikeyan, &R. Mangaleswaran, 2013. Quality of Life Among Street Vendors in Tiruchirappalli City, Tamil Nadu, India. International Research Journal of Social Sciences.
35. R. Kolli, 2011, 'Measuring the Informal Economy: Case Study of India'.
36. R. Meneses-Reyes &J. A. Caballero-Juárez, 2014, 'The right to work on the street: Public space and constitutional rights', Planning Theory.
37. S K Shibin & P M Nishanth, 2017, 'Problems of street vendors in Kollam district', International Journal of Informative & Futuristic Research.
38. S.K. Bhowmik, &D. Saha, 2012, 'Street vending in ten cities in India', Delhi National Association of Street Vendors of India.

ભીલોની ઉત્પત્તિ, ભીલ રાજાઓ અને રાજ્યો

– ડૉ. અમૃત ઠાકોર

આદિવાસી સમાજ ભારતનો સૌથી પ્રાચીન સમાજ છે. ભારત ભૂમિના વિશાળ ભૂભાગ પર આદિમકાળથી વસવાટ કરતા માનવોના એ વંશજો છે. તેજ અહીંના મૂળ આદિમ નિવાસી પાષણકાલીન માનવો છે. ભારત ભૂમિ પર અનેક વિદેશી પ્રજાઓનું આગમન થયું તે પહેલા સમસ્ત ભારત નિષાદવંશી (પ્રોટોઓસ્ટોલોઈડ) માનવોથી આબાદ હતું. તેમની મુખ્ય જાતિના આધારે તેમને નિષાદ કે કોલ કહેવામાં આવે છે. તેઓ સભ્યતામાં આગળ વધી શક્યા નથી. આજે પણ તેમના વંશજો ભારતમાં મધ્ય, પૂર્વ અને દક્ષિણ ભાગોમાં અલ્પ વિકસિત રૂપમાં જોવા મળે છે. કોલ ઉપરાંત ભીલ, સંથાલ, મુંડા તેમની પ્રસિદ્ધ જાતિઓ છે.

ભારતના અતિપ્રાચીન ગણાતા વૈદિક સંસ્કૃત સાહિત્યમાં આદિવાસી પ્રજાઓ માટે નિષાદ, પુલિંદ,શબર, દાસ, દસ્યુ, નાગ, અસુર, રાક્ષસ, દૈત્ય, કિરાત, માતંગ, વનૈચર, લુબ્ધક, વ્યાઘ, આંભીર, ભીલ, ધીવર, કૈવર્ત વગેરે નામો મળે છે. આજ માનવો આજના આદિવાસી ભીલોના પૂર્વજ હતા. સિંધુ સંસ્કૃતિના ઉત્ખનનથી જે 'શિવ' અને 'નાગ' પૂજાના અવશેષ મળ્યા છે, તેના પરથી એમ કહી શકાય કે સિંધુ સંસ્કૃતિનો માનવ નિષાદ ભીલ જાતિનો હતો. પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન ભાંડારકર 'શિવ'ને પ્રાચીન નિષાદ ભીલ સંસ્કૃતિ સાથે સંબંધિત માને છે.

બિસપ હેબરના સંદર્ભ સાથે કર્નલ વોટ્સન કાઠીયા-વાડ સર્વ સંગ્રહમાં નોંધે છે કે કોળીઓ તથા ભીલો મધ્ય તથા પશ્ચિમ હિંદુસ્તાનના મૂલ વતનીઓ હતા. (પૃ. ૬૦)

અતિપ્રાચીન સમયમાં આદિવાસી કોલ જાતિ સિંધમાં નિવાસ કરતી હતી. ત્યાંથી સમુદ્ર કિનારે કિનારે આ પ્રજા દ. ભારત તરફ ગઈ. તથા સમુદ્ર કાંઠે વસવાટ શરૂ કર્યો. કોલોની કુળદેવી મુમ્બા દેવી હતી. તેમની કુળદેવીના નામ પરથી તેના નગરનું નામ મુંબઈ પડ્યું. કર્નલ વોટશન પણ સિંધુના કાંઠે કાંઠે આગળ વધી કોળી ભીલો સૌરાષ્ટ્રમાં (નળકાંઠા વગેરે)માં વસ્યા હોવાનું નોંધે છે. ગુજરાત કાઠિયાવાડમાં કોલો (કોળી)નાં ૪૨ થાણાં (જાગીરો) હતાં. (કોળી અને ભીલ એક જ જાતિના છે.)

તમિલભાષાના પ્રાચીન ગ્રંથોમાં આદિમ જાતિઓ માટે 'બિલ્લવર' અને 'મીનવંર' શબ્દો પ્રયોજાયા છે. 'બિલ્લવર' એ છે જે તીર ધનુષ લઈને શિકાર કરતા હતા જ્યારે મીનવંર એ છે જે માછીમારી કરતા હતા. બિલ્લવર અને મીનવંર સાથે ઉ. ભારતના ભીલો અને મીનાનો સંબંધ છે. ભીલ સંસ્કૃતિ આજ બિલ્લવરોની સંસ્કૃતિ છે.

નિષાદ પ્રજાને વેદોના ભાષ્યકાર મહીધરાચાર્યએ વાજસનેયી સંહિતામાં ભીલોના પૂર્વજ ગણાવ્યા છે. યાસ્કના મહાન ગ્રંથ નિરુક્તમાં નિષાદને ભીલ ગણાવ્યા છે.

ભીલોની ઉત્પત્તિ : પૌરાણિક અનુશ્રુતિઓ અને લોક-કથાઓ :

નૃવંશ શાસ્ત્રીઓ અને ઐતિહાસિક પ્રમાણોને આધારે ભીલોને પ્રોટો ઓસ્ટ્રોલાઈડ જાતિના આદિમાનવોના વંશજ ગણવામાં આવે છે. કરોડો વર્ષ પૂર્વે ભારતમાં શિવ વાનર, અથવા રામપિથેક્સ અર્ધમાનવ પેદા થયો હતો. જે વિકસિત થતાં મેધાવી માનવ (હોમો સેપાઈન) તરીકે જોવા મળે છે.

ભીલોની ઉત્પત્તિ વિશે અનેક કથાઓ ઉપલબ્ધ છે, એમાંની કેટલીક જોઈએ :

(૧) ભીલોની ઉત્પત્તિ વીશે ભીલ સમાજમાં એક ઉક્તિ પ્રચલિત છે : 'ભીલ શિવ રો ડીલ' ભીલ તો

ભગવાન શીવનું શરીર છે. અર્થાત્ ભગવાને જ્યારે ધરતી પર માનવરૂપ પેદા કર્યું ત્યારે એ જ (ભીલ) રૂપમાં ધારણ કર્યું હતું. મહકવિ ભારવીના સંસ્કૃત ગ્રંથ 'किरातार्जुनीय'થી પણ પ્રમાણ મળે છે કે ભગવાન શિવ સ્વયં ભીલના રૂપે અવતરિત થયા હતા.

(૨) ભીલ જાતિની ઉત્પત્તિ વિશે અક દોહો છે :

गीरे मेरु हुं गिडो गुडक्यो, टुकडा होय्त तीन।
ऐक शिव, दूजी पार्वती, तीजो भोमधाणी भील॥

અર્થાત્ મેરૂ પર્વતમાંથી એક ભૂસ્ખલન થયું જેના ત્રણ ટૂકડા થયા; એમાંથી જ એક શિવ, બીજી પાર્વતી અને ત્રીજો તેમનો પાર્ષદ ભૂમિનો માલિક ભીલ ઉત્પન્ન થયો. ઋગ્વેદમાં પણ માનવ સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિ મેરૂ પર્વતથી બતાવાઈ છે.

(૩) ભીલ અનુશ્રુતિઓ અને સાધુઓની જ્ઞાન ચર્ચામાં સૃષ્ટિ નિર્માણ સાથે જ ભીલોની ઉત્પત્તિ બતાવી છે. તેમના અનુસાર જ્યારે જલ પ્રલય થયો તે સમયે અંતર્યામીએ સ્વયં સૃષ્ટિની કલ્પના કરી અને સ્વયં હૂંકાર કર્યો તો પ્રત્યુત્તરમાં ડાબી ભૂજામાંથી શક્તિ બોલી, ત્યારે અંતર્યામીએ એને કહ્યું : સાતમા પાતાળમાં એક પુરુષ છે. (आदिरिख) આદિરિખ, એને ગમે તે રીતે લાવો. એ જ શક્તિએ આદિપુરુષને ઉપર લાવવાનું કાર્ય કર્યું. આદિરિખ પોતાના બન્ને હાથોની મુઠ્ઠીમાં ભભૂતિ લઈને ઉપર આવ્યો. તેણે પાણી પર હાથ રાખી બન્ને મુઠ્ઠીઓમાં ફૂંક મારી, ચારે તરફ ભભૂતિ ફેલાઈ ગઈ, પાણીમાં હલચલ મચી અને પૃથ્વીની સપાટી ઉપર આવી. આ રીતે આદિરિખ શિવ ભગવાને ધરતી સ્થાપિત કરી. ત્યાર પછી તરત જ મેઘઋષિ જળવર્ષા થઈ. માતારિખ માતૃયોનિ પેદા થઈ. અર્થાત્ માનવીય મૈથુની સૃષ્ટિ ઉત્પન્ન થઈ. સૃષ્ટિનો પ્રસાર થયો. ભીલો, એ જ આદિરિખનાં સંતાનો છે.

એક વાણીમાં ગવાયું છે. (કહેવાયું છે) કે,

सन्न में अन्तरजोमी सोच कियो
सुर नर देव सफल नहीं दाणु
हर कहे हर आप हुता एक,
हार्थोरी हथेली देवी वचन पालिया
ए तीनों ही नर पैदास किया,
आदिरिष, मेघरिष, मातरिष।

(૪) ભીલોમાં પ્રચલિત 'ભીલપુરાણ'માં પણ સૃષ્ટિની ઉત્પત્તિની એક કથા છે. ડૉ. ઠાકોરભાઈ નાયકે પોતાના પુસ્તક 'ભીલ એક અધ્યયન'માં તેની વિગતો આપી છે.એ કથા અનુસાર એકવાર એક ભીલ અને ભીલડી માછલી પકડતાં હતાં. એવામાં એક માછલીએ પાસે આવીને કહ્યું કે : જો તુ સાંભળે તો એક વાત કહું. માછલીને બોલતાં સાંભળી તે બન્ને ચકિત થયાં. માછલીએ જણાવ્યું કે થોડા સમય પછી સૃષ્ટિમાં પ્રલય થવાનો છે તેથી તમે એક નાવ બનાવી તેમાં બેસી સુરક્ષિત સ્થાન તરફ પ્રયાણ કરી જાઓ. માછલીની વાત સાંભળી ભીલ અને ભીલડીએ તેમ જ કર્યું. જ્યારે પ્રલય શાંત થયો ત્યારે ભગવાને પ્રલયથી વિનષ્ટ થયેલી સૃષ્ટિ પર વિચરણ કરતાં એ બન્નેને જોયાં. ભગવાન અતિપ્રસન્ન થયા. ભગવાને એ આદિમાનવ યુગલને માનવ સૃષ્ટિ રચનાનું વરદાન આપ્યું : એ જ અનાદિ યુગલના અનેક પુત્ર, પુત્રીઓ ઉત્પન્ન થયા અને સૃષ્ટિનો પ્રસાર થયો.

(૫) ભારતમાં ભીલ વિસ્તારોમાં આવી પ્રલય અને ભીલ મનુ અર્થાત્ ભીલ આદમ અને ભીલ હવ્વાની કથાઓ પ્રચલિત છે. આવી જ કથા વિદ્વાન સી.એસ. વેંકટાચારે 'સૈન્સસ ઑફ ઈન્ડિયા ૧૯૩૧' વૉલ્યૂમ ૧, ભાગ બીજો પૃષ્ઠ બાવન પર આપી છે. જે ભીલોના આદિમ સમાજમાં પ્રચલિત હતી. સંભવ છે કે આદિવાસીઓની આજ કથાઓ આપણા સંસ્કૃત સાહિત્યમાં અને પુરાણોમાં આર્યીકરણ થઈને પ્રલય અને મનુની કથાના રૂપમાં રૂપાંતર પામી હોય.

(૬) ભીલ જાતિની ઉત્પત્તિ વિશે મહાભારતમાં એક પ્રસિદ્ધ કથા છે, જે રાજપુતાના ગેજેટિયર્સ

વૉલ્યૂમ-૨ (૧૯૮૦)માં દર્શાવી છે. તે અનુસાર સૃષ્ટિના આદિદેવ મહાદેવ એક દિવસ તાવથી પીડિત સંતાપની સ્થિતિમાં બેઠા હતા. એટલામાં એક અતિસુંદર વનવાસી ભીલ બાળા ત્યાંથી પસાર થઈ. મહાદેવની નજર એ વનવાસી ભીલ બાળા પર પડી તો એક ઝલક માત્રથી મહાદેવની પીડા શાંત થઈ, મન સ્વસ્થ થયું. મહાદેવના મન પર એ વનવાસી બાળાનો ચમત્કારી પ્રભાવ પડ્યો. મહાદેવે એ વનવાસી બાળા પાસે પ્રણયની ઇચ્છા વ્યક્ત કરી. ઉત્તરમાં વનબાળા એ પોતાનું સમર્પણ કર્યું. આ પરિણામ વિવાહબંધનમાં બંધાયું. ત્યારબાદ એ આદિયુગલના સાત પુત્રો ઉત્પન્ન થયા. જેમાં સૌથી મોટો પુત્ર અત્યંત કાળો અને કુરૂપ હતો. તેણે તેના સ્વભાવથી મહાદેવને પણ નારાજ કરી દીધા. પરિણામ સ્વરૂપે તેને ઘરમાંથી કાઢી મૂકવામાં આવ્યો. એવું માનવામાં આવે છે કે ભીલ જાતિ તેની જ સંતાન છે. આ રીતે જોઈએ તો મહાદેવનો મોટો પુત્ર ભીલનો પૂર્વજ હતો.

આ રીતે ભીલ સમાજમાં આવી અનેક દંતકથાઓ સાંભળવા મળે છે. પુરાણો જેવા સંસ્કૃત સાહિત્યમાં પણ ભીલોની ઉત્પત્તિની કથાઓ આલેખાઈ છે. આ બધી જ અનુશ્રુતિઓ અને પૌરાણિક કથાઓ ભીલોને આદિમ માનવ હોવાનું પ્રમાણ આપે છે. તેમની ઉત્પત્તિ સૃષ્ટિના આરંભ સાથે, સૃષ્ટિના સર્જક સાથે દર્શાવે છે. અમરકંટકનાં જંગલોમાં રહેતા કોલ અને ભીલ પોતાની ઉત્પત્તિ શિવથી થઈ હોવાનું માને છે. શિવ સૃષ્ટિના આદિદેવ અને આદિ નિષાદવંશી (Austric) માનવોની આદિસંસ્કૃતિ સાથે સંબંધિત છે. ડૉ. ભાંડારકર વગેરે વિદ્વાનો શિવને ઓસ્ટ્રિક નિષાદ પ્રજાતિના દેવ માને છે.

આ બધી જ કથાઓ અને અનુશ્રુતિઓને આધારે ભીલો આ સૃષ્ટિના આદિમાનવ અને નિષાદવંશી હોવાનું સાબિત થાય છે.

પ્રાચીન ભારતના ભીલ રાજાઓ અને રાજ્યો :

ધરતી પર એવો કોઈ યુગ નથી જ્યારે ભીલ રાજા ન રહ્યો હોય. અતિપ્રાચીન સમયથી કલિયુગ સુધીના બધાજ યુગોમાં ભીલ રાજાઓનાં રાજ્યો અસ્તિત્વ ધરાવતાં હતાં. હિંદીમાં એવી કહેવત પ્રચલિત છે કે –

संसार में सबसे पहले साढ़े तीन राजा प्रसिद्ध है : पहला इंदराजा, दूसरा भील राजा, तीसरा राजा और आधे में वींद राजा ।

ભારત ભૂમિ પર આર્યોના આગમન પૂર્વે ભીલ જાતિનાં વિશાળ રાજ્યો હતાં. આર્યોએ સતત તેમની સાથે સંઘર્ષ કરવો પડ્યો હતો. ઋગ્વેદમાં ભીલ રાજા શમ્બર તથા રાજા વૃત્ર વગેરે રાજાઓનાં વિશાળ રાજ્યો અને તેમની હજારો પુરિઓ તથા ગઢોના નાશનું વર્ણન આવે છે. મહાબલિ વૃત્રની બહેન ભગવાન સૂર્યની પત્ની હતી. દૈત્ય રાજા હિરણ્યકશ્યપની પુત્રીનો વિવાહ મહર્ષિ ભૃગુ સાથે થયો હતો.

ભક્ત પ્રહ્લાદનો પુત્ર મહાબલિ વીરોચન અને વીરોચનનો પુત્ર મહાદાની દૈત્યરાજા બલિ થયો. દૈત્ય રાજા બલિનો પુત્ર બાણાસુર થયો. જે મહાકાલના નામથી ઓળખાતો હતો. ભીલ બલિના વંશજ જ છે.

ત્રેતા યુગમાં દંડકારણ્ય પાસે વૈજયન્તપુરનો રાજા તિમિરધ્વજ શબર હતો, જે મહાબલિ લંકાધિપતિ રાવણનો સાઢુ થતો હતો. રાવણની પત્ની મંદોદરીની બહેન માયાનો તે પતિ હતો.

ભગવાન રામના પિતા રાજા દશરથ અને રાજા દિવોદાસની ભીલ રાજા તિમિરધ્વજ સાથે લડાઈ થઈ હતી. આ યુદ્ધ વખતે રાણી કૈકેયી પણ દશરથની સાથે હતી અને તેણે રાજા દશરથની રક્ષા કરી હતી. બદલામાં રાજા દશરથે કૈકેયીને ત્રણ વરદાન માંગવા કહ્યું : કૈકેયીએ રામના રાજ્યાભિષેક સમયે વરદાન માંગ્યા અને રામને વનવાસ મોકલ્યા. આ યુદ્ધમાં

શબર રાજા તિમિરધ્વજ મૃત્યુ પામ્યા, તેની પત્ની માયાવતી શબ સાથે સતી થઈ.

લંકાધિપતિ રાવણના ભાઈ કુંભકરણનાં લગ્ન શબરાધિપતિ ભીલ રાજા મહાબલિ વિરોચનની દોહિત્રી વજ્જવાલા સાથે થયાં હતાં. રાવણની માતા પણ આજ કુલની, દૈત્ય રાજા મયની પુત્રી હતી.

ઇતિહાસ પ્રસિદ્ધ હનુમાન શ્રીપુરના રાજા હતા. વાલી સુગ્રીવ કિષ્કિંધાના રાજા હતા. તેમને વાનર કહેવામાં આવે છે. વાસ્તવમાં તે બધા જ આદિવાસી શબર નિષાદ પ્રજાતિના માનવો હતા. આજના ભીલોના પૂર્વજ હતા.

નિષાદ રાજા ગૂહ એક ભીલ હતા, તાડકા નિષાદી અર્થાત્ ભીલરાણી હતી અને રાજા સુન્દની પત્ની હતી. તાડકાનો પુત્ર મારીચ રાવણનો સેનાપતિ હતો.

પ્રસિદ્ધ વિદ્વાન આર.સી. જૈન પોતાના પુસ્તક 'એથ્નોલૉજી ઑફ ભારત'માં લખે છે કે ઋષભ અને નાભિ આદિ-નિષાદવંશ પ્રજાતિના છે. અને વૈવસ્વત મનુ પહેલાં થયા હતા. રાજસ્થાનના ભીલો ઋષભને પોતાના આદિદેવ અને પિતૃ માની કાલાજી બાપજી કહે છે અને તેની પૂજા કરે છે. ઉદયપુર સ્થિત જૈન તીર્થ ઋષભદેવના પૂજારી આજે પણ ભીલ છે. ઋષભ, નાભિ, ભરત વગેરેને ઇક્ષ્વાકુ વંશના પૂર્વજ કહેવામાં આવ્યા છે.

ત્રેતાયુગમાં અસુરો શક્તિશાળી હતા. બ્રાહ્મણ-ક્ષત્રિય સંઘર્ષ સમયે આદિવાસી શક્તિઓને પોતાના પક્ષમાં લેવાની શરૂઆત થઈ હતી. વળી અસુરો સામેની લડાઈ વખતે પણ આર્યોએ આદિવાસીઓને પોતાના પક્ષમાં લઈ પોતાની તાકાત વધારી હતી. ગંગા કિનારે ભીલ નિષાદોનાં રાજ્યો હતાં. નિષાદરાજ ગુહ ત્યાંનો રાજા હતો. ભગવાન રામે નિષાદરાજ ગુહને પોતાના પક્ષમાં લઈ પોતાની તાકાત વધારી હતી.

ભગવાન રામે આદિવાસીઓને સમાન અધિકાર આપ્યા, સ્નેહ અને સન્માન આપ્યું. ગૌડ, ભીલ અર્થાત્ વાનર, ઋક્ષ વગેરેને ગળે લગાવી રાક્ષસો સાથેના સંઘર્ષમાં તેમની સહાય લીધી હતી. આદિવાસીઓના સહકારથી રામે આર્યધર્મની રક્ષા કરી અને અવતાર તરીકે પૂજાયા. બ્રાહ્મણોએ પણ આદિવાસીઓને અપનાવ્યા, લોભ, લાલચ વગેરેમાં આવી આદિવાસીઓને ક્ષત્રિયત્વ પ્રદાન કર્યું. એટલું જ નહિ ભીલ, નિષાદ સાથે લગ્ન સંબંધ પણ બાધ્યા હતા.

ડૉ. રાંગેય રાઘવ લખે છે કે પ્રાગ્-વૈદિક સમય અને તેના પછી પણ એ જાતિનું ખૂબ જોર હતું ભારત ભૂમિ પર આ જાતિનાં અનેક રાજ્યો હતાં. આર્યોએ તેમની સાથે ભીષણ સંઘર્ષ કરવો પડ્યો હતો. તેમાંના ઘણાને આર્યોએ જીતી લીધા હતા. કેટલાકને પોતાનામાં સમાવી લીધા હતા. ડૉ. રામધારી સિંહ દિનકર પોતાના પુસ્તક ''સંસ્કૃતિ કે ચાર અધ્યાય''માં લખે છે થે સિંધુ નદી અને અર્બુદ પર્વતથી લઈ પ્રશાંત મહાસાગરના પૂર્વ દ્વિપસમૂહો સુધી જે પાકા કાળા રંગના માનવો જોવા મળે છે, તે બધા જ આદિ નિષાદવંશના સંતાનોના છે. એમના પૂર્વજ ક્યારેક ભારત ભૂમિના માલિક હતા.

સંદર્ભસૂચિ :

૧. देवीलाल, भारत के मूल आदिम मानव भील, फ्रकाशक : एकलव्य आदिवासी प्रकाशन, जोधपुर, २०००.

२. देवीलाल, भाल देश राज्य एवं ठिकाने, प्रकाशक : एकलव्य आदिवासी प्रकाशन, जोधपुर,१९९९.

૩. મલકાણ જ.મ., પરીખ સી.ડી., આદિવાસી ઉત્થાન, પડધમ અને પડઘા, પ્રકાશક : નવભારત સાહિત્ય મંદિર, અમદાવાદ, ૧૯૯૯.

૪. કર્નલ જે. ડબલ્યુ વોટ્સન, કાઠિયાવાડ, સર્વ સંગ્રહ, સંપા, પ્રા. પ્રદ્યુમ્ન ભ. ખાચર.

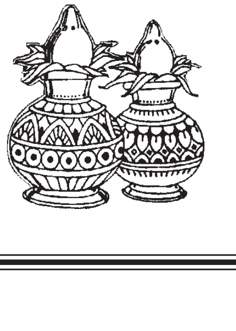

માનગઢ પૂર્વેનો પંચમહાલના ભીલોનો ઇતિહાસ

– પ્રા. શકુન્તલા એસ. બલાત

ગુજરાતમાં બ્રિટિશ શાસનની સ્થાપના પછી રચાયેલી એજન્સીઓમાં પંચમહાલનો સમાવેશ રેવાકાંઠા એજન્સીમાં થતો હતો. ભીલોની વસતીનો મોટો ભાગ અહીં વસતો હતો. પંચમહાલ પાંચ મહાલો, ગોધરા,કાલોલ, હાલોલ, દાહોદ અને ઝાલોદનો બનેલો હતો. તેમાં ઝાલોદ અને દાહોદ ભીલવસ્તી બાહુલ્યવાળા તાલુકાઓ હતા. જ્યાં અંદાજે ૮૦ ટકા જેટલી વસતી ભીલોની હતી. આજના પંચમહાલમાં આઝાદી પૂર્વે નાનાં મોટાં ૨૨ દેશી રજવાડાઓ હતાં. તેમાં સૂંથ (સંતરામપુર) અને દેવગઢ બારીયામાં પણ ભીલ વસતી હતી. ટૂંકમાં પંચમહાલ ભીલ મુલક તરીકે પ્રસિદ્ધ હતો.

ભીલપ્રજા ભારતની પ્રાચીનતમ પ્રજાઓ પૈકીની એક છે. ભીલોની ઉત્પત્તિની અનેક કથાઓ છે. એક લોકકથા મુજબ : "ભીલ જાતિની ઉત્પત્તિ મહાદેવમાંથી થઈ હતી. મહાદેવજી જંગલમાં ભીલકન્યા સાથે પ્રેમમાં પડ્યા ને તેનાથી તેમને ઘણી પ્રજા થઈ હતી. તેમના એક બેડોળ અને દુષ્ટ છોકરાએ મહાદેવના પ્યારા પોઠિયાને કાપી નાખ્યો, તેથી તે છોકરાને મંડળીમાંથી દૂર કર્યો હતો. આ છોકરાથી પોતાની ઉત્પત્તિ થઈ એમ ભીલો માને છે. વળી બહારવટું કરવું, ડકૈતી વગેરે લક્ષણો તેમને મહાદેવ પુત્રના વારસા તરીકે મળ્યાં હોવાની માન્યતા છે. વલ્લભના ગરબામાં ગુજરાતે હોંશેહોંશે ભીલોને ભોળા અને ભડ કહ્યા, ગાયા, વખાણ્યા છે. ભીલોનું ભોળપણ સૌથી પહેલાં ઊડીને આંખે વળગે તેવું છે. ભોળા શંકરની જેમ તેમને પણ ઉશ્કેરાઈ જતાં કે ખુશ થઈ જતાં વાર લાગતી નથી.

'ભીલ' શબ્દની શાસ્ત્રીય વ્યુત્પત્તિ જોઈએ તો 'ભીલ' શબ્દ દ્રવિડિયન ભાષાના 'બિલ્લુ' (Biller) પરથી ઉતરી આવ્યો છે. એનો અર્થ 'બાણ' અથવા 'તીર' થાય છે. ભીલો પ્રાચીનકાળથી જ પોતાની સાથે 'બાણ' રાખતા હોવાથી તેઓ ભીલ નામથી જાણીતા થયા હોવાની માન્યતા છે.

વેદ-પુરાણ અને પ્રાચીન સંસ્કૃત સાહિત્યમાં તેમની વૈવિધ્યસભર ભૂમિકાઓનાં દૃષ્ટાન્તો મળે છે. પંચમહાલની ભીલપ્રજા પણ પ્રાચીનકાળથી જ ઇતિહાસ પ્રસિદ્ધ રહી છે. મહાભારતમાં થયેલા ઉલ્લેખ મુજબ કુરુક્ષેત્રના યુદ્ધમાં પશ્ચિમ ભારતમાંથી બાણવિદ્યા કુશળ એવા આદિવાસીઓનો કાફલો ગયો હતો. 'નિષાદ'માં વર્ણવાયેલ ભીલો પંચમહાલના હતા. સોલંકી વંશની ગોધરા શાખાનો ઇતિહાસ (૧૯૧૮) નામના કવિ શંકરજી વિદ્યારાગ રચિત ગ્રંથમાં ઈ.સ.ની પહેલી સદીમાં ગોધરામાં ભીલરાજા અરજણનું શાસન હોવાનું જણાવવામાં આવ્યું છે.'પાવાના ધણીની વંશાવલી' નામના હસ્તલિખિત ગ્રંથમાં ઈ.સ. ૧૨૫૦માં ચાંપાનેર પાવાગઢમાં ચાંપા ભીલનું શાસન હોવાનું કદર્ઊંં છે. પ્રસ્તુત બાબતો ભીલોને રાજકર્તા પ્રજા તરીકે રજૂ કરે છે.

સોલંકીકાળમાં (ઈ.સ. ૮૪૨-૧૩૦૪) ગુજરાતના પરંપરાગત શત્રુ માળવા પર હૂમલો લઈ જવા માટે પંચમહાલમાંથી પસાર થવું અનિવાર્ય હતું. સિદ્ધરાજ જયસિંહે માલવા પર આક્રમણ કર્યું. (ઇ.સ. ૧૧૩૫-૩૬) ત્યારે તેણે પંચમહાલના ભીલોને તૈયાર કરવા ઘણી જહેમત ઉઠાવવી પડી હતી. શ્રી દુર્ગાશંકર શાસ્ત્રીના મતે સિદ્ધરાજે (ઈ.સ. ૧૦૯૪-૧૧૪૨) બર્બરક નામના ભીલ જાતિના સરદારને હરાવી 'બર્બરક-જિષ્ણુ' ઉપનામ ધારણ કર્યું હતું. તેમણે સિદ્ધરાજના લશ્કરમાં ભીલોની ભરતી થઈ હોવાનો મત પણ વ્યક્ત કર્યો છે. સમગ્ર પ્રસંગ ૧૧મી સદીમાં પૂર્વ ગુજરાતમાં ભીલોને શક્તિશાળી પરિબળ તરીકે રજૂ કરે છે. ભીમદેવ ૧લાના પુત્ર કર્ણે (ઈ.સ.

૧૦૬૪-૧૦૯૪) શક્તિશાળી ભીલ અને કોળી જેવી જાતિઓને તાબે કરવા ખૂબ ધ્યાન આપવું પડ્યું હતું. રજપૂત યુગમાં કેટલાક રાજાઓ દુશ્મનોને હંફાવવા ભીલ સરદારોની મદદ લેતા. આમ પ્રાચીનકાળમાં પંચમહાલમાં ભીલોની સ્થિતિ આવી રહી હતી.

મધ્યકાલમાં, મુસ્લિમ આક્રમણ પૂર્વે રાજસ્થાન, ગુજરાત અને ખાનદેશનો સમગ્ર પ્રદેશ ભીલો હસ્તક હતો. ચાંપાનેર ભીલ રાજ્ય હતું. આશાવલ (અમદાવાદ) ભીલ સત્તા હતું. ૧૪મી સદીમાં ભીલોને વેરવિખેર કરવામાં આવ્યા અને તેઓ આશ્રય મેળવવા માટે ગુજરાતની પૂર્વ પટ્ટીનાં જંગલોમાં વસ્યા. હૂમાયુના સમયથી મુઘલોના હૂમલાઓ ગુજરાત પર શરૂ થઈ ચૂક્યા હતા. તેમાં હૂમાયુ (૧૫૩૦-૪૦ અને ૧૫૪૫-૫૫)ની ગુજરાતના સુલતાન બહાદુરશાહ સાથેની લડાઈ ઘણી મહત્ત્વની હતી. તેની યુદ્ધભૂમિ ચાંપાનેર પાવાગઢનો આદિવાસી પ્રદેશ હતો. બહાદુરશાહનો પીછો કરી હૂમાયુએ ચાંપાનેર પર આક્રમણ કર્યું. ચાંપાનેર જીતવા ચાર માસ સુધી ઘેરો ઘાલવા છતાં કોઈ સફળતા હાંસલ થઈ ન હતી. એનું મહત્ત્વનું કારણ બહાદૂરશાહને મળેલું ભીલોનું મજબૂત પીઠબળ હતું. તેઓ ચાંપાનેરના કિલ્લામાં બહાદુરશાહના લશ્કરને ઘી અને જોઈતી બીજી વસ્તુઓ પૂરી પાડતા હતા. મુઘલકાળની સ્થાપના પહેલાં મુસ્લિમોના હાથે આદિવાસી બહુમતીવાળા વિસ્તારો આવ્યા હતા. ઈ.સ. ૧૨૫૫માં ભીલોડી ગામો પર કબજો કરી જાલમસિંહના કુંવર સંતે સુંથ (આજનું સંતરામપુર) નામનું રાજ્ય સ્થાપ્યું હતું.સ્થાનિક ભીલી ગીતમાં તેને લગતા અનેક ઉલ્લેખો મળે છે. ઈ.સ. ૧૩૦૦માં અલાઉદ્દીનના આક્રમણ પછી પૂર્વ ગુજરાતમાં નાસેલા રાજપૂત રાજાઓએ ચાંપાનેરનું ભીલ રાજ્ય ઝૂંટવી લીધું હતું. આમ ગુજરાત મુસ્લિમોના હાથમાં જતાં આદિવાસી રાજ્યો રાજપૂત શાસકોએ ઝૂંટવી લીધાં અને એક વખતની રાજકર્તા પ્રજા પરાધીન અને નિરાશ્રિત હાલતમાં સરી પડી.

મરાઠા શાસનના અંત અને બ્રિટિશ શાસનના પ્રારંભના સંધિકાળે ભીલોએ સ્થાપિત રાજ્યો સામે અનેકવાર બળવાખારી કરી હતી, કારણ કે, ગુજરાતની મેદાની પ્રજા કરતાં પણ તેમને સાંસ્થાનિક સત્તાનો વિરોધ કરવાનાં વધુ કારણ હતાં. મૂડીવાદી બ્રિટનના સકંજામાં આવ્યા પછી આદિવાસીઓની કુદરતી જીવન પદ્ધતિ સામે સવાલો ઊભા થયા હતા. બ્રિટિશ સત્તાની સ્થાનિક રજવાડાઓ સાથે મજબૂત યુતિ રચાતાં તેમની સમસ્યાઓ વિકરાળ બની હતી. ૧૮૫૭ પહેલાં જ આ મુદ્દે તેમનાં છમકલાંઓ ચાલુ થઈ ચૂક્યાં હતાં. ઉદાહરણ તરીકે ૧૮૫૪માં સુંથ રાજ્ય (સંતરામપુર)ના ઈશાન દિશાનાં સરહદી ગામડાનાં ભીલોએ ગડના ઠાકોર સામે તોફાન કરવા માંડ્યું. તેમના ઉપદ્રવ સામે રક્ષણ મેળવવા મહારાજા ભવાનસિંહે સરહદ પર ફતેગઢી નામનો કિલ્લો બાંધ્યો હતો જે 'ફતેહના કિલ્લા' તરીકે ઓળખતો હતો. છતાં ભીલો તાબે થયા ન હતા. પરિણામે અંગ્રેજ સત્તાએ આ સાઠમારીમાં માથું મારી તે તરફના ગામડાઓમાં થાણું ઊભું કરી થાણેદાર તથા સવારોનું રક્ષણ મૂકવું પડ્યું હતુ. છતાં ૨૦મા સૈકાના બીજા દાયકા સુધી ભીલો સુંથ રાજ્ય સાથે ટકરાતા રહ્યા હતા. તેની પરાકાષ્ઠા ૧૯૧૩માં માનગઢ આંદોલનમાં જણાઈ હતી.

ભીલોના ઈતિહાસનો ઘણો ઓછો ભાગ લિપિબદ્ધ થયો છે. છતાં તેમની મૌખિક પરંપરામાં આદિવાસી વીર નાયકો અને તેમનો ઈતિહાસ જીવંત રહ્યો છે. આવા વિરનાયકોમાં સીદડો ડામોર એ ભીલો ઈતિહાસનું ઉજળું પાત્ર છે. ભીલોડી મંડોળગીતોમાં સીદડા ડામોરની કથા આવે છે. સીદડો ડામોર બે સૈકાથી વધુ જૂનું પાત્ર લાગતું નથી. તેની કથા મુજબ

એક રાજપૂત સ્ત્રી ભીલોના સરદાર સીદડા ડામોર સાથે પ્રેમ-સંબંધ બાંધવા ઇચ્છતી હતી. પણ ચારિત્ર્યવાન સીદડા ડામોરે એવા અપવિત્ર સંબંધને ધુત્કાર્યો. રોષે ભરાયેલી સ્ત્રીએ માળવે જઈ જૂઠી ફરિયાદ કરી. ભીલોના મંડોળ ગીતોમાં તેમના પરાક્રમી પૂર્વજ સીદડા ભીલના અદ્‌ભુત પરાક્રમોની કથા આલેખખાયેલી છે. તેમાં સિનાળીયા વાણિયાનું સ્ત્રીવેશે ખૂન કરતા સીદડાનું વર્ણન છે. વરમા નામની સ્ત્રીએ પોતાની સાથે આડો સંબંધ ન રાખતાં, ધર્મની બહેન ગણી, તેથી તેને ફસાવવા રાજા ભોજની કચેરીમાં ખોટી ફરિયાદ કરી, ભીલ સરદાર તેમજ સાથીદારોને રાજ્ય તરફથી સખત સજારૂપે કિલ્લામાં જીવતા ચણી લીધા વગેરે વર્ણનો આવે છે. ધાર રાજ્યના કિલ્લામાં આઝાદી સુધી ભીલોને જવા દેવામાં આવતા ન હતા.આ ઇતિહાસ માત્ર ભીલોની મૌખિક પરંપરામાં જ જીવનો જીવતો રહ્યો છે.

૧૯૪૫ના સૈકામાં ગુજરાત બ્રિટિશ સત્તા હસ્તક આવ્યું. ૧૮૬૧માં પંચમહાલ પણ બ્રિટિશ અધિકારમાં આવ્યું હતું. અંગ્રેજો ઉપરાંત અહીં ૨૨ જેટલાં નાનાં-મોટાં રજવાડાં હતાં, જે બ્રિટીશ સતાનાં આશ્રિત હતાં. આ સમયે બળવાખોરીએ આદિવાસીઓની ઘણી ખરાબ હાલાત કરી હતી. જળ, જમીન અને જંગલ જેવી કુદરતી વસ્તુઓ માટે તેઓ સત્તાના આશ્રિત બન્યા. કુદરતી અધિકારો પ્રાપ્ત કરવાની ભીલોની લડાઈ દાયકાઓ સુધી ચાલી હતી. તેમાં મહત્ત્વપૂર્ણ મુકામ ૧૮૫૭નો સંગ્રામ હતો. એ ભારતના ઇતિહાસનું જ્વલંત પાનું છે. એ પૂર્વે ૧૮૫૩ સુધી પંચમહાલમાં સિંધિયાનું શાસન હતું. ભીલોની બળવાખોરીને લીધે ગ્વાલિયરથી પંચમહાલનું તંત્ર વ્યવસ્થિતપણે ચલાવી ન શકાતું હોવાથી ૧૮૫૩માં સિંધિયાએ આ પ્રદેશ અંગ્રેજો સાથે ફેરબદલ કર્યો હતો. નવી સાંસ્થાનિક વ્યવસ્થા લોકોને માફક આવી ન હતી. એવામાં ૧૮૫૭નો વિપ્લવ શરૂ થયો. દાહોદથી લઈ જાંબુઘોડા હાલોલ સુધીના આદિવાસીઓએ તેમાં ઝંપલાવ્યું, તાત્યા ટોપેને પંચમહાલમાં રક્ષણ પુરું પાડ્યું, આદિવાસીઓએ વિપ્લવી ગતિવિધિઓને ગુજરાતમાં ગતિ આપી. પંદર દિવસ સુધી પંચમહાલના આદિવાસીઓએ વહીવટી શૂન્યાવકાશની સ્થિતિ સર્જી હતી, ૧૮૫૭ના સંગ્રામનો પ્રભાવ પંચમહાલના આદિવાસીઓથી વધુ ગુજરાતની બીજી કોઈ પ્રજા પર ન હતો.

૧૮૫૭માં ભીલોની વિપ્લવી ગતિવિધિઓ બ્રિટિશ સત્તાધીશો માટે ગંભીર ચિંતાનું કારણ બન્યું હતું. ભીલોના બળવાને દાબવા માટે સંગ્રામ દરમિયાન જ ૧૮૫૮માં દાહોદ ખાતે ભીલ પલટનની સ્થાપના થઈ હતી, જેમાં સૂબેદાર, જમાદાર, હવાલદાર અને નાયક સહિત કુલ સંખ્યા ૯૩૧ હતી. દાહોદમાં તેનાં મેદાન, ક્વાટ્‌ર્સ વગેરે બન્યાં હતાં. જે આજે પણ અવશેષોરૂપે દાહોદમાં જોઈ શકાય છે. પંચમહાલ ભીલ પલટનને ૧૮૯૩માં વિખેરી નાખવામાં આવી હતી. ભીલ પલટનની રચના અને તેને લગતી માળખાકીય સુવિધાઓનું સર્જન વગેરે ૧૮૫૭ માં ભીલોના યોગદાનને સમજવવામાં મદદરૂપ થાય છે.

અંગ્રેજ સત્તાના પ્રારંભે અનેક આદિવાસી સરદારો તેમની સામે મેદાને પડ્યા હતા. દાંતાથી લઈ ડાંગ સુધીના આદિવાસીઓમાં તેને લગતાં અનેક ઉદાહરણો પ્રાપ્ત થાય છે. પંચમહાલમાં આવો એક સરદાર મંડળીયો કટારો હતો. તેની બહાદુરી, ખુમારી અને હિંમતને દાદ આપતું લોકગીત પણ છે જે મુજબ બ્રિટિશ શાસન પછી ભીલ સરદાર કાયદો-વ્યવસ્થાની સ્થિતિને શરણે થતો નથી કારણ કે નવું વહીવટીતંત્ર તેમના પરંપરાગત સ્વાતંત્ર્ય પ્રિય વાતાવરણથી તદ્દન વિરોધી હતું. મંગળીયાના ગુનાઓ અને મર્દાનગી-

ભરી રીતે ગુનાઓની કબૂલાત વગેરેમાં અસલનો રંગ અને આદિવાસી ખમીર દેખાય છે. મંગળીયા જેવા અનેક શહિદોની દાસ્તાન આદિવાસીઓના લોકસાહિત્યમાં છે. મંગળીયો ૧૯મા સૈકાના ઉત્તરાર્ધનું પાત્ર છે અને મહારાષ્ટ્રના ફડકે બંધુઓનો સમકાલીન છે. પણ તેના વિશેની કોઈ નોંધ પ્રચલિત ઇતિહાસમાં મળતી નથી. શું એનો વાંક એનું આદિવાસી હોવું એ છે ?

બ્રિટિશ સત્તા, દેશી રજવાડાઓ ઉપરાંત સ્થાનિક ભદ્રવર્ગનો ભીલો પ્રત્યેનો વ્યવહાર અપમાનજનક અમાનવીય ઢબનો હતો. ઉચ્ચવર્ણોનું તેમના પ્રત્યેનું સંબોધન અને વ્યવહાર અપમાનજનક તથા તિરસ્કારપૂર્ણ હતાં. સુધરેલા હિન્દુઓ તેમના હાથનું પાણી પીતા નહીં. ઠક્કરબાપાએ નોંધ્યું છે કે આજથી ૧૦૦ વર્ષ પહેલાં ભીલો શહેરમાં ભાગ્યે જ આવતા જતા હતા. તેઓ જેમ બને તેમ શહેરના લોકોથી દૂર જ રહેતા હતા. ગાંધીયુગના પ્રારંભ સુધી પંચમહાલી આદિવાસીઓ મુખ્ય ધારાથી ઘણે અંશે કપાયેલા રહ્યા હતા.

૧૮૭૧માં 'ક્રિમિનલ ટ્રાઈબ એક્ટ' અસ્તિત્વમાં આવ્યો. તેણે આદિવાસી જેવી અનેક જાતિઓનું જીવન કષ્ટમય બનાવ્યું હતું. કારણ કે આ કાયદામાં આદિવાસી માત્ર ને ગુનેગાર તરીકે જોવામાં આવતો હતો. પાંડુરંગ વણકરે નોંધ્યું છે કે બ્રિટિશ કાળમાં ગુનેગાર જાતિ ગણવામાં આવતી ત્યારે ભીલોનાં કેટલાંય ગામડાં સરકારી દફતરે 'ચોર ગામડાં' તરીકે નોંધાયેલાં રહેતાં. આસપાસના ઉજળિયાત વિભાગમાં ક્યાંય ચોરી કે લૂંટ થાય ત્યારે પાસેનાં આવાં ભીલ ગામડાં પર તવાઈ આવે,ફોજદાર અને પોલીસોનું ધાડું આવી પહોંચે ત્યારે ગામના મોટેરા ભીલો ચાર-પાંચ જુવાનીયાઓ સોંપી દે. અંદરોઅંદરની સમજૂતીથી ભીલો આવી વ્યવસ્થા કરતા. એ જુવાનોએ ચોરી કે લૂંટ કરી હોય કે નહિ એ પ્રશ્ન જ ઉઠતો નહીં. મારપીટ, જુલ્મ અને નાહકની હેરાનગતિમાંથી ઉગારવા માટેની આ ગોઠવણ હતી. કેવી કરૂણતા ભોગવી હશે આ ખમીરવંતી પ્રજાએ ? પોલિસોને સોંપાતા જુવાનિયાઓ પર કેસ ચાલતો અને તેમને કેદની સજા પણ મળતી. આનો કોઈને રંજ થતો નહીં. વળી, એવા જુવાનિયાઓના અશક્ત કુટુંબીઓની સંભાળ ગામ પોતાને માથે લેતું. એક વખતના ભૂમિપતિઓ અને રજવાડાના વારસો સમા એ ભીલોનું પરંપરાગત ખમીર આમ અનાયાસે, વિના સંકોચે ગુનેગારીના જીવન તરફ ફંટાયેલું રહે એમાં નવાઈ ન હતી. આમ પંચમહાલના ભીલોએ આદિકાળથી આજ સુધીના તેમના ઇતિહાસમાં અનેક લીલી સૂકી જોઈ છે. કાળના પ્રવાહમાં ઝીંક ઝીલી ઐતિહાસિક પ્રજા તરીકે પોતાનું અસ્તિત્વ જાળવી રાખ્યું છે.

સંદર્ભગ્રંથો :

- અરૂણ વાઘેલા – આઝાદીના જંગનો આદિવાસી રંગ પૃ. ૨૬-૩૧.
- ઉમાશંકર જોષી – પુરાણોમાં ગુજરાત, અમદાવાદ પૃ. ૫૫.
- કેકા. શાસ્ત્રી – પુરાણોમં ગુજરાતની આદિમ જાતિઓ પૃ. ૧૪.
- દુર્ગા શંકર શાસ્ત્રી – મધ્યકાલીન ગુજરાતનો રાજપૂત ઇતિહાસ ૧-૨, અમદાવાદ ૧૯૫૯ પૃ. ૨૯૬.
- ભીલોનાં ગીતો – પૃ. ૯.
- પાંડુરંગ વણકર – ગુજરાતના પંચમહાલ જિલ્લાના ભીલો, અમદાવાદ, ૧૯૪૩.

✲ ✲ ✲

હિંદુ કોડ બિલ એક સંઘર્ષ

—પ્રો. ભારતીબેન ડી. ધનુલા

સ્વતંત્રતા પ્રાપ્તિ પછી ભારતનું બંધારણ ઘડતી વખતે નીચલામાં નીચલા વર્ગના લોકોને પણ સમાનતાના અધિકારો પ્રાપ્ત થાય તે ધ્યાનમાં રાખવામાં આવ્યું છે. મુસ્લિમ, ઈસાઈ, પારસી વગેરે કોમના જે સામાજિક કાયદા હતા તેને જ બંધારણમાં કાયદા સ્વરૂપે સ્વીકારવામાં આવ્યા. હિંદુ સમાજ માટે પણ આ પ્રકારે એક કાયદો બનાવવાનો વિચાર કરવામાં આવ્યો. એક પછી એક વર્ગના લોકો માટેના કાયદા ઘડાતા ગયા ત્યારે સદીઓથી બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય, વૈશ્ય કે શુદ્ર અસ્પૃશ્ય કે આદિવાસી સમાજ વ્યવસ્થામાં સ્ત્રીઓનું સ્થાન હંમેશા નીચું જ રહ્યું છે. સદીઓથી દરેક વર્ણ જાતિની સ્ત્રીઓ અત્યાચાર અને શોષણનો ભોગ બનતી રહી છે. સ્ત્રીઓને ન હતો ભણવાનો અધિકાર ન સંપત્તિનો અધિકાર કે ન સ્વતંત્રતાનો અધિકાર. આમ, સ્ત્રીઓ સમાજમાં હંમેશા ઉપેક્ષિત રહી હતી. આવી શોષિત-પીડિત સ્ત્રીઓને સમાનતાના અધિકારો આપવા એક બિલ બનાવવામાં આવ્યું જેને હિંદુ કોડ બિલ નામ આપવામાં આવ્યું હતું.

ડૉ. ભીમરાવ આંબેડકર એ સમયે કાયદા પ્રધાન હતા. તેઓ આ હિંદુ કોડ બિલ દ્વારા ભારતની સમસ્ત નારીજાતિનું કલ્યાણ કરવા ઈચ્છુક હતા. તે સમયના વડાપ્રધાન પંડિત જવાહરલાલ નહેરુ પણ હિન્દુ કોડ બિલના સમર્થનમાં હતા, પણ કેટલાક રૂઢિચુસ્ત લોકો એક અછૂત કાયદામંત્રી દ્વારા તેમના ધર્મમાં દખલ કરતા લાગ્યા. તેઓ આ સહન કરી શકે એમ ન હતા. વળી, આ ધર્મના કહેવાતા વડાઓ અંગ્રેજોની ગુલામીમાંથી મુક્તિ ઈચ્છતા હતા, પરંતુ ધર્મ આધારિત વર્ણવ્યવસ્થામાં તેમની સર્વોપરિતા જતી કરવા માંગતા નહોતા, સાથે સાથે સ્ત્રીઓને પુરુષોની સમાન અધિકારો મળે તે બાબતથી પણ તેઓ વિચલિત હતા. જેથી આખા દેશમાં આ બિલના ઘેરા પ્રત્યાઘાત પડવા લાગ્યા હતા. ડૉ. ભીમરાવ આંબેડકર અને પંડિત જવાહરલાલ નહેરુનો સખત વિરોધ થવા લાગ્યો. હિન્દુ કોડ બિલ વિશે અનેક ભ્રમણાઓ ફેલાવવામાં આવી જેને દૂર કરવા માટે હિંદુ કોડ બિલનો હિંદી અને ઉર્દૂ ભાષામાં અનુવાદ કરીને અનેક કોપીઓ મફતમાં વહેંચવામાં આવી. છતાં પણ વિરોધને રોકી શકાયો નહિ. સામાન્ય જનતાની સાથે પક્ષના જ કેટલાક લોકો પણ આ બિલનો વિરોધ કરતા હતા, જેથી પક્ષ બે ભાગમાં વહેંચાઈ ગયો હતો. તેવા સમયમાં સંસદમાં બિલ પસાર કરવું મુશ્કેલ હતું. સ્વતંત્ર ભારતની પ્રથમ ચૂંટણીઓ પણ નજીક આવી રહી હતી એટલે પંડિત જવાહરલાલ નેહરુ કોઈની નારાજગી વહોરીને ચૂંટણીમાં કોઈ જોખમ લેવા ઈચ્છતા ન હતા, તેથી તેમણે આ બિલને સંયુક્ત ન મૂકતાં ચાર ટુકડાઓમાં વિભાજિત કરીને ચૂંટણી પછી નવેસરથી ચર્ચા કરવામાં આવશે એવી જાહેરાત કરી.

ડૉ. બાબાસાહેબ આંબેડકર આ ઘટનાથી ખૂબ જ દુઃખી થયા. તેમને સ્ત્રીઓના ઉત્કર્ષનો રસ્તો બંધ થતો હોય એમ લાગ્યું. પંડિત જવાહરલાલ નહેરુએ બિલને પડતું મૂક્યાની જાહેરાતથી દુઃખી થયેલા ડૉ. આંબેડકરે બીજા જ દિવસે મંત્રી મંડળમાંથી રાજીનામું આપી દીધું. તેનો કોઈપણ પ્રકારની ચર્ચા વિના સ્વીકાર કરી લેવામાં આવ્યો.

ઈ.સ. ૧૯૫૧માં સ્વતંત્ર ભારતની પ્રથમ ચૂંટણીઓ યોજાઈ. જેમાં કોંગ્રેસ પક્ષનો વિજય થયો. બહુમતી સાથે પંડિત જવાહરલાલ નહેરુ ભારતના પ્રધાનમંત્રી બન્યા. મંત્રી મંડળમાં કાયદા પ્રધાન તરીકે પારસ્કર કે જેઓ બ્રાહ્મણ હતા. તેમની વરણી કરવામાં આવી. પારસ્કર ડૉ. આંબેડકરના પ્રશંસક હતા, હિંદુ કોડ બિલની દરેક કલમ વિશે તેમણે ડૉ.

બાબાસાહેબ પાસેથી સમય મેળવી ચર્ચા કરી હતી, સાથે સાથે વિરોધીઓ દ્વારા કેવી કેવી દલીલો થઈ શકે તેની પણ યુક્તિઓ સમજી લીધી હતી. ઇ.સ. ૧૯૫૨ થી ઇ.સ. ૧૯૫૬ દરમ્યાન હિંદુ કોડ બિલને ચાર ખંડોમાં પસાર કરવામાંઆવ્યું. આ વખતે બિલનો પહેલાં જેટલો વિરોધ ન થયો. કદાચ આ બિલ પસાર કરનાર કાયદાપ્રધાન એક બ્રાહ્મણ હતા એટલે –

હિંદુ કોડ બિલથી મહિલાઆને શું મળ્યું ? તો દરેક ક્ષેત્રે પુરુષ સમાન અધિકારો, જેમ કે, વિવાહ માટે છોકરીઓની ઉંમર ૧૮ વર્ષ અને છોકરાઓ માટે ૨૧ વર્ષની નક્કી કરવામાં આવી.

– વંશાનુક્રમે ભાઈ-બહેન, કાકા-ભત્રીજા, ભાઈ કે બહેનનાં સંતાનો હોય તેમનો વિવાહ ગેરકાયદેસર ગણાય.
– પુરુષ એક સમયે એક જ પત્ની અને સ્ત્રી એક જ સમયે એક જ પતિ રાખી શકે. એક પતિ કે પત્ની હોવા છતા અન્ય સ્ત્રી કે પુરુષ સાથે લગ્ન કરી શકે નહિ. આવાં લગ્ન ગેરકાનૂની અને દંડને પાત્ર ગણાય.
– હિંદુ કોડ બિલ પહેલાં છૂટા-છેડા માટે પુરુષો જ હકદાર હતા, જ્યારે સ્ત્રીઓ હંમેશા પીડિતની જ ભૂમિકામાં રહેતી. બિલ દ્વારા સ્ત્રીઓને પણ છૂટાછેડાનો અધિકાર પ્રાપ્ત થયો.
– પતિના મૃત્યુ પછી સંતાનોની જેમ જ મિલકતમાં હિસ્સો મળે. પિતાના મૃત્યુ પછી પુત્રીને પણ ભાઈની સમાન જ મિલકતમાં હિસ્સો મળશે.
– વૃદ્ધ માતા-પિતાના પાલન-પોષણ અને ભરણ-પોષણની જવાબદારી સંતાનોને સોંપવામાં આવી.
– નિસંતાન દંપતિને બાળક દત્તક લેવાનો અધિકાર પ્રાપ્ત થયો. બાળકને દત્તક લેતાં પહેલા બાળક હિન્દુ છે કે નહિ તેની ખાતરી કરવી, પહેલાં બીજા કોઈ દ્વારા દત્તક લેવામાં આવેલ નથી તેની ખાતરી કરવી, ૧૫ વર્ષથી ઓછી ઉંમરના બાળકને દત્તક લઈ શકાય.
– પહેલાના સમયમાં પોતાના જ કુલમાં જન્મેલ બાળકોને દત્તક લઈ શકાતું, પરંતુ હિંદું કોડ બિલ મુજબ હિંદુની કોઈપણ જાતિમાં જન્મેલ બાળકને દત્તક લઈ શકાય, દત્તક લીધા પછી એ બાળક આપોઆપ દત્તક લેનારની સંપત્તિનું માલિક બની જાય છે.
– આ બિલ પસાર થયા પહેલાં સામાજિક રીતિ-રિવાજો મુજબ સ્ત્રી વિધવા થયા પછી તેને આજીવન વિધવાના રૂપમાં જીવન પસાર કરવું પડતુ હતું. સતીપ્રથા જેવા કુરિવાજ પણ મહદઅંશે પ્રચલિત હતા. ડૉ. આંબેડકરે રાજા રામમોહનરાય અને ઈશ્વરચંદ્ર વિદ્યાસાગરની જેમ સતીપ્રથા અને વિધવા પુનઃલગ્નના અધિકારને કાયદાકીય સ્વરૂપ આપી દીધું.

આમ, હિંદુ કોડ બિલ અનેક સંઘર્ષો પછી પસાર થયું અને આ બિલથી ભારતની મહિલાઓના જીવનમાં આમૂલ પરિવર્તન આવ્યું. આજના સમયમાં સ્ત્રીઓએ દરેક ક્ષેત્રે હરણફાળ ભરી છે અને પોતાનું આગવું સ્થાન બનાવ્યું છે. આજે સ્ત્રીને પણ પુરુષ સમાન જ વિચાર-સ્વાતંત્ર્ય અને વાણી સ્વાતંત્ર્ય પ્રાપ્ત થયું છે એ ડૉ. ભીમરાવ આંબેડકરની સ્ત્રીઓને પણ સમાન ધારામાં ભેળવવાની જે દીર્ઘદૃષ્ટિ હતી તેને આભારી છે, ટૂંકમાં 'હિંદુ કોડ બિલ'ને આભારી છે.

સ્માર્ટફોનની બાળકોના વિકાસ ઉપર થતી અસર

– પ્રા. ડૉ. હિતેશ આર. વાઢિયા

1. પ્રસ્તાવના :

આજે આપણે ટૅકનોલૉજીના યુગમાં જીવીએ છીએ. સ્માર્ટફોન એ આપણા જીવનનું અનિવાર્ય અંગ બની ગયું છે. બાળકોના વિકાસ પર તેની સારી માઠી અસરો જોવા મળે છે. આ અસરોની જાણકારી આપવાનો પ્રયત્ન આ લેખમાં કર્યો છે.

અતિ સર્વત્ર વર્જયતે. કોઈપણ વસ્તુનો અતિશય ઉપયોગ નુકશાનકારક નીવડે છે. આજના સમયમાં જો બાળક સ્માર્ટ ફોનનો યોગ્ય રીતે ઉપયોગ ન કરે તો તો તે ઝેર સમાન છે. સ્માર્ટફોન વગરની દુનિયાની કલ્પના કરવી મુશ્કેલ છે. સામાન્ય મજદૂર હોય કે મોટી કંપનીનો માલિક, સાધુ હોય કે સંપત્તિવાન, આદિવાસી હોય કે અમેરિકન, ગામડામાં રહેનાર હોય કે મેટ્રો સિટીમાં રહેનાર સ્ત્રી પુરુષ કે માસીબા દરેકને તેના વગર ચાલતું નથી. સાધનનો યોગ્ય ઉપયોગ કરવાનું બાળકોને શીખવાડવું ખૂબજ જરૂરી છે.

2. સ્માર્ટફોનની અસરો :

માનવ જીવન પર કોઈપણ બાબતની સારી અને નરસી એમ બે પ્રકારની અસરો જોવા મળે છે. સ્માર્ટફોનનો ઉપયોગ વધારે પડતો કરવામાં આવે તો તે બાળકના વિકાસ પર વિપરીત અસરો કરે છે.

(A) વિપરીત (નકારાત્મક) અસરો :

સ્માર્ટફોનનો ઉપયોગ કેટલા કલાક કરવો ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર સરળ નથી. બાળકોએ કેટલા કલાક તેનો ઉપયોગ કરવો તે માતા-પિતા નક્કી ન કરે તો લાંબા ગાળે તેના વિકાસ પર માઠી અસરો કરે છે. તેની કેવી અસરો થાય છે એટલે કે કેવી રીતે નુકશાનકારક છે તે જાણવા વિવિધ અભ્યાસો મનોવૈજ્ઞાનિકો કે અન્ય દ્વારા અવારનવાર થતા હોય છે તેને આધારે તેની નકારાત્મક અસરો નીચે પ્રમાણે છે.

- ⇨ સ્માર્ટફોન, ટેબ્લેટ સાથે વધુ સમયગાળતાં 10 માંથી 1 બાળક અનિદ્રાનો ભોગ બને છે. તેને લીધે તેમની ઊંઘની પેટર્ન ખોરવાઈ રહી છે.
- ⇨ વધારે પડતા ઉપયોગથી બાળકો 'સ્વની દુનિયા'માં ખોવાઈ જાય છે. તેને લીધે સામાજિક સંબધોનો યોગ્ય વિકાસ ન પણ થાય. અન્ય બાળકો સાથે કાલ્પનિક રીતે સંબંધ ધરાવતો થઈ જાય છે.
- ⇨ વધારે પડતો ઉપયોગ શારીરિક રીતે નુકશાન-કારક નીવડે છે. બાળકો બેઠાડું કે જાડિયાં બની જાય છે.
- ⇨ સતત ઉપયોગ બાળકોની વિચારવાની ક્ષમતા ને નુકશાન કરે છે.
- ⇨ પોતાની પાસે બીજાં કરતાં ઉતરતો સ્માર્ટફોન છે તેવી લાગણી તેમનામાં લઘુતા જન્માવે છે. તેની વિપરીત અસર વ્યક્તિત્વ વિકાસ પર થાય છે.
- ⇨ વધારે પડતો ઉપયોગ બાળકોને શારીરિક રીતે ઓછા મજબૂત બનાવે છે. તેમનામાં સ્ફૂર્તિનું પ્રમાણ ઓછું જોવા મળે છે. શારીરિક વિકાસ જો યોગ્ય ન હોય તો તેની અસરો માનસિક, આવેગિક અને સામાજીક વિકાસ પર વિપરીત પડે છે.
- ⇨ આવેગાત્મક ફીટનેસ પર પણ અતિશય ઉપયોગ નુકશાનકારક નીવડે છે. આવેગોનો અનુભવ અને અભિવ્યક્તિ યોગ્ય રીતે બાળકોમાં ન વિકસે તો તેની અસર તેના વિકાસ પર થતી હોય છે. નિષેધક આવેગોનું પ્રમાણ બાળકોમાં વધી જાય તો ગુસ્સાવાળા, જલ્દી નિરાશ થનાર, વાસ્ત-વિકતાનો સામનો કરવાની શક્તિ ઓછી ધરાવતાં થાય છે. આવાં બાળકોમાં હતાશા, મનોભાર, વિષાદ અને ચિંતાનું પ્રમાણ વધારે છે. આ બાબત તેમનામાં વિવિધ મનોરોગો જન્માવી શકે છે.
- ⇨ આત્મગૌરવ અને આત્મનિયમિતતાએ સોશિયલ મીડિયાના વધારે પડતા ઉપયોગ કરવાથી તેનું સંતુલન ખોરવાય છે.

⇨ આમ વિભિન્ન રીતે સ્માર્ટફોનનો ઉપયોગ કરવાથી બાળકો ઉપર શારીરિક, માનસિક અને સામાજિક રીતે અસર થાય છે. જે બાળકના વિકાસ ઉપર નકારાત્મક પ્રભાવ પાડે છે.

(B) સારી (હકારાત્મક) અસરો :

⇨ સ્માર્ટફોન યોગ્ય રીતે અને યોગ્ય પ્રમાણમાં ઉપયોગ કરવામાં આવે તો બાળવિકાસમાં તેનું પ્રદાન મહત્ત્વનું છે. વિવેકપૂર્વકનો ઉપયોગ ઘણી બધી રીતે ફાયદાકારક નીવડે છે. તેની કેટલીક સારી અસરો આ પ્રમાણે છે –

⇨ તેનામાં જિજ્ઞાસાવૃત્તિ જાગ્રત કરે છે. નવું નવું જણવાની અને જોવાની તક પ્રાપ્ત થાય છે.

⇨ બૌદ્ધિક વિકાસમાં પણ તે ઉપયોગી નીવડે છે. વિવિધ બાબતોની માહિતી તેનામાં રહેલી બુદ્ધિને વિકસાવવા મદદ કરે છે.

⇨ વિવિધ જાણકારી સરળતાથી મેળવી શકે છે. પરિણામે તેનું "માહિતીનું જગત" વ્યાપક બને છે.

⇨ સામાજિક સંપર્કો સ્થાપવામાં મદદરૂપ થાય છે. મિત્રો સાથે તેમજ અન્ય બાળકો સાથે સંપર્કમાં રહી શકે છે. તેનાથી તેની સામાજિક સ્વીકારની અને સાાજિક સંપર્કની પ્રેરણા સંતોષાય છે.

⇨ વિવિધ પ્રકારના કાર્યક્રમો જોવાને લીધે વિવિધ કૌશલ્યો વિકાસવાની ઇચ્છા જન્મે છે. દા.ત. ડાન્સ શો કે રમતોનું જીવંત પ્રસારણ જોવાથી ભવિષ્યમાં સંગીત, નૃત્ય કે રમતક્ષેત્રે કારકીર્દિ બનાવવાની પ્રેરણા મળે છે.

⇨ સર્જનશક્તિ વિકસાવવામા તે ઉપયોગી બને છે. ફોટોશોપમાં જ ચિત્રો દોરવાં, રંગ પૂરવો કે અન્ય રીતે આ એપનો ઉપયોગ કરી બાળકોમાં સર્જન શક્તિ વિકસાવી શકાય છે.

⇨ ઈ-બુક દ્વારા તેમની "વાચનની ભૂખ" સંતોષી શકાય છે. પુસ્તકો ઑનલાઈન વાંચવાનો લીધે તેનામાં વાંચનના વિવિધ ફાયદાઓ જોવા મળે છે.

આમ માતા-પિતા બાળકોને સ્માર્ટફોનનો વિવેક પૂર્વક ઉપયોગ કરતાં શીખવાડે તો તે રચનાત્મક અને સર્વાંગી વિકાસમાં ઉપયોગી નીવડે છે.

3. સ્માર્ટફોનના ઉપયોગ માટેનાં સૂચનો :

⇨ માતા-પિતા, શિક્ષકો કે અન્ય લોકો જેઓ બાળકો સાથે સંકળાયેલાં છે તેના ઉપયોગ માટે તેમણે અમુક કલાક જ તેનો ઉપયોગ કરવાની ટેવ પાડવી જોઈએ.

⇨ સ્માર્ટફોનની લત ન લાગે અને તેની આડ અસરો ન થાય તેનું ધ્યાન માતા-પિતાએ રાખવું જોઈએ. એટલે કે ક્યા પ્રકારનું 'વસ્તુ' જોઈએ છે. બાળક શું જુએ છે તેનું ધ્યાન રાખવું.

⇨ સતત બેઠાં બેઠાં સ્મર્ટફોનનો ઉપયોગ ન કરવાનું કહી વચ્ચે થોડોક બ્રેક કે આરામ આપો. આમ કરવું મગજ માટે જરૂરી છે તે તેને શીખવો.

⇨ "આટલા કલાક રમવાનું અને આટલા કલાક સ્માર્ટફોન વાપરવાનો" તેવો નિયમ બનાવો. તેનું પાલન તે કરે તેવી તકેદારી રાખો.

⇨ બાળકો સાથે સમય વીતાવો. તેની સાથે વાતો કરો, રમો કે ફરવા જાવ, વાસ્તવિક દુનિયાનો પરિચય કરાવો.

⇨ પરાણે બળજબરી દ્વારા નહિ, પણ પ્રેમથી અને સમજણથી તેના ઉપયોગના ફાયદા-ગેરફાયદા જણાવો. તેના વિધાયક ઉપયોગોની જાણકારી આપો, વધુ પડતો ઉપયોગ કેવી રીતે નુકશાન-કારક નીવડે છે તેની પણ ચર્ચા કરો.

4. સારાંશ :

જો માતા-પિતા દ્વારા બાળકોને સ્માર્ટફોનનો યોગ્ય ઉપયોગ કરવાનું શીખવાડવામાં આવે તો તેના દ્વારા બાળકનો શારીરિક, સામાજિક, આવેગીય, બૌદ્ધિક, જ્ઞાનાત્મક, નૈતિક તેમજ સાંસ્કૃતિક વિકાસ કરી શકાય છે. સજાગતા સ્માર્ટફોનના ઉપયોગમાં રાખવામાં

આવે તે જરૂરી છે અને જો બાળકોને સ્માર્ટફોનની લત લાગી જાય તો સલાહકાર પાસે જવાની પણ માતા-પિતાએ તૈયારી રાખવી જોઈએ. સલાહકાર મનોવૈજ્ઞાનિક પ્રયુક્તિ અને મનોપચાર દ્વારા બાળકોને તેની ખરાબ કે નિષેધક અસરોથી બચાવે છે. સ્માર્ટ-ફોનનો સમજણપૂર્વકનો ઉપયોગ બાળકોના વિકાસમાં જરૂરી છે, એ બાબત પણ આજના યુગમાં આપણે સહુ એ યાદ રાખવું જોઈએ.

સંદર્ભો :

1. અશ્વિન જણસારી. ડૉ. મુકેશ પ્રજાપતિ, 'બાળકોનું જગત' અક્ષર બુક એજન્સી, અમદાવાદ.
2. હેલ્પ અપડેટ, સંદેશ, અમદાવાદ ૨૩ ઑગસ્ટ ૨૦૨૦, પાનું ૧૬.
3. ભાસ્કર વિશેષ, દિવ્યભાસ્કર, અમદાવાદ, ૨૪ ઑગસ્ટ, ૨૦૨૦.
4. શાહ અરવિંદ અને જણસારી અશ્વિન (૨૦૧૩) બાળ વિકાસ, અમદાવાદ, પાર્શ્વ પ્રકાશન.

✦✦✦

ટાઈમ મેનેજમેન્ટ માટેની અસરકારક ૭ ટિપ્સ

(Time for effective time management)

૧. સ્પષ્ટ લક્ષાંક નિર્ધારિત કરવા :

વ્યક્તિએ તેનાં કામને સૂચિબદ્ધ કરવાં જોઈએ એટલે કે તેનું લિસ્ટ બનાવવું જોઈએ. આ લિસ્ટમાં જે કામ વ્યક્તિના લક્ષ સુધી લઈ જવામાં મદદરૂપ હોય તે જરૂરી છે અને અન્ય કામ ઓછાં જરૂરી છે.

૨. કરવાનાં કામોની યાદી બનાવવી :

ટૂ ડૂ લિસ્ટ, એટલે કે કરવાનાં કામોની યાદી એ વ્યક્તિની સૌથી સારી મિત્ર છે. આ ટૂલની મદદથી વ્યક્તિની ઉત્પાદન ક્ષમતામાં ૨૦ ટકા જેટલી વૃદ્ધિ થાય છે. આ ઉપરાંત યાદી બનાવવાના કારણે વ્યક્તિના વિચારને સ્પષ્ટતા મળે છે — જેથી કામ કરવા માટે પ્રોત્સાહન મળે છે અને ચિંતા ઓછી થાય છે.

આગળના દિવસે કરવાનાં ત્રણ મુખ્ય કામની નોંધ રાત્રે જ બનાવી જેથી તેને પ્રાધાન્ય આપી શકાય.

વ્યક્તિ આ યાદી કાગળ, કમ્પ્યુટર કે સ્માર્ટફોન પર બનાવી શકે. જરૂર પડે તો રિમાઈન્ડર સેટ કરી શકાય. કરવાના કામોની યાદીને જુદી જુદી કેટેગરીમાં પણ વહેંચી શકાય, જેમકે થઈ શકે તેવાં કામો અને સમય લાગે તેવાં કામો વગેરે. એક સમયે એક જ કામ કરવું.

૩. પોતાનું શિડ્યુલ બનાવવું :

દરેક વ્યક્તિની તાસીર અલગ અલગ હોય છે. તેના આધારિત આપનાં મુખ્ય ત્રણ કામો કરવા કયો સમય અનુકૂલ રહેશે તે જાણવું. બીજા શબ્દોમાં કોઈક રાત્રે વધુ સારું કામ કરી શકે અને કોઈ દિવસે.

૪. ખલેલ સ્વીકારો :

વ્યક્તિએ નિખાલસ રીતે ખલેલ પહોંચાડતી બાબતોનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ. ઈમેલ, સોશિયલ મીડિયા, મેસેજ ચેક કરવા જરૂરી છે પણ તેના માટે સમય નિશ્ચિત રાખવો. આ ઉપરાંત ઘણા સંજોગોમાં વ્યક્તિએ હાથ પરનું કામ મુલતવી રાખવું પડે તો તેનાથી વ્યાકુલ બનવું ન જોઆએ.

૫. ફ્લેક્સિબલ રહો :

વ્યક્તિએ પોતાની સાથે પ્રામાણિક અને ફ્લેક્સિ-બલ રહેવું ખુબ જરૂરી છે. ઘણી વખત વ્યક્તિ પોતાની જાત પાસેથી ખુબ મોટી અપેક્ષા રાખે છે જે યોગ્ય નથી. વ્યક્તિએ પોતાનો સમય આવે પૂછવું જરૂરી છે કે — "આ કામ હમણાંજ કરવું જરૂરી છે?" જરૂર પડે "ના" પાડતાં પણ વ્યક્તિએ શીખવું જોઈએ.

૬. ખુબ જરૂરી બાબતો ન હોય તો તેને બીજાને સોંપી શકાય, તે અંગે વાટાઘાટા કરી શકાય કે અન્ય રીતે પૂર્ણ કરી શકાય.

૭. વ્યક્તિ ૩૦ થી ૪૦ મિનિટના સ્લોટમાં કામ કરી શકે અને દર સ્લોટ બાદ ૫ કે ૧૦ મિનિટનો વિરામ લેવો જેથી યોગ્ય સમયસીમા દરમિયાન કામ પૂર્ણ કરી શકાય.

●

प्रेमचंद की कहानियों में दलित-विमर्श की प्रासंगिकता

– कोकिला खांट

'दलित विमर्श' को यदि पारिभाषित करना चाहे तो वह बृहत्तर अर्थों घर-परिवार, समाजनीति और राष्ट्रनीति में दलितों के अस्मिता के अधिकार और उन अधिकारों के लिए संघर्ष चेतना से जुड़े संवाद की संकल्पना है। यहाँ सामाजिक-धार्मिक, अंधरूढ़ियों में दबे-पिसे दलितों की आहें-कराहें ही नहीं, बल्कि शोषण व्यवस्था के विरूद्ध उसका आक्रोश विद्रोह भी है। साथ ही दलितों की गरिमापूर्ण सशक्त छवि गढ़ने की मुहिम भी है। दलित-विमर्श की शुरूआत वैसे तो प्राचीनकाल से है। लेकिन एक मुहिम अथवा चेतना के रूप में औपनिवेशिक भारत में आजादी की लड़ाई के दौरान हमारे सामने आता है। उस समय दलित सवर्ण-हदबंदियों की लक्ष्मण रेखायें लांघकर भीमराव अम्बेडकर जैसे महापुरुषों के साथ संघर्ष में शामिल हुए। यहाँ दलितों का संघर्ष अंग्रेजों के साथ नहीं बल्कि गुलाम भारत के सवर्णों से है, जो पशु पक्षियों से प्रेम करता है लेकिन अपने ही जैसे दलति भाईयों से जानवरों से भी बदतर व्यवहार करता है। इसी बदतर व्यवहार के विरोध में डॉ. भीमराव अम्बेडकर दलितों को हिन्दुओं (सवर्णों) से पृथक् करने की माँग अंग्रेजों से करते है। लेकिन महात्मा गांधी के साथ १९३२ में हुए 'पुना-पेक्ट' समझौते के कारण अपनी माँग अमल नहीं करते, क्योंकि इस समझौते में गांधीजी यह कहते हैं कि दलितों की स्थिति वास्तव में बहुत दयनीय है। मैं स्वतंत्रता आंदोलन के साथ-साथ दलितों के उद्धार हेतु भी कार्य करूँगा। हालाँकि बाद में सवर्ण कट्टरपंथियों के कारण वैसा कुछ नहीं कर पाते जिससे दलितों की स्थिति में सुधार होता। पर गांधीजी के विचार से कुछ बुद्धिजीवी लोग प्रभावित होते हैं। इन्हीं बुद्धिजीवियों में एक नाम उपन्यास सम्राट् प्रेमचंद भी है, जिन्होंने अपनी बाद की रचनाओं में दलित-विमर्श को जगह दी। इन रचनाओं में मंत्र मंदिर, सद्गति, 'ठाकुर का कुँआ', 'कफन' व 'दुध का दाम' (कहानी) उपन्यासों में कर्मभूमि गोदान का कुछ अंश हैं। वर्तमान में प्राय: सवर्ण रचनाकारों द्वारा प्रेमचंद के दलित-विमर्श प्रासंगिकता की बात करना चाहूँगी जो निम्नानुसार है। 'ठाकुर का कूँआ', 'कफन', 'मंत्रमंदिर' इन कहानियों में प्रेमचंद की प्रासांगिकता पर बात करना चाहूँगी।

कहानीकार प्रेमचंद और उपन्यासकार प्रेमचंद में यदि एक को हिन्दी साहित्य के इतिहास में जगह देनी हो तो शायद उपन्यासकार प्रेमचंद को ही चुना जायेगा, लेकिन कहानीकार के हैसियत से भी उन्हें नि:संकोच रूप से संसार के बड़े से बड़े कहानीकारों में गीना जायेगा। प्रेमचंद ने लगभग ३०० कहानियाँ लिखी है, जिनमें से कुछ अप्राप्त है। इनकी यह सारी कहानियाँ 'मानसरोवर' (आठ खण्ड) तथा गुप्त धन (दो खण्ड) में संग्रहित है। इन कहानियों में से लगभग पचास कहानियाँ ऐसी होगी जो हिन्दी साहित्य में अपना स्थान बना चुकी है।

प्रेमचंद कहानियों में कोई नियम-कायदे मानकर नहीं चले है। इसी सम्बन्ध में एक बार उन्होंने जैनेन्द्र जी से कहा था – "कहानी उदय की वस्तु है, नियम की वस्तु नहीं।" नियम है पर वे उपयोगी होने के लिए है। हृदय के दान में वे जब अनुपयोगी हो जाय तब बेशक उसे उल्लेखनीय मानना चाहिए।

अब मैं बात कर रही हूँ प्रेमचंद की कहानियों में दलित-विमर्श की तो सामाजिक भेदभाव, गैरबराबरी, दलितों के प्रति अमानवीय तथा घृणास्पद व्यवहार को प्रेमचंद ने अपनी कहानी 'मंदिर' के माध्यम से दिखाया है। कहानी में मुख्य पात्र 'सुखिया' निहायत गरीब व असहाय महिला है। परिवार में सिर्फ एक लड़का है, जो बीमार है। इस बुढ़िया सुखिया की विपति का बारा-पार न था। सालभर के अन्दर अपने दो बच्चों को गंगा की गोद में सोंप चुकी थी। पति पहले से परलोक सिधार चुके थे। अब इस अभागिनी विधवा का आधार यही

बालक था। अपने इस बीमार बच्चे के लिए वह सब कुछ करना चाहती है। बच्चे को बचाने के लिए वो ठाकुर की पूजा करना चाहती है।

बच्चे को बचाने के लिए वह पूजा का सामान इकट्ठा करती है। पर चढ़ावे के लिए कुछ पैसे तो चाहिए। दलित सुखिया के घर की स्थिति यह है कि ठाकुरजी को चढ़ाने के लिए एक आना भी नहीं है। वह अंत में अपने हाथ का कड़ा बेचकर पूजा का सामान तैयार करती है। बच्चे को लेकर ठाकुर जी के मंदिर की ओर चलती है, पर मंदिर के पुजारी उसको अंदर जाने से रोकते है। इसलिए की उसके जाने से ठाकुरजी भ्रष्ट हो जायेंगे। विडम्बना यह है कि मंदिर में जाने से रोकनेवाला पुजारी स्वयं ही भ्रष्ट है। यहाँ पर प्रेमचंद को भी लगता है, कि ईश्वर ने संसार के सभी प्राणियों को बनाया है तो कैसा उच-नीच और उसे छुने से वह अपवित्र क्यों होंगे ?

इस प्रकार 'मंदिर' कहानी में दलित विमर्श तो है पर इस कहानी के लिखे जाने तक सत्य को साफ तौर पर स्वीकार करते है कि सवर्ण जातियों की जीवन संस्कृति अछूतों की जीवन संस्कृति से अलग है। मंदिर प्रवेश के मुद्दे पर प्रेमचंद के नजरिये को देखा जा सकता है।

'ठाकुर का कुआँ' भी प्रेमचंद की दलित विमर्श से संबंधित एक कहानी है। यह उस दौर की कहानी है जब दलित सवर्णों के तालाब, कुँओं से पानी नहीं ले सकता था। दलितों के साथ ऐसा क्यों की वे अछूत थे। दलितों के छूने से पानी अपवित्र हो जाता था। दलितों के लिए सवर्णो के कुएँ, तालाब का पानी लेना निषेध था। पर प्रेमचंद यहाँ सामाजिक बदलाव के साथ-साथ अपने आप को बदलते हैं। इस कहीनी में प्रेमचंद का प्राथमिक स्थान मनुष्य के जन्मजात विशेषाधिकार के परे उसके गुण कर्म के महत्त्व का है। उनका मानना है कि समस्त मनुष्यों की पहचान तथा उसकी स्थिति निर्धारण उसके जाति-विशेष से नहीं वरन उसके निहित मानवीय गुणों और उसके कर्मो से होना चाहिए। 'ठाकुर का कुआँ' में इसी मानवीय गुणों की बात प्रेमचंद करते है। "जोखु कई दिनों से बिमार है। प्यास के मारे जान जा रही है, पर अपने कुएँ में किसी जानवर मर जाने के कारण पानी पीने लायक नहीं था। पति की हालत देखकर गंगी दूसरे कुएँ से पानी लाने को कहती है। जोखु को आश्चर्य होता है किस कुएँ से पानी लायेगी ठाकुर और साधु के दो कुएँ तो है, पर वे पानी भरने नहीं देंगे। इसलिए वह गंगी से कहना है – 'हाथ-पाँव तुड़वा आयेगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से हम तो मर भी जाते है, तो कोई दुआर पर ढाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। ऐसे लोग कुएँ से पानी भरने देंगे ?' "

जोखु के इन शब्दों में कड़वा सत्य है। एक ब्रह्मण या ठाकुर अपने कुएँ से दलितों को पानी कैसे लेने देंगे परम्परा टूट जायेगी। उनकी परम्परा में दलित से सवर्णों का कोई रिश्ता नहीं होता, मूलतः वह दलित होता है। उनकी निगाह में भंगी, चमार, पासी मनुष्य नहीं होता पर गंगी को क्या मालूम वह तो मानवता की बात करती है। गंगी का विद्रोही दिल इन रिवाजी पाबन्दियों और मजबूरियों पर चोट करने लगता है, "हम क्यों नीच और यह लोग क्यों ऊँच है, इसलिए कि ये लोग गले में धागा डाल लेते है ? यहाँ तो जितने हैं, एक से एक छँटे है, चोरी वे करे, जाल फरेब ये करें, झूठे मुकदमें ये करें। अभी इस ठाकुरन ने तो बेचारे गडरीये की एक भेड़ चुरा ली थी। और बाद में मारकर खा गये। इन्हीं पंडित जी के घर बारहों मास जूआ होता हैं। यही साहूजी तो घी में तेल मिलाकर बेचते हैं, किस बात में हमसे ऊँचे ?

दलित कितना ही अच्छा काम करें पर उसे हेय दृष्टि से देखा जायेगा, मगर सारे अनैतिक कार्य करके भी सवर्ण श्रेष्ठ रहेंगे। सवर्ण की इसी जातिश्रेष्ठता जैसे दम्भ के कारण गंगी उनके कुएँ से पानी नहीं भर पाती है और उसके पति जोखु को न चाहकर भी वही गंदा पानी पीना

पड़ता है । इस तरह प्रेमचंद की इस कहानी में दलित की अस्मिता को सवर्ण के आईने में दिखाया गया है । दलित इनकी सेवा करते हुए ही मर जाये, इसी में उनकी मुक्ति है और यही उनके तथकथित धर्म का विधान है।

अब मैं बात करना चाहूँगी दलित जीवन से सम्बन्धित 'कफन' कहानी की । प्रेमचंद ने इस कहानी को अपनी मृत्यु से पहले १९३६ ई. में लिखा था । इस कहानी में प्रेमचंद ने दलित के जीवन से सम्बन्धित एक पहलु को दिखाया है । उसका दूसरा पहलू है जो सवर्णों के कारण अन्धकारमय है । जिक्र ही नहीं किया गया है । इसलिए आज दलित साहित्यकार इस कहानी को दलित विमर्श की कहानी नहीं मानते । बहुत हद तक मैं भी इन दलित साहित्यकारों के विचारों से सहमत हूँ । ऐसा क्यों है ? इसको जानने से पहले 'कफन' की कहानी का घटनाक्रम बताना चाहूँगी । 'कफन' का आरंभ कुछ इस प्रकार है ।

झोंपड़ी के दरवाजे पर बाप और बेटा बुझे हुए अलाव के सामने चुप-चाप बैठे हुए हैं । अंदर जवान बेटे की पत्नी प्रसव वेदना से चिल्ला रही थी । रह-रहकर उसके मुँह से ऐसी दिल दहला देने वाली आवाज निकल रही थी, कि बाप-बेटा दोनों कलेजा थाम लेते थे । जाड़ों की रात है । सारा गाँव अंधकार में लय हो गया था । घीसू निःसंकोच भाव से कहता है कि 'बचेगी नहीं', तो माधव चीढ़कर उत्तर देता है 'जल्दी क्यों नहीं मर जाती ? देखकर भी मैं क्या कर लूँगा ।' घीसू और माधव आज उसी औरत के मरने के इंतजार में है जिस औरत ने उसके घर को एक व्यवस्था दी थी । पिसाई करके या घास छीलकर इन दोनों बेगैरतों का दोज़ख भरती थी । आज यही दोनों इस ताक में है कि यह कब मरे और आराम से सोए । आकाशवृत्ति पर जिंदा रहनेवाले बाप-बेटे के लिए भूने आलूओं किमत उस मरती हुई औरत से ज्यादा है । उनमें से कोई इस डर से बुधिया को देखने नहीं जाना चाहते कि उसके जाने पर दूसरा आदमी सारा आलू खा जाएगा । अतः बुधिया मर जाती है और मर जाने पर कफन का चंदा हाथ में आने पर उनकी नियत बदलने लगती है । यह सब क्यों हुआ इसके बारे में प्रेमचंद बताते है । इस तरह 'कफ़न' कहानी समाप्त हो जाने के बाद दलित विमर्श है कि नहीं इस बात को लेकर साहित्य जगत में चर्चा है । कफ़न कहानी दलित विमर्श की कहानी नहीं है । यह अलग बात है कि कहानी में दलित पात्र व जीवन से सम्बन्धित घटनाक्रम है । वास्तव में कफन एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की कहानी है जो श्रम के प्रति आदमी में हतोत्साह पैदा करती है जैसा की प्रेमचंद घीसु और माधव के काम के बारे में कहते है । 'घीसुं एक दिन काम करता है तो तीन दिन आराम करता है । माधव इतना कामचोर था कि आधा घंटा काम करता तो घंटेभर चीलम पीता इसलिए उन्हें कही मजदूरी नहीं मिलती थी।

यहाँ हमें ये नहीं मालूम की वे दोनों कामचोर क्यों थे । उस समय दलितों का कोई अस्तित्व नहीं था । सवर्ण लोग उन्हें जानवर से भी गया गुजरा समझते थे । सवर्णों के यहाँ रातदिन मजदूरी करते थे पर मजदूरी के नाम पर गाली और आधा पेटभर भोजन मिलता था । दलितों से जबरन बेगार लिया जाता था । अगर जी-तोड़ मेहनत करके भी भोजन नहीं मिलने वाला तो घीसु-माधव इनकी बेगार क्यों करेंगे ।

इस कहानी में दलित घीसू माधव को हृदयहीन व असंवेदनशील दिखाया गया है। हृदयहीन तो इतना कि बुधिया मर रही है और बाप-बेटे आलु खा रहे हैं । बुधिया की हृदय को दहला देनेवाली चीख सुनकर भी दोनों में से कोई घर के अंदर देखने नहीं जाता है । क्यों? प्रेमचंद इस संबंध में लिखते है कि "माधव को भय था कि वह कोठरी में गया तो घीसू आलूओं का बड़ा भाग साफ कर देगा ।" यहाँ पर ऐसा लगता है कि प्रेमचंद माधव के अंतरमन में क्या चल रहा है जानते थे । या वह स्वयं ही माधव थे । दलित या कोई भी इन्सान वह चाहे

कितना गरीब क्यों न हो, भूखा क्यों न हो, अपनी पत्नी के इस स्थिति में रहकर भूख की परवाह नहीं करेगा। इस स्थिति में भूख की मनोवृत्ति ठीक है, पर उसके लिए जिम्मेदार पूँजीपति और जमींदार है। इसलिए यह दलित की पीड़ा नहीं है बल्कि पूरे श्रमिक व मजदूरों की पीड़ा है।

यहाँ दलित की अपनी कोई निजी जिंदगी नहीं है। यह समस्या दलित की नहीं है पर गरीब मजदूरों की है। इसलिये यहाँ दलित विमर्श न होकर श्रमिकों व किसानों के शोषण का विमर्श है, संक्षेप में कह सकते है कि यह कहानी दलित विमर्श की कहानी न होकर एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की कहानी है जो श्रम या मजदूरी के प्रति आदमी में हतोत्साह पैदा करती है उसे श्रम की कोई सार्थकता नहीं दिखाई देती। अन्त में इतना लाचार हो जाता है कि उसे हर परिस्थिति में अपना पेट भरने की ही चिन्ता बनी रहती है। जैसा कि घीसू-माधव के साथ होता है। बुधिया के मरते वक्त भी दोनों पेट की ज्वाला शांत करने के लिए आलू खा रहे हैं। इस तरह प्रेमचंद की कहानीयों में दलित विमर्श की चर्चा की गई है।

निष्कर्ष रूप में प्रेमचंद की दलित जीवन या दलित जीवन से जुड़ी यह कहानियाँ भारतीय समाज व्यवस्था के विडम्बना पूर्ण स्वरूप को हमारे सामने लाती है, जहाँ मनुष्य एक जाति कुल में जन्म लेने से रौरव नरक जीने के लिए बाध्य हो जाता है। उसका गुण या कर्म कितना भी अच्छा क्यों न हो वह सामाजिक व्यवस्था का गहरा दंश भोगने के लिए अभिशप्त होता है। प्रेमचंद की यह दलित जीवन से संबंधित कहानियाँ इस तथ्य को स्थापित करती है।

ટાઈમ મેનેજમેન્ટ
(Time Management)

ટાઈમ મેનેજમેન્ટ દિવસના ૨૪ કલાકને અસર-કારક રીતે વાપરવાની કલા છે. પોતાના લક્ષને પામવા વ્યક્તિએ મહેનત સાથે સ્માર્ટ વર્ક કરવું, પોતાના આયોજન સાથે અનુશાસનથી જોડાયેલ રહેવું જરૂરી છે.

‘‘ટાઈમ મેનેજમેન્ટ’’ વ્યક્તિના સમયને મહત્તમ રીતે ઉપયોગમાં લઈને ઉત્પાદકતા વધારતાં વ્યક્તિના લક્ષને સાધવાની કલા છે.

દરેક વ્યક્તિને જીવનમાં દરરોજના ૨૪ કલાક મળે છે. આ સમયનો ઉપયોગ કરીને કેટલાક લોકો સફળતાની ટોચ પર પહોંચે છે, તો કેટલાક લોકો આ સમયને કેવી રીતે મેનેજ કરવો તે અંગે સંઘર્ષ કરે છે.

આપણે ઘણા લોકોને કહેતા સાંભળ્યા હશે કે અમને સમય નથી મળતો. ટાઈમ મેનેજમેન્ટને લગતાં ઘણાં પુસ્તકો વાંચી લીધા બાદ પણ તેઓ આ જ્ઞાનને અમલમાં મૂકી શકતા નથી.

આ વિષય પર ટિપ્પણી કરતાં પર્સનાલિટી ડેવલપમેન્ટ અને માઈન્ડ સેટ કન્સલન્ટ ક્ષમા ઉપાધ્યાય જણાવે છે કે, ‘‘આપણે આ મુદ્દે સ્ટ્રગલ અનુભવીએ છીએ, કારણ કે આપણે જે – તે મુદ્દે સંબંધ નથી જોડી શકતા અથવા આપણે પોતાનું મસ્તિષ્ક કેવી રીતે કામ કરે છે તે વિષે નથી જાણતા. ટાઈમ મેનેજમેન્ટ માટે સેલ્ફ અવેરનેસ જરૂરી છે. વ્યક્તિએ ધ્યાન કેન્દ્રિત કરવાની જરૂર છે.’’

ક્ષમા ઉપાધ્યાયે ટાઈમ મેનેજમેન્ટને કેટલીક શ્રેષ્ઠ અને સરળ વાતો જણાવી છે. વ્યક્તિ આ ટિપ્સનો ઉપયોગ કરીને પોતાના લક્ષ સુધી પહોંચી શકે અને સારો અનુભવ લઈ શકે માટે તેઓએ આ વિગત ખુબ સરળતાથી જણાવી છે.

– સંકલન : મહંમદ ઈશાક જી. પટેલ

●●●

गुजरात आदिवासी विकास परिषद संचालित शिक्षा संस्थाओं का संक्षिप्त रीपोर्ट

–डॉ. अभय परमार

स्वतंत्रता के बाद भारत के सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक रुपसे विपन्न आदिवासी समाज के सर्वांगी विकास हेतु सन १९७६ में आदिवासी विकास परिषद की स्थापना हुई। अनगिनत समस्याओं और कई अभावों के विपरित वर्तमान प्रवाहों से जुझते हुए परिषदने अपने सफर की शुरुआत छोटी–छोटी शिक्षा संस्थाओं की स्थापना से की। समग्र देशमां वटवृक्ष की तरह फैली विकास परिषदने अनगिनत शिक्षा संस्थाएं स्थापित की है और बेहद अच्छे तरीके से कार्यरत है। किन्तु यहाँ हम 'अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद' की एक प्रादेशिक प्रशाखा 'गुजरात आदिवासी विकास परिषद' की शैक्षिक प्रवृत्तिओं के सफर के बारे में संक्षेप में बात करेंगे।

गुजरात आदिवासी विकास परिषद, दाहोद द्वारा संचालित संस्थाओं में आंगनवाड़ी, बालवाड़ी, महिला स्वास्थ्य एवं आरोग्य केन्द्र, प्राथमिक स्कूल्स, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्कूल्स, बोर्डिंग स्कूल्स, छात्र एवं छात्राओं के लिए अद्यतन हॉस्टेल्स, आदि कुल मिलाकर ६७ से ज्यादा संस्थाएँ कार्यरत है। उक्त सभी शिक्षा संस्थाओं की शैक्षकि प्रवृत्तिओं के बारे में चर्चा करने से पूर्व न सिर्फ हमारे आदिवासी बहुल क्षेत्र की 'गोविन्द गुरु युनिवर्सिटी' बल्कि समग्र गुजरात में अपनी पहचान बनाने वाले आदिवासी आर्ट्स एन्ड कॉमर्स कॉलेज, संतरामपुर के सफर पर सरसरी नजर डालेंगे।

सन १९८० में हमारे आदरणीय सीमजीभाई डामोर और उनके गुरु सम्मानीय बी.एम. पीरजादा के करकमलों से स्थापित इस महाविद्यालयने ४० साल के सफर में अविरत रूप से सफलता के झंडे गाड़े है। इसका मूल कारण है हमारे सोमजीभाई की पारखी दृष्टि। महा विदद्यालय के प्राध्यापक की पसंदगी हेतु उनका मापदंड सिर्फ और सिर्फ प्रत्याशी की शैक्षिक योग्यता ही रहा है।

विश्वविद्यालयों में स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाले छात्र हमारे महाविद्यालय में नियुक्त किये जाते थे। जात–पात, प्रान्त, वर्ण, वर्ग और धर्म, लिंग जैसी क्षुल्लक सीमांओं से उपर उठे हुए हमारे संचालक ने समग्र भारत के अलग–अलग प्रान्त से बेहद तेज–तर्रार अध्यापकों को नियुक्तियाँ दी थी। एक समय तो ऐसा आया कि भारतवर्ष का एक भी राज्य ऐसा नहीं था जिस में से अध्यापक हमारे महाविद्यालय में पसंद न हुए हो। राष्ट्रीय एकता और शिक्षा में पारदर्शिता का उत्तम उदाहरण रहा है हमारा महाविद्यालय।

आदिवासी क्षेत्र के श्री गोविंद गुरु विश्वविद्यालय में मुख्य रुपमें सात विषय और कोमर्स विभाग के साथ छात्रों को सर्वाधिक विषय वैविध्य देने वाला हमारा एक मात्र महाविद्यालय है। चार दशक के लंबे सफर में महाविद्यालय के छात्रों, अध्यापकों और यहाँ के समाज ने भी बराबर की प्रगति की है। गुजरात के ऐसे अनगिनत महाविद्यालय है जिनमें हमारे छात्रों ने अध्यापक एवं अन्य विभिन्न पदों पर नियुक्तियाँ पाई है। आदिवासी क्षेत्र से आने वाले छात्र–छात्राएँ सभी प्रकार की विपरित परिस्थितिओं में संतुलन बनाए रखने में सक्षम होने के कारण शिक्षा संस्थाओं के अतिरिक्त पुलिसबल, सैनिक सेवाबल और फोरेस्ट जैसे विभागों के महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्यरत है।

महाविद्यालय का 'आदिवासी आर्ट्स एन्ड कॉमर्स कॉलेज' नामाभिधान अपने आप में सूचक है। इस नाम मात्र से हमारे संचालक की समाज के प्रति निष्ठा प्रतिबिम्बित होती है। साथ–ही साथ सदियों से सामाजिक, आर्थिक, राजकीय और शैक्षिक रुप से उपेक्षित हमारे समाज को यह नाम 'उर्जा' प्रदान करता है। इस महाविद्यालय में पढने के लिए आनेवाला छात्र आदिवासी, श्रमिक, मजदूर, दलित, मुस्लिम और अन्य गरीब समाज से आ रहा हो इसे अपनत्व का अनुभव होता है।

आर्थिक अभावों और विपरित सामाजिक परिस्थितियों से लगातार जुझते हमारे छात्र विश्वविद्यालय की पढ़ाई में तो स्वर्णपदक ले आते ही है किन्तु स्पोर्टस में भी हमारे छात्रों का दबदबा कायम है। नैसर्गिक रूप से आर्चरी हमारे छात्रों के DNA में है। हमारी छात्राएँ राष्ट्रीय स्तर पर भी आर्चरी में प्रतियोगिता में शिरकत कर चुकी है।

छात्रों के सर्वांगी विकास के लिए हमारे महाविद्यालय के अध्यापक भी दिन–रात एक कर रहे हैं। विश्वविद्यालय के युवा महोत्सवों में संतरामपुर कॉलेज ने अपना अलग ही मकाम बनाया है। हमारे विस्तार की सर्वाधिक लोकप्रिय नृत्युप्रणाली 'टीमली' और 'गफुली' के प्रदर्शन से करीब दस साल से हमारे छात्र प्रतियोगिता में प्रथम आ रहे हैं।

सन २०१९ के 'श्री गोविन्दगुरु विश्वविद्यालय गोधरा' के युवा महोत्सव में हमारा महाविद्यालय चैम्पियन रहा है।

हमारे महाविद्यालय की इन सिद्धियों को देखते हुए गुजरात सरकार ने SSIP के अंतर्गत हमें अनुदान भी दिया है । 'विलेज थियेटर और आयुर्वेदिक औषधि संवर्धन परियोजना' के अंतर्गत हमारे छात्र शोधकार्य भी कर रहे हैं। महाविद्यालय के अध्यापकों में से ज्यादातर अध्यापक Ph.D. की डिग्री प्राप्त कर चुके है, और अभी भी कुछ अध्यापको का Ph.D. के लिए शोधकार्य चल रहा है । यहाँ के अध्यापक अपने गहन अध्ययन और अध्यापन की विशेष पद्धति के कारण विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम प्रारुप निर्धारण समिति के सदस्य है । महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. अभय परमार की NAAC टीम के सदस्य के रुप में सरकार द्वारा नियुक्ति हुई है यह बड़ी उपलब्धी मानी जायेगी । समाज शास्त्र विभाग की अध्यापिका डॉ. कामिनी दशोरा को युवा समाजशास्त्री के रूपमें पुरस्कृत किया गया है, और श्री गोविन्दगुरु विश्वविद्यालय गोधरा द्वारा 'आंतर्राष्ट्रीय महिला सुरक्षा समिति की अध्यक्षा' के रुप में नियुक्ति हुई है। साथ ही डॉ.कामिनी दशोरा Ph.D. गाईड के रुप में भी कार्य कर रही है । मनोविज्ञान विभाग के अध्यापक डॉ. हितेश वाढिया Ph.D. गाईड होने के साथ-साथ एक युवा मनोवैज्ञानिक के रुप में महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं । डॉ. मालिनी गौत्तम अंग्रेजी विभाग की अध्यापिका होने का बावजूद भी हिन्दी की एक कवियत्री के रुप में सराहनीय कार्य कर रही है । महाविद्यालय के समुचित प्रयासों से हमें भारत सरकार के NAAC का B+ ग्रेड प्राप्त हुआ है।

परिषद का दूसरा महाविद्यालय 'आदिवासी आर्ट्स एन्ड कॉमर्स कॉलेज, भिलोडा' भी सबल नेतृत्व के चलते दिन-ब-दिन सिद्धि के शिखर सर कर रहा है । प्रि. डॉ. दिनेशचन्द्र संस्कृत के प्रखर विद्वान और एक समर्पित आचार्य है । अध्यापकों की कमी और सीमित आर्थिक संसाधनों के चलते भी महाविद्यालय ने सराहनीय कार्य किए हैं । आज भीलोड़ा आदिवासी बहुल क्षेत्र में ग्रामीण, आदिवासी, दलित और अन्य पिछड़े समाज के छात्र अपना कैरियर बना रहे हैं। भीलोड़ा महाविद्यालय की NCC की प्रवृत्तियाँ भी सराहनीय है। कोरोना जैसी विभिषिका में भिलोड़ा कॉलेज के छात्रों ने बहुत ही सराहनीय कार्य किया है । इसका श्रेय भीलोड़ा कॉलेज के समग्र परिवार को जाता है ।

उच्चशिक्षा संस्थानों में पढ लिखकर छात्र अपना भविष्य उज्जवल बना रहे हैं । किन्तु इन छात्रों को महाविद्यालयों तक पहुचाने में प्राथमिक स्कूल से लेकर उच्चतर माध्यमिक स्कूल के अध्यापक दिन-रात कड़ी महेनत कर रहे हैं । हमारे शिक्षा संस्थानों में आनेवाले छात्र ज्यादातर गरीब परिवार से होते हैं । उनमें सबसे पहले शिक्षा के प्रति जागरुकता पैदा करना शिक्षकों के लिए सबसे बड़ी चुनौती होती है । अभिभावक भी शिक्षा की शक्ति और दुरोगामी प्रभावसे अपरिचित होते है उनकी मानसिक स्थिति को भी बदलने का कार्य शिक्षकों को ही करना पड़ता है इसमें उन्हें ज्यादातर सफलता मिलती है ।

अखिल भारतीय आदिवासी विकास परिषद के राष्ट्रीय प्रमुख और हमारे पूर्व सांसद सोमजीभाई डामोर साहब के संस्था के विकास को लेकर चल रहे अविरत प्रयासों से गुजरात आदिवासी विकास परिषद संचालित सभी संस्थाएँ भलि-भाँति परिचित है। समय-समय पर छोटे-मोटे कार्यक्रमों द्वारा शैक्षिक संस्थाएँ साहब को सम्मानित करने का विनम्र प्रयास भी करती है । हालाँकि एक यह भी सच है कि सोमजीभाई को भड़किले और अधिक खर्चिले कार्यक्रमों से अरुचि है । फिर भी कुछ सालों पूर्व सोमजीभाई के अभिन्न मित्र और वरिष्ट गांधीवादी नेता, राज्यसभा के पूर्व सासंद राजूभाई परमार और सोमजीभाई का हमने संयुक्त रुप से सम्मान करते हुए सम्मानपत्र दिया था। दिनांक १६ फरवरी, सन २०२३ को 'राष्ट्रपुरुष सोमजीभाई डामोर - जीवनी एवं अन्य आलेख' शीर्षक अंतर्गत सोमजीभाई के जीवन-कवन को उनके करीबी रहे मित्रों द्वारा लिखे गए आलेखों के द्वारा किताब के रूपमें प्रकाशित किया गया । मध्यप्रदेश सरकार के तत्कालीन गृहमंत्री और प्रखर आदिवासी नेता बालाबच्चन की अध्यक्षता में हुए ईस समारोह में देश भर से गणमान्य नेता उपस्थित रहे थे जिनमें गुजरात राज्य कॉग्रेस के प्रदेश अध्यक्ष अमित चावड़ा भी उपस्थित रहे थे । कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि गुजरात आदिवासी विकास परिषद संचालित सभी शैक्षिक संस्थाएँ आर्थिक मर्यादाओं के बीच भी अपनी-अपनी तरफ से सराहनीय कार्य कर रही है। आने वाले समय में परिषद संचालित संस्थाओं का भविष्य उज्ज्वल हो और इनमें पढ़ाई करके अपना जीवन बनानेवाली नूतनपेढ़ी हमारे समाज के लिए सराहनीय कार्य करें इन शुभ कामनाओं के साथ अपनी बात को विराम देता हूँ।

धन्यवाद, जयहिन्द, जय आदिवासी । ●